

ठकुरानी

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-६

प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन, २०५ चावडी बाजार, दिल्ली-११०००६
सर्वाधिकार : सुरक्षित
संस्करण : १९७५
मूल्य : बीस रुपये
मुद्रक : आगरा फाइन आर्ट प्रेस, राजामण्डो, आगरा-२

THAKURANI novel by Yadvendra Sharma Chandra

Rs 20.00

८५

अपनी ममतामयी माँ
आशादेवी को
सादर
सानुराग
सप्रणाम
समर्पण

—‘चन्द्र’

में इतना ही कहूँगा—

- यह उपग्रास रक्षाधीनता के पूर्वकास की रियासतों के ठिकानों व राजाओं की गाथा है। राजमहसों व डेरों की कहानी है। जन-जागरण की सीधी-सादी कथा है। राजस्थान के जन-जीवन पर आधारित होने के कारण इसका मूल्योपेक्षा उस परिवेश में करना जरूरी है।
- विरजनों की राय की प्रतीक्षा रहेगी।

—यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

प्रथम खंड



काले-काले पापाण खण्डों से निर्मित 'हाथी महल' स्थापत्य कला का एक अद्वितीय नमूना था। पर्वत के एक भाग पर अनेक गुम्बदों से शोभित महल कोसों दूर से दिखाई देता था। महल तक पहुँचने के लिए पक्की सड़क थी, जो घुमावदार थी। रास्ते में कीकर, नीम, जामुन के वृक्षों की छाया में महल के नौकर-चाकर धककर विश्राम किया करते थे। रास्ते में हर मील पर पुलिस चौकी थी।

महल के मुख्य द्वार से लगभग पचास गज दूर सिपाहियों के रहने के लिए छोटी-छोटी कोठरियाँ बनी हुई थी। यही पर अलग तिजी विजलीघर था और यहीं से महल में पानी पहुँचाया जाता था। यहाँ से महल के तोरण-द्वार तक लाल पत्थरों की बनी सड़क थी। यह सड़क चिकनी और समतल थी। वहाँ पर अत्यन्त विश्वसनीय पहरेदार रहते थे।

तोरण-द्वार के किवाड़ मजबूत लोहे के बने हुए थे।

महल के भीतर अनेक कमरे थे। प्रत्येक कमरे का महत्व पृथक्-पृथक् था—शयन कक्ष, नृत्य गृह, विश्राम कक्ष, भोजन कक्ष, बैठक इत्यादि।

नृत्य गृह में अनेक झूले ढाले हुए थे। झूलों के चारों ओर फव्वारे लगे हुए थे। जब कामिनियाँ सोलह-शृंगार कर, शराब में उन्मत्त होकर नाचतीं, गातीं, झूलतीं—राजा अपने उच्चासन पर आसीन होकर मस्तिष्क लूटते और उन अप्सराओं को पारितोषिक बाँटते तथा जो उन सुन्दरियों को उनके हज़ूर में पेश करते थे, उन्हें जागीरें प्रदान किया करते थे।

शयन कक्ष में मसमली गद्दों व तकिये से युक्त तीन ढोलिए (पलंग) बिछे हुए थे। चारों ओर आदमकद शीशे लगे हुए थे। कुछ कामोत्तेजक सुन्दर चित्र थे।

उस दिन वसंत का उत्सव था।

महाराजाधिराज राजराजेश्वर श्री खेतसिंह ने अपने ठाकुरों, उमरावों,

जागीरदारों को आमन्त्रण दिया था। पटरानी के सिर में दर्द था, अतः वे नहीं पधार सकी। शेष दो परित्यक्त रानियाँ आने की चाह होते हुए भी नहीं आ सकी क्योंकि वे सब प्राचीन अवशेषों की भाँति महाराजा के देखने की वस्तुएँ मात्र बनकर रह गई थी। उनका अस्तित्व आजकल इतना ही था कि जब महाराज प्रसन्न होकर अपने काले होठों पर मुस्कान बिखेरें तो वे अपनी कोई इच्छा उनके समक्ष प्रस्तुत कर दें, वस।

श्वेतसिंह का कद छः फीट था। उनका वय ५०-५५ इञ्च था। बलिष्ठ बाँहें, रंग काला—एकदम कोयले की तरह। उस पर काली-काली कानों से लिपटी मूँछें। भारी-भरकम आवाज, बड़े-बड़े पाँव, उनमें सलमे-सितारों जड़ी पगरक्षी। गले में अमूल्य हार।

उनकी मुष्ठाकृति पर सदैव कठोरता झलकती थी। उनकी बड़ी-बड़ी आँखों में क्रूरता की गहरी चमक थी। इन दो बातों से उनका सभी सरदारों व जागीरदारों पर अत्यन्त आतंक था, हालाँकि वे हृदय के अत्यन्त कोमल थे।

साँझ हो रही थी।

पर्वतमालाओं के पीछे से अंधकार बढ़ रहा था।

हाथी महल में सरदारों की चहल-पहल बढ़ गई थी। महल के प्रथम आँगन में महाराजा की ओर से उनके अतिथियों की आवभगत की जा रही थी। द्वितीय आँगन में सिंहासन लग रहे थे। पदों के अनुसार छोटे-बड़े सिंहासन। आँगन के तीन तरफ पश्चिम दिशा की छोड़कर जालीदार झरोखे बने हुए थे। इन झरोखों में पटरानी अपनी सखी, सहेलियों एवं दासियों के साथ बिराजती थी।

अचानक जीप की आवाज सुनाई पड़ी। उस जीप में पुलिस थी।

सारे अतिथि सावधान होकर पंक्ति-बद्ध खड़े हो गये।

“महाराजा आ रहे हैं।” यह मौन वाक्य सभी के मस्तिष्कों में एक साथ दीड़ गया। एक आलीशान लाल रंग की कार से महाराज उतरे। सभी ने उनकी जय-जयकार की। सोंगो की आँखों में उत्साह चमक उठा। महाराजा ने हाथ जोड़कर उनकी जय-जयकार का उत्तर दिया।

महाराजा जब तक खड़े रहे तब तक सब खड़े रहे और जैसे ही वे बैठे बैठ गये।

अब महफिल जमी ।

अफीम, भाँग और शराब सभी सरदारों ने अपनी-अपनी रुचि के अनुसार ग्रहण की । उनके मस्तिष्क में उन्माद के हल्के-हल्के घादन छा गये और पातुरों को गाने की आज्ञा दी गई ।

शहर की अत्यन्त प्रसिद्ध तीन गायिकाएँ अस्तर जान, धूड़ी बाई और काशी बाई आई थीं । रूप और सौन्दर्य में काशी की सानी नहीं थी और शास्त्रीय संगीत व लोक-गीत गाने में धूड़ी बाई अपना विशिष्ट स्थान रखती थी । गजलें गाने में अस्तर सबको मोह लेती थी ।

महाराजा के संकेत पर अस्तर उठी । उसने मिर्जा गालिब की गजलें गाईं ।

आह को चाहिए इक उम्र अस्तर होने तक,
कोन जोता है तिरो जुल्फ के सर होने तक ।

.....

हमने माना कि तणाकुल न करोगे लेकिन,
खाक हो जायेंगे हम तुमको खबर होने तक ।

गजल के साथ-साथ काशी ने नृत्य किया । महफिल में रौनक आ गई । सरदार रुपयों की वर्षा करने लगे । 'वाह-वाह' और 'क्या खूब' की आवाजें उठने लगी । देर तक गजलें होती रहीं । इसके पश्चात् धूड़ी बाई ने अपने शहद से मीठे स्वर में गाना शुरू किया । उसने "मोरिया" और "ढोला" प्रसिद्ध राजस्थानी गीत गाये । अफीम और शराब के नशे में सरदारगण झूम रहे थे । ऐसा प्रतीत होता था कि संसार की समस्त खुशियाँ इसी आँगन में सिमट कर एकाग्रित हो गई हैं ।

अप्रत्याशित खुशियों में विघ्न पड़ा ।

महाराजा के प्राइवेट सेक्रेटरी श्री धूढसिंह उनके समीप आये । उन्होंने अदब से सिर नवाकर धीमे स्वर में कहा, "जान की माफी चाहता हूँ महाराज, अर्ज यह है कि अभी-अभी खबर मिली है कि गाँव साधूपुर में किसानों ने विद्रोह कर दिया है । लैफ्टीनेण्ट साहब आई० जी० फ्रैंक मोरिस साहब उन्हें रोकने में सर्वथा असमर्थ हो रहे हैं।"

महाराजा खड़े हो गये ।

उनके उठते ही महफिल में गहरी निस्तब्धता छा गई। सब सरदार उठ खड़े हुए। पातुर विस्मृत दृष्टि से उन्हें देखने लगीं। वाद्ययन्त्रों के वादकों की मुखाकृतियों पर आशंकाओं की रेखाएँ नाच उठी।

महाराजा सहज स्वर में बोले, “मैं अभी आता हूँ। आप महफिल जारी रखें। कोई विशेष बात नहीं है।”

खेतसिंहजी महफिल से बाहर आये। कार पर चढ़ साधूपुर की ओर रवाना हो-गये। साधूपुर हाथी महल से लगभग अस्सी मील पड़ता था। मोटर हवा से बातें करती हुई उधर भागने लगी।

“साधूपुर” प्रान्त का अच्छा-खासा ठिकाना था। दस लाख की सालाना आय थी। वहाँ का ठाकुर खीर्वांसिंह अत्यन्त अग्यायी और ऐग्याश था। नगर और अपने अधीन गाँवों से वह गरीबों की सुन्दर बेटियों को कुटनियों द्वारा फुसला-फुसला कर, धमका कर या उनकी गरीबी का अनुचित लाभ उठाकर अपनी ‘जनानी छ्थीड़ी’ में मँगवा लेता था और चन्द दिन तक उनकी जवानी का उपभोग करके नारकीय यंत्रणाएँ भोगने के लिये उन्हें बड़े-बड़े बुजों से घिरी अपनी जनानी छ्थीड़ी में बन्द कर देता था। आजकल उसकी छ्थीड़ी में दो सौ स्त्रियाँ थी। इसके साथ-साथ इधर निरन्तर दो वर्ष से सूखा पड़ रहा था। सारे किसान चाहते थे कि इस बार का लगान माफ कर दिया जाय, पर खीर्वांसिंह इसके लिये तैयार नहीं था। तब एक सम्भावना मण्डल महाराजा खेतसिंहजी से मिला था। उन्होंने किसानों की दुर्दशा देखकर सहायतार्थ कुछ धन-राशि प्रदान की तथा यह आश्वासन दिया कि किसानों को लगान के लिए कोई तंग नहीं करेगा। किन्तु आश्वासन महाराज तक ही रहा, खीर्वांसिंह की माँ मूरज व अन्य ठाकुरों ने इस आज्ञा का किंचित् भी पालन नहीं किया। उनके कारिन्दे किसानों पर पूर्ववत् जुल्म करते रहे और सब तरह की लाग-बाग मँगते रहे।

परसों की घटना है—

बध्मा घरती। मूखी और आहत।

दूर-दूर तक किसी वृक्ष का चिह्न तक नहीं। यत्र-तत्र जानवरों की हड्डियाँ व ढाँचे पड़े थे। हवा का हर झोंका अग्ने में मृत्यु की आशंका लेकर चल रहा

था। आग की तरह रेत दहक रही थी। प्रतीत होता था, प्रभु उन दरिद्र किसानों पर आफत का पहाड़ निरन्तर गिराता जायगा।

साधूपुर के गाँव जैतसर में मठपारी भजनानन्द का आगमन हुआ था। भजनानन्द साधू थे। गौरवर्ण और बलिष्ठ। जब चारों ओर दाने-दाने के लिये समस्त जन-मानस पीड़ित था, तब भजनानन्दजी दूध-घी की नदियों में स्नान करते थे और अपने चेलों की श्रीवृद्धि में संलग्न थे। आजकल ये गाँव-गाँव घूम कर पीड़ित और भूखे किसानों के नङ्गे-मुन्ने फूल से कोमल बच्चों को खरीद रहे थे।

जैतसर से उन्होंने तीन बच्चों को खरीदा। पच्चीस गाएँ उन्होंने आठ-आठ आने में खरीदी। और उसी रात उन गायों को अपने चेलों द्वारा समीप के नगरों में बेचने के लिये रवाना कर दिया।

चौदमी रात।

सारे किसानों के घरों व झोंपड़ों में घोर अंधकार।

“हरखू।” भजनानन्द ने उसे उसके घर के आगे पुकारा।

“हाँ महाराज!”

“गाँजा नहीं है?”

“नहीं है।” हरखू ने उत्तर दिया।

“गाँजे का प्रबन्ध करो।”

“महाराज घर में खाने तक को दाना नहीं है। गाएँ-मैंसें सबकी सब बेच चुका हूँ। घर में तीन दिन से बच्चे भूख से तड़प रहे हैं। जनानी सात-सात दिन से फाँके कर रही हैं। आप गाँजे.....

बीच में भजनानन्द ने अवरोध उत्पन्न किया। उनकी बड़ी-बड़ी दीप्त आँखों में परेशानी के भाव पैदा हुए। दीर्घ श्वास से बोले, “तभी कहता हूँ कि शिव की बात न मानो। यह शिव तुम सबको पय-भ्रष्ट कर रहा है। अकाल और रोग प्रभु के आधीन होते हैं। यह सब पृथ्वी के प्राणियों के पापों के फल हैं। मनुष्य अपने कर्म से सर्वथा विमुख होकर निजी स्वार्थ के पीछे अन्धा हो गया है। वह युगों से चले आ रहे नियमों एवं आदेशों को भंग करके गलत नियमों की सर्जना कर रहा है। तुम किसान हो, तुम्हारा धर्म खेती करना है। तुम्हारा कर्म हल के साथ-साथ ईश्वरीय रूप अपने ब्रह्मदाता की आज्ञा का

पालन करना है किन्तु अब तुम उस छोकरे के कहने पर इन्कलाव करना चाहते हो। ठाकुर का मिहासन बदलना चाहते हो ! क्यों ? केवल इसलिए कि वह छोकरा जिसमें किंचित् भी आत्मविश्वास नहीं है, जिसके हृदय में स्वार्थ का अंधेरा छाया हुआ है, जो तुम लोगों की जरा भी मदद नहीं कर सकता, वह तुम्हें दिलासा दे रहा है कि सब बदल जायगा !”

हरखू की विक्षुब्ध आत्मा मौन आर्तनाद कर उठी। वह हल्के स्वर में तीखी दृष्टि से स्वामीजी को देखकर बोला, “शिव कैसा भी हो, पर वह सत्य कहता है। उसकी बात में सच्चाई है। स्वामीजी, प्रभु कभी निर्दोषों को नहीं सताता। क्या ठाकुर सा चन्द दिनों के लिए अपना खर्चा कम नहीं कर सकते ?”

“तर्क कर रहे हो ? श्रद्धा की जगह हमसे तर्क करके तुम नरक और पाप के भागी बन रहे हो। हरखू ! यह मत भूलो कि हम जो कुछ भी कहते हैं, ईश्वर के आदेश से कहते हैं। मैं केवल तुम्हारे और उसके बीच में माध्यम हूँ।”

“महाराज, वर्षों से मैं आपकी आज्ञा का पालन करता आ रहा हूँ। पता नहीं मुझे आज ऐसा क्यों लग रहा है”—उसका स्वर भर आया, “कि मैंने ठीक नहीं किया। आदमी जितना सीधा होता है, उतना ही कष्ट पाता है।” उसने अपनी उँगली ऊँची करके पागल के प्रलाप की तरह कहा, “मैं आपकी कुछ भी सेवा नहीं कर सकता, आप यहाँ से इसी समय चले जाइए, मुझे न ईश्वर की जरूरत है और न आपकी। मुझे चाहिए केवल धान, केवल अन्न।”

भजनानन्दजी उसका प्रलाप सुन कर उत्तेजित हो गये। उनकी मुद्राकृति पर कठोरता झलक उठी। वे कर्कश स्वर में बोले, “तुम हमारा अपमान कर रहे हो, मैं तुम्हें भस्म कर दूँगा। नास्तिक हो रहे हो ! धर्म-कर्म छोड़ कर उस कल के छोकरे के पीछे हमारा अपमान कर रहे हो ! मैं तुम्हारा समाज से बहिष्कार करवा दूँगा।”

हरखू कुछ नहीं बोला। वह क्रोध में जड़वत् बना रहा। भजनानन्द जी चले गये।

उसके जाते ही हरखू के घर में सम्पूर्ण सप्रताटा छा गया। अंधेरे में उसकी बहू और उसकी बड़ी बेटो चमेली घूमनी नजर आ रही थी। बिचला बेटा कण-स्वर में बोला, “मुझे रोटी दो, मुझे रोटी दो ! माँ तू कहाँ है ? माँ !”

उसकी माँ विवशताजनित आन्तरिक भावनाओं में बह कर सिसक पड़ी।

हरखू का मन विकल हो उठा। उसने भाग कर अपने बेटे को गले से लगा लिया।

तभी उसके द्वार पर पूर्व-परिचित स्वर सुनाई पड़ा, “काका, ओ काका !”

“कौन शिव ?”

“हां काका !” शिव घर में धुसा। उसने हरखू से बाहर आने का अनुरोध किया। व्यथा भरे स्वर में बोला, “बड़ा गजब हो गया है, काका !”

“क्या हुआ ?” भय मिश्रित विस्मय था हरखू के स्वर में।

“मीखली ने आत्महत्या कर ली है।”

“क्या कह रहे हो ?”

“सच कह रहा हूँ काका !”

तभी चमेली उन्मत्त सी बाहर आई। क्षुब्ध स्वर में बोली, “यह क्या कह रहे हो शिव भैया ?”

“ठीक कह रहा हूँ बहिन !” उसने दृढ़ स्वर में कहा, “बिचारी छः रोज से भूखी थी। अन्न का एक दाना भी उसके मुँह में नहीं गया। थोड़ा-बहुत माँग कर संवय किया, इससे वह अपनी तीन साल की बच्ची को दो-तीन दिन तक पालती-पोपती रही। आज दोपहर से उसकी लडकी की दशा खराब होती गई। रोते-रोते वह अचानक चुप हो गई। उसका मौन न टूटने वाला मौन बन गया। फिर भी वह इधर-उधर भागी। उसने ब्रह्मजी से क्लिप्ता की। वह साहूकार के पास गई, पर कौन सुनता है गरीबों का रोना। इस संसार में अमीर की एक आह बहुत असर करती है किन्तु गरीब का क्रन्दन भी बेअसर होता है। अन्त में वह अपना धैर्य खो बैठी। आश्चर्य नहीं, वह अपने मस्तिष्क का सन्तुलन भी खो बैठी हो। मेरा विश्वास है कि उस पर विक्षिप्तता भी सवार हो गई थी। लगभग घण्टे भर पहले उसने पागल की तरह वकना ध्रुव कर दिया था। वह उन्मादग्रस्त प्राणी की तरह इधर-उधर भागती रही। कहती रही, ‘मैं मर जाऊँगी, मैं मर जाऊँगी।’ बच्ची को बन्दरिया की तरह उसने अपने सीने से चिपका रखा था। उत्तमचन्द का कहना है कि उसकी घेटी भूख से तड़प-तड़प कर भरी थी। किन्तु उसने उसे अपने से अलग नहीं किया। ममता भी बड़ी विचित्र है। आखिर वह अपनी बेटी को लेकर कुएँ में कूद गई। उसकी लाश को हम कई आदमियों ने मिलकर निकाला है।”

घरती फट पड़ी हो, इस तरह फफक कर रो पड़ी चमेली ।

रोते-रोते उसने कहा, "वह मेरे बचपन की भायली (सहेली) थी । हम दोनों साथ-साथ खेलीं, और बड़ी हुई । मुझे क्या पता था कि वह मुझे इस तरह छोड़कर चली जायेगी ।"

शिव ने सबको धैर्य दिया, "रोने से कुछ नहीं होगा । जीवन में आंसू ही ही हमारी समस्याओं का समाधान नहीं हैं । उसके लिए हमें कुछ करना होगा ।"

चमेली व्याभिभूत सी बोली, "शिव ! वह बड़ी भोली थी । उसके मुख पर अपूर्व ओज और चमक थी । उसने कभी किसी को नहीं सताया । पति के भाग जाने के बाद वह अपनी बच्ची को सीने से चिपकाये हुए खेतों में काम करती थी । उसकी मेहनत देखकर दांतों तले उंगली दबानी पड़ती है । वह अकेली कुए से पानी लाकर खेत सींचती थी । जानते हो तुम, उसके घर से कोई भी पाहुना भूखा नहीं जाता था ।"

शिव ने उसे ढाँढस बँधाया, "शान्ति रखो चमेली, जो कुछ हो गया है, उसके लिए चिन्ता करना व्यर्थ है । मैं ठाकुर की हवेली से इसलिए आया था कि यह भजनानन्द किसानों को हमारे आन्दोलन के खिलाफ भड़का रहा है । मुझे ऐसा गुस्सा आ रहा है कि इसका सिर ही फोड़ दूँ ।"

चमेली भड़क कर बोली, "तुम मुझे आज्ञा दो, मैं अभी उसका सिर फोड़ कर तुम्हें बतानी हूँ ।"

"नहीं, नहीं, केवल गाँव वालों को इससे सावधान करने की जरूरत है ।" शिव ने तनिक घबराहट से कहा ।

कुछ देर मौन छाया रहा ।

अन्त में हरख बोला, "तुम चिन्ता न करो, मैं इस भजनानन्द का माया बिलकुल ठीक कर दूँगा ।" वह क्षण भर घुप रह कर बोला, "चमेली, तू थोड़ी देर यहीं ठहर, मैं भीखली के दाह-संस्कार का प्रबन्ध करता हूँ ।"

शिव ने कहा, "शामिल मैं भी होना चाहता था, पर मुझे अभी-अभी ठाकुर की हवेली पहुँचना है । सुना है अब्रदाता आने वाले हैं ।"

X

X

X

ठाकुर के महल के आंगे किसानों को जल्पा दस दिन से बैठा था। तीनों किसानों ने भूख-हड़ताल कर रखी थी। उन्होंने प्रण कर लिया था कि जब तक ठाकुर का जुल्म खत्म नहीं होगा, तब तक हम अन्न का दाना मुंह में नहीं डालेंगे। ठाकुर खीबसिंह ने महाराजा की आज्ञा की अवज्ञा की थी, इसकी सूचना शिव ने महाराजा को पहुँचा दी थी। कल ठाकुर के कारिन्दों ने एक किसान मुरली को पकड़ कर इतनी बेरहमी से पीटा कि उसकी मौत हो गई। शिव व दूसरे किसानों ने जब इस जोर-जुल्म के विरुद्ध नारे लगाये और ठाकुर को न्याय कराने की चुनौती दी तब उनके सामने संगीनें तान दी गई। फल-स्वरूप निहत्थे किसान हिंसात्मक कार्यवाही करने को आतुर हो उठे। उन्होंने ठाकुर को मारने का आह्वान किया। किन्तु शिव ने उन्हें रोक दिया और तुरन्त दो आदमियों को महाराजा के हुकूम में भेजा। महाराजा तुरन्त रवाना हो गये। उसका एक कारण यह भी था कि यदि यह आग भड़क जाती तो केन्द्रीय शासन हस्तक्षेप करता और अंग्रेजों की नीति सदा ठिकानों को समाप्त करने की रही थी।

शिव लौट आया था। वह उत्तेजित किसानों को शान्त कर रहा था। उसने सबको समझाया, “हिंसात्मक कदम से हम कुचल दिये जायेंगे। हमें अपना दुसड़ा अन्नदाता को सुनाकर ही कोई ऐसा काम करना चाहिए जिससे हमें मुंह की न खानी पड़े।” चाँदनी में शिव और अन्य किसानों की मुखाकृतियाँ स्पष्ट दीख रही थी। इधर शिव किसानों को शान्त कर रहा था, उधर हवेली के पीछे से आग की लपटें भड़क उठी। किसान विस्मित से उन लपटों को देखने लगे। ठाकुर दहाड़ मार कर अपने महल से बाहर पालकी पर निकला, पालकी पर इसलिए कि वह जन्म से अपंग था और उपस्थित लोगों पर गालियाँ बरसाता हुआ बोला, “तुम लोगों की यह जुरूत कि मेरे घर को आग लगाओ ! मैं सबको गोलीयों से भुनका दूँगा।”

उसका इतना कहता था कि ठाकुर के कई कारिन्दे एक किसान को पकड़ लाये। यह किसान वस्तुतः किसान नहीं था, ठाकुर का ही आदमी था, जो

नये वदन और फटी घोती में किसान-भा लगता था। ठाकुर के आदमी बुरी तरह से उसे पीट रहे थे। पीटने में सत्यता और कठोरता थी, क्योंकि कारिन्दे इस कार्य में अभिनय से अत्यन्त दूर रहते थे। यह घायन पक्षी की तरह चीख रहा था।

अचानक महाराजा की गाड़ी रुकी। उनके साथ ही दूसरे ट्रक में उनके तीस सिपाही थे। वे शस्त्रों से लैस थे। आग की लपटों को देखकर महाराजा का पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया। उन्होंने फड़क कर कहा, "यह आग किसने लगाई है?"

"माई-बाप शान्ति से कार्य करने के बाद भी किसानों ने मेरे महल को जला दिया है।" ठाकुर खीर्वासिह ने जमीन की ओर सिर झुका कर महाराजा का अभिवादन किया। अभिनय-प्रवीण ठाकुर ने तुरन्त अपने नेत्रों में आंसू भर लिये। उसकी आकृति से ऐसा लग रहा था जैसे उसे गहरी व्यथा है।

महाराजा का शेष धैर्य जाता रहा। अपने भतीजे के घर को आग की लपटों में भस्म होते देखकर उन्होंने किसानों से सही स्थिति को समझने की चेष्टा ही नहीं की। शिव आगे बढ़ा और उसने सही स्थिति को समझाने के लिए बोलना चाहा किन्तु उत्तेजित महाराजा ने उसे बोलने का अवसर ही नहीं दिया। उन्होंने अपनी बड़ी-बड़ी मूँछों पर ताव देकर फिर गर्म होकर पूछा, "तुम लोगो ने ऐसा अत्याचार क्यों किया? क्या मैं यह सब सहन कर लूँगा? जूँओं के खाने से घाघरे नहीं फेंके जायेंगे।

शिव ने आगे बढ़कर कहा, "अन्नदाता नै खम्मा, यह आग ठाकुर सा की खुद की लगाई हुई है। यह सब पड़्यन्न है। विश्वास न हो तो फ्रैंक साहब से पूछ लीजिए।" पर राजाजी का चाकर फ्रैंक भी झूठ बोल गया।

ठाकुर खीर्वासिह ने अपने समीप खड़े व्यक्तियों को दूर होने का संकेत किया और लाल-साल आँखें करके कहा, "यह झूठ बोलता है। यह झूठ बोलता है। मैंने इसके आदमी को पकड़ा है। यह रहा वह आदमी।"

खीर्वासिह ने अपने आदमी को जो अपराधी करार कर दिया गया था, महाराजा के सामने पेश करने को कहा। महाराजा की भ्रुकुटियाँ तन गईं। क्रोध से काँपते अपने अंगों पर काबू करते हुए उन्होंने कहा, "तू कौन है? तूने ऐसी हिमाकत किस बूते पर की? तुझे किसने भड़काया?"

उस आदमी का चेहरा उत्तेजित और भयानक वातावरण में पीला पड़ गया था। वह तनिक आगे बढ़ा और उसने दोनों हाथों से महाराजा के चरण स्पर्श किये। उसका अंग-अंग सूखे पत्ते की तरह कांप रहा था और उसकी आंखों में भावी मृत्यु की आशंसा थी। वह धिधिपाता हुआ बोला, “यह आग मैंने लगाई है, मुझे शिव ने आग लगाने के लिए भेजा था।”

“तू कहाँ काम करता है?”

“मैं ठाकुर सा के यहाँ गायों की देखभाल का काम करता हूँ।”

“नालायक, नमकहराम, जिस थाली में खाता है उसी को छेदता है। ठाकुर भैरुसिंह जी इस माद.....गोली के जायड़े (जन्मे) को गोली मार दो।”

ठाकुर भैरुसिंह पुलिस इन्स्पेक्टर था। महाराजा की आज्ञा पाते ही उसने उस निर्दोष और कायर आदमी को गर्दन से पकड़ा और उस पर ठोकटें बरसाने लगा। वह आदमी जो दहेज में आया हुआ गोला (गुलाम) था, जमीन पर गिर गया। उसका सारा बदन धूल-धूसरित हो गया। उसकी नाक से खून बहने लगा। उसे जिस निर्दयता और निर्भयता से पीटा जा रहा था, उसे देखकर समस्त भूखे-नंगे आन्दोलनकारी किसानों में भय की लहर दौड़ गई। वे प्रश्न भरी दृष्टि से एक दूसरे को देखने लगे। शिव इस असह्य अत्याचार को नहीं सह सका। निर्भीकता और साहस उसके बचपन के गुण थे, सो उसने गरज कर कहा, “यह आदमी मेरा नहीं ठाकुर का है। मैंने आज से पहले कभी इसे देखा भी नहीं।”

खीरसिंह क्रोध से कांपते स्वर में बोला—“बुप रह पाजी, यह सब तेरी ही लगाई आग है। मैं तुझे जिन्दा जमीन में गाड़ दूंगा।”

महाराजा ने ठाकुर को रोका। भैरुसिंह तब तक उस आदमी को घसीटता हुआ दूर पेड़ की छाया में ले गया था। वह आदमी हृदय दहलाने वाले आत-स्वर में कह रहा था, “मुझे मत मारो, मैं बेकसूर हूँ, मैंने कोई कसूर नहीं किया, मुझे खुद ठाकुर-सा ने कहा, तो मैंने यह आग लगाई।”

खीरसिंह ने सब कुछ सुना। सुनकर भी वह बहरा हो गया।

शिव ने महाराजा के पाँव पकड़ लिये। वह आद्रे-स्वर में बोला, “रहम कीजिए महाराज, इस निर्दोष को मत मरवाइए, मैं ईश्वर की कसम खाकर कहता हूँ कि मैं इसे नहीं जानता।”

महाराजा ने दम्भ से कहा, “राजनीति तुम अधिक जानते हो या मैं

शिव ने इतना ही कहा, “मैं राजनीति और विद्वत्ता की बात नहीं करता मैं केवल इतना ही जानता हूँ कि आप जिस आदमी को गोली से उड़वा रहे उसे मैं नहीं जानता, उसे मैंने आज से पहले देखा भी नहीं। इस पर भी आप उस पर सन्देह है, तो इसे कानून के हवाले कर दीजिए।”

महाराजा उस तुच्छ किसान के मुँह से उपदेश की बातें सुनकर आवे में आ गये। कड़क कर बोले, “मेरा न्याय मेरा झूता है।”

दूर वृक्ष की छाया में गोली की भयानक आवाज हुई। एक इन्सा चिधाड़ कर शान्त हो गया। वह कुछ देर तक जलहीन मछली की तरह तड़प और फिर निर्जीव हो गया।

शिव ने अपने कान बन्द कर लिये।

कुछ किसानों के मुँह से ‘शिव-शिव’ की ध्वनि हुई।

कुछ किसान पाषाणवत् हो गये।

महाराजा ने व्यग्रता से कहा, “हम न्याय की व्यस्तता में यह भूल ही गये कि आग भी बुझानी है।” और उन्होंने अपने साथ आये आदमियों को आज्ञा दी। बाद में शिव की गिरफ्तारी का हुक्म देकर चले गये।

×

×

×

शिव ठाकुर की कोठरी में बन्द था।

उस कोठरी में शमसान की शान्ति और मृत्यु-सा सन्नाटा था। अपनी बीट पर पहरा देते हुए जमादार के नालदार झूतों की खट्-खट् उसे हथोड़े की चोट-सी लग रही थी। वह प्राणहीन की तरह दीवार का सहारा लिये हुए सोच रहा था—“मैं बचपन से इन नादिरशाहों के जुल्म से लड़ता आया हूँ। न इनके पास न्याय है और न धर्म। पुण्यात्मा कहलाने वाले मे राजे-महाराजे

अपने स्वायं और हित के पीछे साधारण सी साधारण बात को तूल देकर विपक्ष को परास्त करते हैं। गोलियाँ चलवाते हैं। आदमी को मूक पशु की तरह निर्दयता और वेदनी से मरवा देते हैं। आह ! बेचारा वह आदमी ! बेचारा वह गुलाम !” शिव की आँखें भर आयीं। उसके गालों पर अश्रु की धारा बह चली।

बड़ रात्रि के मयानक क्षणों में पत्थर के बूत की तरह बैठा रहा। उसकी आँखों में जरा भी नींद नहीं थी। उसे जरा भी चैन नहीं था। वह अवशपंछी की तरह उस हवालात की गन्दी और अँधेरी कोठरी में फड़फड़ाता रहा, तड़पता रहा। रह-रह कर उसे अपना अतीत याद आ रहा था। अतीत की एक-एक घटना उसके समक्ष नाच उठी। उसने अपने जीवन के कुछ धुंधले चित्र स्पष्ट किये, तभी भैरुसिंह आया और उसने शिव की गर्दन पकड़कर जोर से धक्का मारा और उसे कोठरी के बाहर धकेल कर कहा, “आ, तुझे अब राजधानी ले जाया जायगा।”

शिव द्रुटे हुए इन्सान की तरह उसके पीछे चला। उसके चेहरे पर घोर मुदंनी छा गई।

रेल तेज रफ्तार से जा रही थी और उसी रफ्तार से उसे अपना जीवन याद आ रहा था। अपना अतीत.....

ठाकुर केसरीसिंह की इस विशाल और मजबूत चहार-दीवारी के भीतर से आज से बाईस वर्ष पूर्व जब ठाकुर शराब के नशे में मदोन्मत्त था और इन्सानियत की चमक को बिहँस-बिहँस कर समाप्त कर रहा था, तब दो युवतियाँ अपने पहरेदार को दो-दो सौ रुपयों के जेवर देकर भागी थीं। इन औरतों में एक किसान की बेटी जमना थी और दूसरी धोबिन नैना थी। ये दोनों रात के अँधेरे में भाग रही थी। उन्हें भगते हुए हिजड़े ने कहा था, “तुम जल्दी ही यहाँ से दूर, बहुत दूर चली जाना।”

वे दोनों चल पड़ी थीं।

उसके पास कुछ धन था, वस्त्र थे और कुछ खाने का सामान था।

नैना ने थोड़ी दूर चलकर एक प्याऊ में विश्राम किया। यह प्याऊ नाम मात्र की प्याऊ थी। टूटी-फूटी लोपड़ी में दो-चार मटकियाँ रखी हुई थीं। इन मटकियों के पास एक पानी पीने का लोटा था, जिससे आते-जाते यानी प्यास

बुझा लेते थे। इस प्याऊ में रात की शून्यता भयावह लग रही थी। उन दोनों ने बैठकर परामर्श किया, "अब क्या करें बहन?"

"मैं कुछ नहीं जानती।" नैना ने निराशा से कहा।
 "ऐसी दिल डुबाने वाली बात न कर, ऐसा करेगी तो हम चापस ठाकुर सा की जनानी कपोड़ी में चल पड़ेंगी।"

"नहीं-नहीं बहन, ऐसा कहेंगी तो मैं कुए में कूदकर अपनी जान दे दूंगी। उस नरक में सड़ने से तो मौत बोलो।"

"फिर कुछ बताती क्यों नहीं?"
 नैना ने जमना का हाथ अपने हाथ में ले लिया। उसकी आँखों में क्या भाव था, वह आँधरे के कारण नहीं देख पाई, पर उसका गला भरपिया हुआ था, "मैं कुछ नहीं जानती। मैंने यह भी नहीं सोचा कि भागने के बाद क्या नतीजा निकलेगा? पकड़े जाने के बाद अपने साथ कैसा बर्ताव किया जायगा? हाँ सरोज को जो सजा दी गई है, उसको पाने से अच्छा है कि मर जायें।"

जमना का हृदय भर आया। वह रकती-रकती बोली, "मैं वह सजा भोग चुकी हूँ।... बरसात का मौसम था। भीनी-भीनी हवा में मन नाच रहा था। मैं उन दिनों ठाकुर के हुजूर से निकाल दी गई थी, क्योंकि उनके हुजूर में कुटनी चन्द्रावती ने एक दूसरी लड़की को पेश कर दिया था। वह लड़की जवान और सुन्दर थी। उसके आते ही मेरे साथ दुर्व्यवहार किया जाने लगा। हालाँकि मेरे बाप ने जब मुझे गरीबी में बेचा था, तब उसको यह आशवासन दिया गया था कि तुम्हारी बेटी रानी बन कर रहेगी, किन्तु ठाकुर मेरे साथ रखैल का व्यवहार करता था। वह शराब और अफीम का नशा करके मेरे शरीर को इस तरह नोचता था जैसे कुत्ता मरे हुए पशुओं के माँस को नोचता है। कभी-कभी मैं दुःख से तड़प उठती थी और मेरी इच्छा होती थी कि मैं हवेली के सबसे ऊँचे बुर्ज से कूद कर अपनी जान दे दूँ, पर मैं इस काम में एकदम असफल रही। रात के सप्ताटे में जब ठाकुर के कमरे से घुंघरुओं की झनकार सुन पड़ती थी, तब मैं बुर्ज की दीवार पर खड़ी होकर जीवन और मृत्यु के बीच झूलती रहती थी। बेचनी और दुःख, पीड़ा और मोह। अजीब उलझन! तब नैना, केवल इस भ्रम में कि मैं रानी हूँ, मैं जीवित रही। लेकिन मैं यह नहीं जानती थी कि सत्य कुछ और ही है। कुछ दिन के बाद मेरे साथ एकदम

उपेक्षा और अपमानजनक वर्त्ताव किया जाने लगा । दूसरी अभागी रखैलों की तरह मुझे भी ठाकुर सा के लिए तड़पना पड़ा । एक दिन की बात है—

पूर्णमासी का चाँद आकाश के बीचोबीच चमक रहा था । पातुरें नृत्य और संगीत में तन्मय थीं । ठाकुर सा शराब में मतवाले झूम रहे थे । नयी लड़की सोना उनके पास बैठी थी । तभी मैं उनके कमरे में घुस पड़ी । मुझे देखते ही ठाकुर का नशा उतर गया । पातुरों के गीत रुक गये और सोना तन कर बैठ गई जैसे उसका बड़ा अपमान हो गया हो । उसके समीप ही मरजीदानें बैठी थी जो ठाकुर की अत्यन्त कृपापात्र थीं । कुछ घाघरवालियाँ, जो जनानी ड्यौड़ी में रहने वाली रानियों, पासवानो, पदायितणों और मरजीदानों की सेवा के साथ-साथ उनके सन्देश पहुँचाया करती थी, खड़ी-खड़ी सोना व अन्य युव-तियों पर पंखा झल रही थी व उनकी मांगों को पूरा कर रही थी, मुझे देखते ही वे स्तब्ध हो गई ।

ठाकुर आये और बोले, “तुम किसके हुक्म से भीतर आई हो ?”

“अपनी मर्जी से ।” मैंने तन कर कहा ।

“जमना ! जानती नहीं, इसका नतीजा क्या निकलेगा ?”

“मैं कोई गोली (दासी) और रखैल नहीं हूँ । आपकी राती हूँ, आपने मुझ अपनी पटरानी बनाया था ।”

ठाकुर ने गरज कर कहा, “धुप रह हरामखोर, गोली, जबान लड़ाती है ! अरे कोई है ?” उनका कहना था कि चार पहरेंदार आये । मेरी ओर संकेत करके ठाकुर सा बोले, “इस साली को बीस हण्टर लगाओ ।”

ठाकुर की अपनी अदालत है ।

उसके अपने जल्लाद हैं ।

मुझे तुरन्त भैरव नामक हिजड़े को सौंपा गया । भ्रम कच्चे महल की तरह टूट गया । हिजड़े ने तार और चमड़े का हण्टर सँभाला और मुझे अर्ध नंगा करके एक खम्भे से बाँध दिया । फिर उसने सबको वहाँ से जाने का संकेत किया । मैं मन ही मन तड़प रही थी ।

एकान्त !

मैं डरी-डरी सी, सहमी-सहमी-सी खड़ी थी ।

उसने हण्टर सँभाला और तड़तड़ मुझ पर बरसाने शुरू कर दिये ।

मैं चीखी और तड़प कर शान्त हो गई ।

जब मुझे होश आया, मैं उस हिजड़े के साथ सोई हुई थी । वह हिजड़ा जंगली आदमी की तरह मेरे अंग-अंग को घूम रहा था । पौरुषहीन वह इन्सान कितना नीच और आदमखोर था, यह मैं बयान नहीं कर सकती । पर इतना कहती हूँ कि ये हिजड़े बड़े धिनीने और विकृत होते हैं । मुझे घुमते हुए उसने कहा, "मेरा कहना मानोगी तो सुख पाओगी ।" उसके हाव में हण्टर था ।

मैं उस हण्टर के नाम से पीली पड़ गई । बोली, "तुम मुझे हण्टर से मत मारना ।"

"मैं नहीं माऊँगा, लेकिन तुम्हें मेरी रानी बन कर रहना पड़ेगा ।"

"नहीं, मैं तुम्हारी रानी नहीं बनूँगी । मैं ठाकुर सा की रानी हूँ, उनकी ठकुरानी हूँ ।"

वह डरावना अट्टहास कर उठा ।

वह बोला, "बे दिन गये जब रानीजी फूलों की सेज पर सोती थी और फूलों पर चलती थी । अब इसी में भला समझिए कि काँटों का रास्ता न मिले ।"

मैं उसका तात्पर्य समझ गई । कुछ नहीं बोली । उसकी कृपा से मुझे और भयानक दण्ड नहीं मिला । सरोज की तरह मेरे बालों को नहीं मुड़वाया गया और न मुझे काला मुँह करके अँधेरी कोठरी में बन्द किया गया ।.....इसके बाद मुझे ऐसा लगा कि मैं मर जाऊँगी । फिर तुम आई । तुम्हें भी वही शीश-महल दिखाये गये ।

नैना ने कहा, "मुझे मेरे पति के कारण यहाँ आना पड़ा । कामचोर मेरा पति मुझे हर रोज सताता था । एक दिन उसने मुझे बड़ी निन्द्यता से पीटा । खाचार होकर मैं भाग खड़ी हुई । इसके बाद मैं चन्द्रावती से मिली और उस राँड ने मुझे झूठे-सच्चे प्रलोभन देकर यहाँ ला पटका । मेरे पेट का बच्चा मेरे अपने पति का है । जब ठाकुर को यह मानूम हुआ कि मैं गर्भवती हूँ तो उसने चन्द्रावती के बाल पकड़ कर घूँसे मारे और गुप्ताग में मिचों भरवा दी । वह बेचारी रात भर पागलों की तरह चीखती रही, पर यहाँ कौन बैठा है जो अभागी-अबलाओं का रोना सुने !.....जमना, कभी-कभी ऐसा लगता है कि ईश्वर है ही नहीं ।"

रात ढल रही थी ।

जमना ने आहिस्ते से कहा, "अब क्या करे लायूँ ?"

नैना ने कहा, "मैं एक नुमायें बताऊँ
"बता ।"

"तू मेरा मदें बन जा ।"

जमना सकते में आ गई । वह हृत्प्रभ-सी नैना का आर देखता रहा ।

"हाँ, तू मेरा मदें बन जा ।" उसने विश्वास के साथ कहा, "तू मेरा मदें
न जायगी तब हमें कोई नहीं पहचानेगा । हम कहीं सूने गाँव में जाकर बस
पोंगे और धीरे-धीरे अपनी जिन्दगी गुजार देंगे ।"

"सच ?"

"हाँ !"

"मुझे यह बड़ा अजीब लगता है । विश्वास नहीं होता कि हम यह सब कर
सके ।"

नैना ने जमना के दोनों हाथ मजबूती से पकड़ लिये ।

आकाशगंगा शान्त और स्निग्ध थी ।

दोनों ने कुछ खाया-पिया और चल पड़ी—नवीन पथ पर नये यात्रियों की
तरह होले-होले ।

कोई राहगीर अपने मधुर स्वर में व्यथा भरा गीत गा रहा था—

काली रे काली काजलिए री रेख रे,

भूरोड़े बुजों पर चिमकें धोजली,

जुग जीवो भूहारी भूमल चालो नो,

सकरीए ढोला'रे देश...

नैना ने कहा, "प्रेम दीवानी 'भूमल' की कहानी तुम्हें आती है ?"

"हाँ !" जमना ने कहा ।

"सुना !"

जमना ने अपने हिस्से के सामान की गठरी सिर पर रखी और चलते हुए
कहा, "तू पगडण्डी का ध्यान रखना । ऐसा न हो जाय कि कहानी की मस्ती
में रास्ता ही बिसर जाय ।"

“तू चिंता-फिकर मत कर ।”

दोनों चली ।

जमना ने कहा—राजकुमारी मूमल का प्यार महेन्द्र से हो गया । महेन्द्र हर रात ऊँट पर सवार होकर आता था और भोर के तारे के साथ वापस चला जाता था । दिन बीतते गये ।

मूमल के एक छोटी बहन थी सूमल ।

बड़ी नट-खट और चंचल ।

एक दिन उसने बातों ही बातों में मूमल से कहा, “मैं बहनोईजी को छकाऊँगी ।”

“कैसे ?”

“मर्द का भेष बनाकर तुम्हारे संग सो जाऊँगी ।”

मूमल हँस पड़ी । उसने स्नेह से सूमल के गालों पर चपत लगा दी । चपत खाकर सूमल चिड़िया की तरह नाचती-फुदकती भाग गई ।

आधी रात !

मूमल मूमल से लिपट कर सो गई । सूमल ने ‘ढोली’ का भेष बना रखा था, क्योंकि मूमल के महल में मर्दों का प्रवेश बन्द था, केवल गाने-बजाने वाले ढोली ही उसमें प्रवेश पा सकते थे ।

महेन्द्र बड़ा फासला तय करके आया ।

उसने कक्ष में घुसते ही यह नजारा देखा । क्रोध से जल उठा । बिना किसी से पूछे, बिना किसी के सुने, वह उल्टे पाँव लौट गया । दासियों ने यह सूचना मूमल और सूमल को दी । मूमल बावरी बनी महेन्द्र के पीछे दौड़ी, जोर-जोर से आवाज भी लगाई, पर महेन्द्र नहीं लौटा, नहीं लौटा ।

पल, दिन, रात और महीने धीरे ।

जमना का गला भर आया—प्रेम दीवानी मूमल अपनी दूधोड़ी के झरोखे में बैठी हुई महेन्द्र का इन्तजार करने लगी ।

जमना भावुक हो उठी—

हर कदम की आहट उसके निर्जीव प्राणों में स्पन्दन भर देती थी । वह द्वार की ओर भागती थी । उसके नयनों में व्यथा के आँसू भर आते थे, लेकिन महेन्द्र की जगह वह किसी और को देखती तो हताश हो उठती । सिसक-सिसक

कर रो पड़ती थी। सखियाँ उसे घीरज बँधाती थी। मूमल अपने आपको हर घड़ी और हर पहर कोसती रहती थी। हजारों बार सन्देश भेजे गये, पर निर्मोही महेन्द्र नहीं आया, नहीं आया। प्रतीक्षा करते-करते मूमल ने उमर गुजार दी। मर गई। आखिरी साँस तक उसने महेन्द्र का ही नाम लिया—काश वह उसे एक बार अपनी सूरत ही दिखा जाता।.....तब से आज तक मूमल का यह विरह-गीत हमारे दिलों को लकझोर रहा है।

जमना चुप हो गई।

प्राची के आँगन में सूर्य देवता के आगमन में ऊपा ने अहण्डिमाँ अँचल ओढ़कर नृत्य करना आरम्भ कर दिया।

नैना ने उल्लास से कहा, “जमना, भोर हो रही है।”

“सामने गाँव भी है।”

और दोनों ने जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाये।

×

×

×

४

...

छोटा-सा गाँव।

कच्ची मिट्टी के दो-चार, शेष घास-फूस के झोंपड़े। एक साहूकार की दूकान। एक पंडित जो वैद्य भी है और तंत्रिक भी और जन्म से लेकर मरण तक के सारे काम करा देता है।

जमना और नैना एक झोंपड़े के आगे पहुँचीं। एक दस वर्ष की बालिका ने उन दोनों का विस्मित दृष्टि से स्वागत किया। जमना ने अपने होठों पर मुस्कान बिखेरते हुए उस बालिका को अपनी ओर आने का संकेत किया। बालिका धीरे-धीरे कदम उठाती हुई उसके पास आई और चुपचाप खड़ी हो गई।

“यह घर किसका है, बाई?”

बालिका ने भोलेपन से उत्तर दिया, “मेरे बाप का है।”

"तेरे बाप का क्या नाम है ?"

"सखाराम ।"

"क्या करता है ?"

"सेती ।"

"जाट हो क्या ?"

"हां !"

"तेरी मां घर में है ?"

"हां !"

"जरा उसे बाहर भेज । कहना पावने (मेहमान) आये हैं ।"

बालिका चली गई ।

जमना ने कहा, "यहीं खा-पीकर चल दोगे ।"

नैना ने कहा, "यहाँ से कैंची भी माँग लेना ।"

"क्यों ?"

नैना विहँस पड़ी, "तुझे मेरा मोट्यार (पति) जो बनाना है ।"

"धत् !"

"देख जमना, यह दुनिया बड़ी जालिम है, इसमें छिप कर रहना आमना नहीं है । जैसा कहती हूँ, वैसा करती जा, बर्ना ठाकुर के आदमी पकड़कर अंधेरी कोठरी में बन्द कर दोगे । केवल मूँग की दाल खाने को दोगे और वह हण्टर ! जमना !"

जमना जनानी ड्यौड़ी की नारकीय यंत्रणाओं से परिचित थी, इसलिए नैना की बात तुरन्त मान ली ।

तभी घूँघट में लिपटी एक साधारण स्त्री आई और उन दोनों के सामने खड़ी हो गई । नैना ने राम-राम करके कहा, "हम तोग परदेशी हैं, यहाँ पर दो घड़ी विश्राम करना चाहते हैं । क्या आप हमारी मदद करेंगी ?"

"क्यों नहीं ! इम दूजी शोंपड़ी में आप दोनों ठहरिए । मैं आपको घाट लाकर देती हूँ । और जो भी रुखी-सूखी हैं, वह आपके सामने परसती हूँ ।"

"रोटियाँ हमारे पास हैं ।"

"वह अपने पास ही रखना । हमारे यहाँ हमारे ही रोटियाँ खानी पड़ेंगी ।"

जमना ने स्नेहपूरित स्वर में कहा, “आप क्यों कष्ट करती हैं ?”

“इसमें कष्ट !”

“कष्ट तो होगा ही !”

“ना-ना, इसमें भुझे कोई कष्ट नहीं होगा । रोटियाँ हमारी ही खाना होंगी !”

जैसी आपकी मर्जी ।”

घर की मालकिन अन्दर चली गई ।

कुछ देर तक सघाटा छाया रहा । जमना और नैना दोनों अपनी-अपनी गठरियाँ खोल कर पहनने के कपड़े निकालने लगी ।

बालिका ‘किशोरी’ ने आकर कहा, “आपके लिये पानी लाऊँ ? माँ कहती है कि आप नहा-धो लें ।”

‘पानी हम खुद ही कुए से भर लाएंगी । तू चलकर हमें कुआ बता दे ।’

किशोरी झट से एक मटकी ले आई । मटकी खाली थी । नैना ने झट से उसे उठाकर कहा, “जमना, मैं पानी भर लाती हूँ ।”

“भर ला, पर कुआ है कहाँ ? अधिक दूर हो तो मैं तेरे सागे (साथ) चलूँ ।”

किशोरी ने चलते हुए कहा, “बहुत ही पास है । उस घोरे (टीबे) के पीछे ।” और वह चली गयी ।

जमना ने एक बार फिर कहा, “चलूँ क्या तेरे सागे ?”

“बस रहने दे । तू कैची लेकर अपने बाल साफ कर ।” नैना की आँखों में मस्ती भर आई । चुटकी लेकर वह हँसकर बोली, “धवराती क्यों है, तुझे अपना मर्द बना रही है । तेरा हुक्म मानूँगी, तेरा घूँघट निकाल कर अदीक (इन्तजार) रखूँगी । और रात को तेरी सेज सजा कर रखूँगी ।”

जमना भड़क कर बोली, “मैं अपने बाल नहीं काटूँगी । देख मैंने अपने बालों को कितना तेल पिलाया है । छाछ से धोया और कई बार घी से चुपड़ा (बालों में तेल लगाने को ‘चुपड़ना’ कहते हैं) है । ना भाई ना, मैं तेरी फाकी (गप्प में) नहीं आऊँगी ।”

“तू बड़ी निगोड़ी है !”

“फिर तू क्यों नहीं कटाती ?”

नैना चेहरे पर कृत्रिम गम्भीरता लाती हुई बोली, "दूसरे को खसम बनाने में किसको आनन्द आता है ? जनानी ड्यूटी में कितने खसम थे ? हाय राम, उनके हुक्म सहते-सहते मेरी जान निकली जाती थी। मुझे खसम नाम के जन्तु से ही घिड़ है। किन्तु लाचारी भी कोई चीज होती है। मुझे भी बनाना पड़ रहा है। याह रे मेरे भाग्य !"

जमना ने अपने शब्दों में जोर देकर कहा, "नैना, मैं अपनी सौमन्य छाकर कहती हूँ कि मुझे तू अपना मद न बना। फिर औरत मद बन कर कैसे रह सकती है ?"

"रह सकती है, हिम्मत रख।"

"ना..... !"

बीच में नैना बोली, "तू किये-कराये पर पानी फरेगी।"

"लेकिन तू क्यों नहीं बनती ?"

"देख जमना, बिना दाढ़ी-मूँछों वाले भी मद होते हैं। किन्तु आज तक कोई ऐसा मद नहीं देखा गया जो बच्चा भी पैदा कर सकता हो। मैं अगर मद बनूँगी तो मेरे पेट का बच्चा ?"

जमना अप्रतिम-सी नैना को देखती रही।

"इसलिए मेरी भागली (सहेली), मद तुझे ही बनना पड़ेगा।" कहकर नैना मटकी को बजाती हुई चल पड़ी।

वह उस मुक्त वातावरण में स्वतंत्र प्रंछी की तरह चहक पड़ी—
पणिहारी ओ लो
भरिया-भरिया समंद तलाब
बाला जो।

कंजे बिनाया कुवां-बाबड़ी ओ पणिहारी ओ लो
छिणगारी ओ लो

बाबेजी बिनाया कूँ समंद-तलाब बाला जो....

दूरागत आती हुई ध्वनि धीरे-धीरे लोप होती गई।

×

×

×

"आप बाल क्यों काट रही हैं ?" घर की मालकिन ने हठात् जमना से यह

प्रश्न किया। जमना चौंक पड़ी। तत्क्षण उसे कोई उपाय नहीं सूझा। वह अपलक दृष्टि से घर की मालकिन को देखती रही।

“इतने चोखे बालों को काटने से क्या लाभ होगा?”

“क्या करूँ बहन!” सोच कर जमना बोली, “बालों में जूँ बहुत हैं। रात को सोने भी नहीं देती। फिर……?” जमना के चेहरे पर वेदना छा गई। उसकी वेदना की प्रतिक्रिया आगन्तुक महिला पर अत्यन्त सौहार्दपूर्ण हुई। घर की मालकिन के मुख पर गहरी करुणा चमक उठी। वह मंथी-भाव से बोली, “फिर क्या बहन?”

“फिर जिसका स्वामी नहीं है, उसे हार-शृंगार को क्या जरूरत है? उसे सिर्फ दो रोटी और एक लेंगोटी ही चाहिए। एक बार मैं हरद्वार में काट कर आई थी, पर अब फिर बढ़ गये हैं।”

घर की मालकिन यह सुनकर दुःखी हो गई। उसके मुख की सौन्दर्य-सुपमा ग्रहण लगे सूर्य की तरह निस्तेज हो गई।

“आप क्यों दुःखी हो गयीं?”

“स्त्री के लिए पति ही सब कुछ होता है! पति के बिना जवन-जगत सब जहर समान होता है। सब बहिन, मैं उनकी एक पल की देर भी नहीं सह सकती। बस, बावरी बन जाती हूँ। कभी-कभी यह छोटी-सी किशोरी भी मुझे टोक देती है। पर मेरा मन ही कुछ ऐसा है। पागल रहता है उनके लिए!”

दोनों महिलाएँ कुछ देर तक एक-दूसरे को प्रश्न भरी दृष्टियों से देखती रहीं।

सूर्य आकाश में ऊँचा चढ़ रहा था। उसके प्रकाश में रेत के धीरे सोने से चमक रहे थे। जमना ने अपने बालों की ढेरी उठाकर भावना भरी दृष्टि से प्रकृति के उस सुरम्य दृश्य को देखा। गत चार वर्ष से पत्थर की निर्जीव दीवारों के भीतर गुलामी का जीवन-यापन करने के बाद यह दृश्य उसे अत्यन्त सुहाना लग रहा था। उसने अपने बालों को गड्ढा खोद कर गाड़ दिया। तभी नैना मटकी सिर पर रख कर आती दीखी। वह जिस ढंग से बल खा-खा कर चल रही थी, उस ढंग को देख कर जमना को हँसी आ गई। नैना के पास आते ही उसने मुस्का कर कहा, “अरे क्यों मटक-मटक कर चल रही हो, कहीं कमर में लचक आ गई तो?”

“तो मुझे तकलीफ होगी।”

“तेरी तकलीफ मुझे कहीं चैन लेने देगी?”

“अफीम खाकर पड़ी रहना।” उसने एक झटके से अपने गिर की मटकी नीची कर दी।

घर की मालकिन ने कहा, “रोटियाँ तैयार हैं। झटपट निपट कर खा लो।”

“किशोरी के बाप कब आयेंगे?”

“उनका भाता (खाना) लेकर मैं खेत जाऊँगी।”

“फिर बाप चली जाइए, हमें किशोरी खाना खिला देगी।”

किशोरी ने माँ के सम्मुख जा कर कहा, “हाँ-हाँ, मैं इन्हें खाना खिला दूँगी। तू चली जा। साँझ को जल्दी आना।”

“हाँ-हाँ, अच्छा मैं फिर जाती हूँ।” घर की मालकिन चली गई।

भोजन से निवृत्त होकर उन दोनों ने श्रृंगार किया। बाल-मुलभ हृदय की समस्त कोमलता अपने स्वर में उड़ेल कर किशोर ने पूछा, “आप कहाँ जा रही हैं। मुझे बताएँगी?”

“हम तीर्थ-यात्रा करने जा रही हूँ?”

“कहाँ?”

“दूर, बहुत दूर।”

“कितनी दूर?”

“बहुत दूर, तू उसके बारे में सोच भी नहीं सकती।”

“फिर भी?”

“काशी, प्रयाग, हरद्वार।” नैना एक क्षण रुकी। उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में ममता दीप्त उठी थी। बोली, “तू हमारे साथे चलेगी?”

“नहीं।”

“क्यों री?”

किशोरी के स्वर में माधुर्य था, “मैं माँ को नहीं छोड़ सकती। उसके बिना मुझे कुछ भी चोखा नहीं लगता।”

“फिर तू अभी अपनी माँ के साथे क्यों नहीं गई?”

“सदा जाती हूँ, पर आज मन नहीं करा। मुझे आप दोनों बहुत चोखी लगती हैं।” तब उसकी तर्जनी का संकेत जमना की ओर था, “इन्होंने अपने

बाल काट लिये हैं। इनके बाल बहुत ही बड़े-बड़े और काले थे। जब ये बाल काट रही थीं तब मैं सोच रही थी कि मैं इन बालों को उठाकर अपने इन छोटे-छोटे बालों में जोड़ लूँ। मेरे भी बाल आपकी तरह बड़े-बड़े हो जायेंगे। मैं भी आपकी तरह फूटरी (सुन्दर) लगने लगूँगी।”

जमना के अन्तस् में वात्सल्य का ज्वार उठा। उसने किशोरी को अपनी बांहों में भर कर उसके पराग लगे कपोलों पर चुम्बन अंकित कर दिये। उस स्पर्श ने जमना के हृदय में शाद्वत सगीत की अनुपम झकार उत्पन्न कर दी।

“तू फूटरी बनना चाहती है?”

“हाँ।”

“क्यों?”

किशोरी लजा गई।

“लजाती क्यों है? बोल, बोल!”

“माँ कहती है कि फूटरी छोरी को सब प्यार करते हैं”

“सच?”

किशोरी ने उसे प्रश्न भरी दृष्टि से देखा।

जमना ने नैना की ओर देखकर कहा, “नैना, कब यहाँ से चलना पड़ेगा?”

“घोड़ी ढेर नींद ले लूँ, फिर चलेंगे।”

किशोरी भीतर चली गई और वे दोनों सो गयी।

सूरज के डलने के साथ ही वे दोनों पुनः अपनी यात्रा पर चल पड़ी।

×

×

×

एक और गाँव! इस गाँव का जमींदार ब्राह्मण था। महाराजा के वृजुर्गों की अखण्ड सेवा करने के बाद इस ब्राह्मण के कौन से पितामह को यह गाँव दानस्वरूप मिला था, यह वर्तमान जमींदार दामोदरप्रसाद भी बिना दान-पत्र देखे नहीं बता सकता था। दामोदर की उम्र इस समय पचास-पचपन की थी। उसके चौड़े मुख पर चमकती झुर्रियाँ जीवन के कठोर अनुभव की स्पष्ट प्रतीक थीं। संशय का अपरिपक्व भोलापन, तारुण्य का अल्हड़पन और घुड़ावे की गम्भीरता की यात्राएँ किये हुए उसका ललाट तीजस्वी तपस्वी-सा लगता

था। उसके सिर पर गो-पद से चोटी थी जो उसकी धार्मिक कट्टरता की प्रतीक थी। गले में रुद्राक्ष की माला कहती थी कि यह शिवजी का भक्त है। आवाज युनन्द और स्वभाव में कोमलता।

सारा गाँव उसके कुशल शासन में खुशहाल था। जमींदारी का नियम था कि कोई भी आदमी गाँव में हरा वृक्ष नहीं तोड़ सकता, बरमाती नदी के अतिरिक्त वह पशुओं को तालाब में नहीं नहला सकता था, क्योंकि तालाब का पानी भी निम्न घर्ग की जातियाँ पीने के काम में लाती थी। कुओ पर कपड़े धोने व साबुन लगाने की सख्त मुमानियत थी। गाँव में बीस-पच्चीस घर ब्राह्मणों के, सात से जाटों के, सौ राजपूतों के और सौ अन्य जातियों के थे, जिन में हरिजन भी सम्मिलित थे। डेढ़ सौ वर्ष पहले थे।

जमना अब सम्पूर्ण रूप से मर्द बन गई थी।

नैना ने घाघरा और जयपुर की सुप्रसिद्ध धूनड़ी ओढ़ रखी थी। घूँघट में उसका अनुरूप सौन्दर्य आकर्षण का केन्द्र बना हुआ था। वैसे नैना की उम्र भी सत्रह-अठारह वर्ष की ही थी। नैना ने अपनी प्रकृति के अनुसार जमना को परिहास भरे स्वर से पुकारा, "और सुनते हो जी, मेरे पाँव धक गये हैं।" कंधे पर लकड़ी के सहारे गहरी को लटकाये जमना बोली, "पाँव धक गये हैं तो बैठ कर दबा ले। मैं अब गाँव में जाकर ही आराम करूँगी।"

नैना भागती हुई आई। पैजनियाँ गीत गा उठी। उसने जमना का हाथ पकड़ कर कहा, "करूँगी नहीं, करूँगा। अब तू जमना नहीं, नैना का खसम है, खसम। 'करूँगी' और 'करूँगा' सारा मामला चौपट कर देगा।"

जमना ने चिढ़कर कहा, "कर दे तो मैं हनुमानजी को सवा पाँच आने का प्रसाद चढाऊँ। मैं इस बनावटी भेष से तंग आ गई हूँ। अकड़ कर चलते चलते मेरी कमर में दर्द होने लग गया है।"

"पाँच-सात रोज में आदत पड़ जायगी।"

"तुम आदत की बात कहती हो, मैं समझती हूँ—पाँच-सात दिन में सेरी अर्धी हो निकल जायगी।"

"शूक तेरी जवान से, ऐसी अशुभ बोली बोलते तेरी जीभ नहीं जली?"

जमना की आँखें सजल हो उठीं। उसने भरपूर स्वर में कहा, "तुझे बना-

वट दुःख देती है। क्या जीवन भर इस बनावट और भाग-दौड़ के पीछे परेशान होते रहेंगे। घोर दरिद्रता में बचपन बीता, जवानी में भाग्य ने महाराजा की रानी बनाया, किन्तु भाग्य का वह क्षणिक सुख जीवन में सदा का दुःख दे गया। उस जीवन को याद करती हूँ तब लगता है—क्या वह मुझे फिर कभी मिलेगा? सच कहती हूँ नैना, मैं महाराजा की सदा कृपापात्र बनी रहती, पर वहाँ के आदमियों तथा कुटुंबियों की चालबाजियों ने मेरे जीवन में जहर घोल दिया। मुझे महाराज की निगाहों में गिरा दिया।”

नैना ने उसके कंधे को मजबूती से पकड़ा। उसकी आँखों में वेदना तरलता बनकर चमक उठी। अपनी भावनाओं को वह रोकती-रोकती बोली, “तू उस राक्षस को देवता कहती है। मैं समझती हूँ कि ऐसा पापी इस धरती पर नहीं होगा। तू नहीं जानती कि उसने अबलाओं के साथ पशुओं-सा व्यवहार किया है। वह धरती पर कलंक है, बोझ है। मैं उसे हत्यारे से कम नहीं मानती। मेरा बस चले तो मैं उसे शूली पर चढ़वा दूँ।”

“तू आवेश में भर गई है। तू उसे नीच कहती है और मैं उसे महानीच कहती हूँ, पर यह भी सच है कि मैं ठाकुर के घर कुंवारी ही आई थी। मंत्रों को साक्षी बनाकर उसने मुझसे विवाह भले ही न किया हो, पर उसने मेरे कुंवारेपन को खण्डित किया था। उसने मुझे कुछ दिन अपनी पत्नी कहा था। और मेरा विचार है कि मैं अब परित्यक्ता का जीवन व्यतीत करूँगी। तू नहीं जानती कि उस हीजड़े का स्पर्श भी मुझे कितना पीड़ादायक लगता था।”

नैना ने कहा, “उस पापी के पीछे तुझे भी नरक मिलेगा। उसका कहीं भी उद्धार नहीं है। उसकी आत्मा को कहीं भी शान्ति नहीं मिलेगी। उससे किंचित् भी स्नेह रखने वाला नरक का कीड़ा बनेगा।”

जमना हँस पड़ी, “हर मनुष्य को अपने कर्म का फल मिलता है। उसका पाप मुझे नहीं सतायेगा और मेरा धर्म उसका उद्धार नहीं करेगा।”

नैना ने तर्क का साहस नहीं था, “मैं तुझसे नहीं जीव सकती। ले गाँव आ गया है। अब जरा हुशियारी रखना।”

जमना ने कहा, “तू निश्चिन्त रह।”

गाँव की सीमा में उन दोनों ने प्रवेश किया।

गाँव में शूद्रों के कच्चे घास-फूस के झोंपड़े थे। ब्राह्मणों के मकान इस गाँव में कच्चे, पर लिपे-पुते थे और किसी-किसी पण्डित का मकान पत्थर का भी बना हुआ था। ठाकुर हरोसिंह की हवेली के अतिरिक्त सारे राजपूतों के मकान अत्यन्त साधारण थे। शूद्रों के मकानों में दिया कभी नहीं जलता था। उनकी दशा आर्थिक दृष्टि से गिरी हुई उपेक्षित-तिरस्कृत थी। फिर भी उनमें भाईचारा पर्याप्त मात्रा में था। ब्राह्मण, वैश्य और राजपूतों की स्त्रियाँ और मर्द उनका सम्मान करते थे। उनकी बहू को 'बहू' और बेटा को 'बेटा' समझते थे। हरिजनो के बड़े-बूढ़े का लिहाज राजपूत, ब्राह्मण एवं वैश्यों की बहूएँ घूँघट निकाल कर करती थी तथा उनके सामने से पाँवों में जूनी पहन कर नहीं जाती थीं। हरिजन जाति के पंच भूला का बड़े-बड़े सम्मानित गाँव बासो के अतिरिक्त स्वयं जमींदार दामोदरप्रसाद आदर करता था।

गाँव की सीमा पर उसकी कुटिया थी। उस कुटिया के आगे वह हाथ में लट्ठ लिये बैठा रहता था। हर गुजरने वाले यात्री से वह पुलिस-अफसर की तरह प्रश्न किया करता था। उसका गाँव कौन-सा है, वह कहाँ का रहने वाला है, उसे कहाँ जाना है, इत्यादि। प्रश्नों का उत्तर सुनकर वह उस राहगीर को सारी बातें समझा देता था। मूले की स्मरण-शक्ति कमाल की थी। वर्षों की बानें उसे इस खूबी में याद थी जैसे वे कल ही घटी हों। फिर उसके कहने की शैली इतनी रोचक होती थी कि सुनने वाला मंत्र-मुग्ध सा सुनता रहता था।

गाँव की सीमा में जमना और नैना ने प्रवेश किया।

मूले की कुटिया के आगे में जैसे ही नैना गुजरी, वैसे ही मूले ने उसे धूर कर देखा। उसने नैना के पाँवों की पगरक्षी देख ली। उसे देखते ही वह रोप-भरे स्वर में बोला, "यह कौन रॉड है जो अपने माई-तों (माँ-बाप) को जूतों से मारती हुई आ रही है?"

जमना उसका तात्पर्य समझ गई। उसने झट से नैना को पगरक्षी खोलने के लिए कहा। नैना ने पगरक्षी खोलकर हाथ में ले ली। मूले के ध्यान मुख पर प्रसन्नता की रेखाएँ दीप्त हो उठी, मानो उसे ऐसा लगा जैसे हर आदमी बूढ़े का सम्मान करता है।

जमना ने मूले के हाथ जोड़े और उसके चरण-स्पर्श करने चाहे तभी मूला

चोंक कर बोला, “अरे यह क्या कर रहे हो बेटे, क्यों मेरे सिर पर पाप चढ़ा रहे हो ?”

“नहीं बाबा, आप बड़े हैं !”

“बड़ा हूँ, तभी तो मैंने तुम्हारी वही से अपना हक और सम्मान माँग लिया । लेकिन नीच जाति का होकर तुम से पाँव कैसे छुआ सकता हूँ ? बोलो, तुम्हें वहाँ जाना है ?” मूले के स्वर में सौहार्द्र टपक रहा था । उसकी घँसी-गहरी आँखों में स्नेह की प्रखरता एक अनोखी दीप्ति-सी प्रतीत हो रही थी ।

“हम परदेशी हैं बाबा !”

“यहाँ वो घड़ी विधाम करना चाहते हो ?”

“नहीं !”

“फिर ?”

“हम इस गाँव में सदा के लिए बसने आये हैं !”

“क्यों ?”

“मुझे मेरे बाप ने ताना देकर घर से निकाल दिया । अब मैं चाहता हूँ कि खुद अपने पाँवों पर खड़ा होऊँ । कुछ ऐसा काम करूँ जिससे वे यह समझें कि मैं एकदम निकम्मा नहीं हूँ ।” जमना ने हड़ता से सँभल-सँभल कर यह सब कहा ।

“बाप से झगड़ा कर आये हो ?”

“नहीं बाबा, उनसे पूछकर आया हूँ । चाहता हूँ कि उन्हें कुछ करके दिखाऊँ ।”

“आदमी साहसी हो । कुछ जरूर करोगे । तुम सीधे जमींदार के पास चले जाओ । इस गाँव के जमींदार ब्राह्मण हैं । बड़े ही नेक और दयालु । उनसे विनती करना, वे तुम्हारी विनती जरूर मान लेंगे ।”

“कहाँ है उनकी हवेली ?”

मूला हँस पड़ा । हँसता हुआ ही वह बोला, “बड़े भोले हो ! अरे भाई, जमींदार और साहूकार के मकान हर गाँव में दूर से ही मालूम हो जाते हैं । जो सबसे अच्छा मकान है, वह है जमींदार का और उससे छोटा है, वह है साहूकार का ।”

जमना ने उससे नमस्ते की । तभी मूला स्नेहसिक्त स्वर में बोला, “मुनो

बेटा, यदि हम गाँव में रहने का ह्मम मिल जाय तो हम गरीब को कमी-कमी दान देते रहना । मैं तुम दोनों को सच्चे मन से आशीर्वाद दूँगा ।”

“जस्तर-जस्तर !” जमना ने कहा और वे दोनों चल पड़े ।

मूले की कुटिया से एक बड़ा रास्ता और अन्य छोटी-छोटी पगडंडियाँ जाती थीं । ये पगडंडियाँ विभिन्न मोहल्लों में जाती थीं और मुख्य रास्ता जमींदार की हथेली की ।

वे दोनों दामोदर की हथेली के आगे पहुँचीं ।

हथेली के आगे एक नौकर कुछ कुत्तों को बाजरी की रोटियाँ खिला रहा था । जमना ने विनम्रता से तिर झुका कर उन नौकर से पूछा, “जमींदार साहब घर में हैं ?”

नौकर कुछ अहम्पादी एवं तनकी-सा दीप्त रहा था । उसने पहले-पहल जमना की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया, केवल निर्विकार भाव से कुत्तों को रोटियाँ खिलाता रहा । उसकी भाव-भंगिमा से स्पष्ट लक्षित हो रहा था कि उसे उनकी उपस्थिति का तनिक भी भान नहीं है ।

जमना ने अब अपनी गर्दन नीची कर ली । वह उस नौकर के सामने आकर बोली, “भाईजी, जमींदार साहब घर में हैं ?”

नौकर ने अर्ध भरी तीव्र दृष्टि से जमना की ओर देखा । जमना के तन-बदन में कपकपी धौड़ गई । उसे लगा कि यह नौकर अभी उसका रहस्य जान जापण, इसलिए उसने अपनी गर्दन नीची कर ली ।

नौकर ने कड़कते स्वर में कहा, “काम क्या है ?”

“काम उनसे ही है । तुम जाकर उनसे बोल दो कि दो परदेशी आये हैं ।”

“फिर बैठ जाओ ।”

वे दोनों बैठ गई ।

नौकर कुछ देर तक पूर्ववत् कुत्तों को रोटियाँ खिलाता रहा । फिर उठकर जमींदार की सूचना देने गया । दामोदर ने उन्हें बैठकखाने में बुलाया । जमना ने जैसे ही बैठकखाने में प्रवेश किया, वैसे ही दामोदर ने उसकी ओर बिना देखे ही कहा, “बैठ जाओ ।”

“कहाँ से आये हो ?”

“माधोपुर से ।” जमना ने झूठ बोला, क्योंकि वे दोनों साधूपुर की जमनानी ड्योढ़ी से भाग कर आई थीं ।

“क्यों ?”

“आपके गांव में बसने ।”

“क्यों ?”

“वहां गुजारा नहीं होता ।”

“यहाँ क्या करोगे ?”

“आपके राज में थोड़ी-सी जमीन लेकर खेती-बाड़ी करूँगा ।..... अन्नदाता, मैं अपने बाप को कुछ करके दिखाना चाहता हूँ ।” उसने एकते-एकते कहा ।

“तुम कुछ करना चाहते हो ?” जमींदार की दृष्टि बहुत तीखी हो गई । जमना सिर से पाँव तक सिहर उठा ।

दामोदर की आँखें डाक्टर की तरह जमना का मुआयना कर रही थी । जमना उनकी तेज नजर को नहीं सह सकी । उसका शरीर पसीना-पसीना हो गया ।

“तुम इतने दुबले क्यों हो ?”

“अन्नदाता मैं बीमार था । मुझे अपने गाँव की आबोहवा माफिक नहीं रहती ।”

“तुम्हारे शरीर में खून की कमी है ।”

जमना मौन रही ।

“तुम मुझे अपना हाथ दिखाओ, मैं तुम्हारी नाड़ी देखना चाहता हूँ ।”

जमना शंकाकुल हो उठी । उसने सहमते-सहमते अपना हाथ जमींदार के हाथ में दिया । जमींदार ने उसकी नाड़ी देखकर कहा, “कल से मैं तुम्हें दवा दूँगा ।.....अरे, तुम्हारे मूँछें नहीं हैं ?”

जमना ने गर्दन नीची कर ली ।

“समझा, पर चिन्ता न करो, हर रोज उस्तरा मुँह पर फेरा करो । सुनते है, उस्तरा फेरने से मूँछें थीर दाढ़ी निकल आती हैं ।”

“हम मियाँ बीबी यही रहना चाहते हैं । क्या हमें आपका हुनम मिलेना ?”

सुखद भविष्य की उज्ज्वल और मधुर कल्पनाओं में तरह तरह व्यस्त रहती। वे उम्र भर इसी तरह मियाँ-बीबी बन कर रहेंगी। जैसे उनके जीवन में किसी प्रकार का परिवर्तन ही नहीं आएगा। दोनों एक ही खाद पर सोती। स्त्री-मुख्य की तरह प्यार करती। गहरा और अदृष्ट प्रेम।

सबरे का समय है-
सूर्य देवता का आनांक झूमती हुई वालों पर पड़े रहा था। नैना इन दिनों अकेली थी। वह दिन-रात खेत में रहती थी। रात के भयानक सप्ताटे में वह कभी-कभी इतनी भयभीत हो जाती थी, जैसे वह थोड़ी देर में मर जायगी। तब वह उन्मादग्रस्त प्राणी की तरह उस पगडंडी की ओर दृष्टि जमाये खड़ी रहती थी जिस राह से जमना शहर गई थी।

तीसरे दिन उसका धैर्य जाता रह। वह अपने बच्चे को लेकर मूले के पास गई। उसके साथ गांव का एक लड़का था, क्योंकि मूला वह से सीधे बातचीत नहीं करना था। ऐसा करना वह उचित नहीं समझता था। नैना को देखकर मूले ने पूछा, "बेटा पूछ न, वह क्या कहती है?"

छोकरे ने कहा, "काकी कहती है कि वे शहर गये हुए हैं।"

"फिर कोई मुझे काम है?"

"काकी कहती है कि मुझे अकेली को खेत में डर लगता है।"

"डर लगता है?" हंस पड़ा मूला, "किसान की बेटा की इतना डरपोक नहीं होना चाहिए।" मूला भावुक हो गया।

"लेकिन मुझे.....।"

"अच्छा, आज रात मैं तुम्हारे खेत आ जाऊंगा। वह की रक्षा करना मेरा धर्म है!"

रात को मूला नैना को वीरतापूर्ण कहानियाँ सुनाया करता था। वह खेतों का पहरा देता था और रात की घोर निस्तब्धता में वह राजस्थान के दर्दिले और प्रभावशाली गीत गाया करता था। नैना पत्थर के चुन की तरह उसके कण्ठ-स्वर से निकले गीत सुना करती थी।

आखिर एक रात नैना ने अपना मौन तोड़ लिया। वह गम्भीर-स्वर में मुँह उघाड़ कर मूले के सामने बैठ गई। मूला विस्मित हो गया। चाँदनी की

उज्ज्वलता में उसने सर्वप्रथम नैना के सुन्दर मुख के दर्शन किये। मूले को ऐसा लगा कि एक नारी के समस्त गुण पूंजीभूत होकर उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में दीप्त हो उठे हैं। तभी उसके माँ-बाप ने उसका नाम 'नैना' रखा है। क्षण भर के लिए वह अपने बुढ़ापे का अहम् भूल गया। वह बाल-मुसल जिज्ञासा से नैना का देखता रहा। अग्रत्याशित वह चेता, बोला, "यह क्या बदतमीजी है ? मैं तुम्हारे समुर के बराबर हूँ !"

"नहीं !" नैना के स्वर में दृढ़ता थी।

"क्या कहती हो ?"

"आप मेरे पिता समान हैं। आज मैं आपकी बेटो हूँ।"

मूला थोड़ी देर चुप रहा।

"क्या बापू, तुम्हारा इस संसार में कोई नहीं है ?"

प्रश्न क्या था जैसे मूले के शान्त आन्तरिक सागर में तूफान उठ गया हो। वर्षों से छिपी वेदना सहस्र पटलों को चीर कर अंगारे की तरह भड़क उठी हो। वह दूर-दूर तक फैले खेतों को अनिमेष दृष्टि से देखता रहा, देखता रहा। करुणा उसके मुख पर स्पष्ट क्षलक रही थी। वह विचलित स्वर में बोला, "इस संसार में कौन किसी का होता है। आदमी सदा अकेला आता है और अकेला जाता है।"

"बहुत भारी धान वह दी आपने।"

"नहीं बेटो, ठीक कहता हूँ—अपने-पराये, नाते-रिस्ते क्या हैं, यह सब दुनियादारी हैं। असल में आदमी का कोई नहीं है। भाई-बन्धु, कुटुम्ब-कबीला, जोरू और मित्र, सब सुख के हिस्सेदार होते हैं। दुःख और आफत में उनकी नग्नता हमारे सामने आती है। तब लगता है—सब स्वार्थी हैं, छुदगर्ज हैं। तुमने पूछा कि मैं इस संसार में अकेला हूँ ? सचमुच मैं अकेला ही हूँ। मेरा कोई नहीं है। अगर कोई होता तो क्या मैं इस बीराने में ऐसी खामोश जिन्दगी बिताता ? कभी न कभी मेरी याद किसी को आती हो और लाख नाराज होने के बाद भी वह मेरे पास आता। लेकिन कौन आया है मेरे पास ? कोई भी नहीं ! इस सुनसान सीमा पर अकेला बैठा रहता हूँ—निरीह और ताचार; बेटो ! व्यर्थ की बातें करके मैं अपने मन को बहलाता हूँ, उम्र गुजारता हूँ।" कहकर वह चुप हो गया।

रात का सन्नाटा छाया रहा ।

नैना ने कहा, "फिर भी कौन है आका ?"

"कह दिया न, कोई नहीं ।"

"बापू ?"

"हठ करती हो—फिर सुनो—"

"मेरी उम्र इस समय ५५ वर्ष की है । आज से २० वर्ष पहले मैं महा-तजा भैंवरसिंह के गढ़ में काम करता था । मेरी अत्यन्त भोली-भाली बहू थी । भोली इतनी कि मैं कह नहीं सकता । एक बार उसने एक औरत के कहने पर मुझे कंकरो की सठ्ठी बना कर खिना दी । अब तुम्हीं बताओ कि इससे ज्यादा कौन भोली-भाली हो सकती है ? मुझे उसके भोलेपन पर अत्यन्त तरस आता था, इसलिए मैं उसकी अपने से अधिक देखभाल करता था ।

"एक दिन की बात है—भैंवरसिंह की एक छोटी रानी थी । वह अत्यन्त निर्दय प्रकृति की थी । बात-बात में वह अपने नौकर-चाकरों को पिटा देती थी । सारे गढ़ में उसका घोर आतंक था । यहाँ तक कि स्वयं महाराजा भी उससे मन ही मन डरते थे । इसका कारण यह था कि छोटी रानी पद्मंश्र करने में बड़ी ही चतुर थी । इसके साथ ही साथ वह रूपवती थी । शराब वह दिन भर पीती थी । शराब उसके जीवन का सास हिस्सा था । सवेरे वह अपने महल के शरोखे में बैठकर उड़ते हुए पक्षियों को गोली मारा करती थी । चील, कौवे और कबूतरों तक को मार देती थी । पता नहीं, उसे किसी की मौत में क्यों आनन्द आता था ! किसी जीव को सड़पते-छटपटाते देखकर उसे बहुत खुशी होती थी । तब उसके मुख पर क्रूर मुस्कान बिखर जाती थी और उसकी नजर में जल्लाद-सी चमक पैदा हो जाती थी । एक दिन की बात है—मेरी बहू उस शरोखे के नीचे झाड़ू निकाल रही थी । छोटी रानी हाथ में बन्दूक लिये साफ आकाश में उड़ते हुए पक्षियों को देख रही थी कि अप्रत्याशित उसने गोली दागी । पक्षी बच गया । छोटी रानी ने दूसरे पक्षी पर गोली दागी । वह भी बच गया । छोटी रानी का पारा गरम हो गया । उसने अपने दाँत भीच लिये । तभी एक कौवा उड़ता हुआ महल के ऊपर से गुजरा । उसने एक आँख बन्द करके निशाना मारा । निशाना धुक गया । रानी ने बन्दूक को पेंक कर कहा, 'हूँ तेरी की, आज सवेरे से एक भी शिकार नहीं ।'.....तभी

उसकी नजर मेरी पत्नी पर पड़ी। वस फिर क्या था, उसने बन्दूक तानकर उसी समय उसे निशाना बना दिया। हँसती-गाती जिन्दगी घरती पर तो गई।...बेटी क्या कहूँ, जब मुझे इसका पता चला, तब मैं अचेत हो गया। मैं भागा-भागा वहाँ गया, तब तक रानी के दो आदमियों ने उसकी लाश को भीतर ले लिया था और रानी ने उसे जलाने की आज्ञा दे दी थी। मैंने जाकर रानी के सामने प्रार्थना की। रानी ने मुझसे सान्त्वना व सहानुभूति का एक भी शब्द नहीं कहा, बल्कि उसने दो सौ रुपये निकाल कर दे दिये। वे नोट मेरे जखम पर नमक का काम कर गये। मैंने उन्हें रानी के चरणों में रखकर कहा, 'मैं यदि पैसों से इंसान का जीवन खरीदा जा सकता है तो घनवान कभी मरते ही नहीं। आपके इन रूपों से मेरी बहू क्या लौट आयेगी? मेरे दिल की आग ठण्डी हो जायेगी? मेरे दिल का घाव भर जायगा?'.....रानी मेरे उपदेशात्मक शब्दों को सुनकर चिहूँक उठी। उसके चेहरे पर जल्साद वाली भावनाएँ घमक उठी। वह कड़क कर बोली, 'इस नमक हराम को मेरे सामने से जाओ ले।'।

"मैं खुद ही चला आया। पर जाते-जाते मैंने उसे शाप दिया—'जीवन मे हर दिन नया रंग लेकर आता है। लेकिन कभी-कभी सुरंग बदरंग भी हो सकता है, तब हम गरीबों की आँखें आपको खैन नहीं लेने देंगी।'.....मैं इतना कह कर चला आया। फिर अपनी बहू की लाश के पास आया। उसके माथे में गोली लगी थी। उसकी आँखें बाहर निकल गई थी जिससे उसका चेहरा भयानक लग रहा था। नाक और मुँह से भी खून बह रहा था। मैं दहाड़ मारकर रो पड़ा। मेरा कलेजा मुँह को आ गया।.....तुम्हीं बताओ न बेटी, उसकी मौत कितनी दुःख भरी मौत थी। न कुछ अपना कहा और न मेरा सुना।' सहसा मूला खामोश हो गया। उसकी आँखों से अविरल अधु-आरा बह उठी। नैना का मन भी व्यथा में भर आया। वह चाँदनी में अपना मुँह फेरकर आँसू पोंछने लगी।

"जीवन जहर हो गया मेरा। मुझे सोते-जागते और उठते-बैठते उसी की याद आती थी। उसकी अधूरी इच्छाएँ और प्यासी चाहें मुझे सताने लगी। वह कहा करती थी—'भूला हमारे बच्चे होंगे। बच्चों के फिर बच्चे होंगे। हमें वे दोड़-दोड़कर पुकारेंगे। एक हँसता-गाता संसार होगा। सुख ही सुख।'।

किन्तु उसका सपना लोक-कथा की नायिका 'वालिन' की तरह टूटकर रह गया। कुछ दिन तक मैं बावरा-सा रहा। मेरा मन कहीं पर नहीं लगता था। मुझे ऐसा लगता है कि वह सहसा मेरे पास आ जायगी।" और उसकी आँखें स्थिर हो गयीं मानो वह कह रही थी—उसकी पदचाप और पायल की रनझन मेरे कर्ण-कुहरों में मधुर रस घोलती हुई मेरे समीप आयगी और मेरे अभाव से पीड़ित मानस को अनेक सुधियों से भर देगी। वह मुझे जीवन की महायात्रा में एकाकी नहीं छोड़ सकती। वह सम्पूर्ण रूप से मेरा साथ आखिरी साँस तक देगी।

.....मूसा को कभी-कभी ऐसा अहसास होता था जैसे वह मरी नहीं है, जीवित है। यहीं कहीं काम करने गई है। दिन डलते लौट आयगी। और वह सत्य से नितान्त परिचित होते हुए भी एक मिथ्या आशा में अपनी झोपड़ी के द्वार पर बैठा रहता था। रात हो जाती, तारे डलने लगते, तब वह दृढ़ हुए इन्सान की तरह झोपड़े में घुसता। न वह खाना खाता और न वह जल की एक बूंद अपने मुँह में डालता, निर्जीव-सा पड़ जाता।

"आप थुप क्यों हो गये?" नैना ने मूले का मोन तोड़ा।

"मुझे उसकी याद आ गई। सच येटी, उसको मेरे बीस वर्ष हो रहे हैं, पर क्यों नहीं दिल को विदवास होता कि वह सचमुच मर गई है? वह अब कभी लौटकर नहीं आयगी, लेकिन बार-बार आशंका होती है कि वह आयगी, वह जरूर आयगी।" वह अपने आप पर हँस पड़ा। उसकी आँखों में उस हँसी के साथ अध्रु झलक आये, "मैं भी कैसा पागल हूँ री, अब वह कैसे आ सकती है! उसे मैं अपने हाथों से जलाकर आया हूँ। इसके बाद मेरा वहाँ मन नहीं लगा। मैं खूब शराब पीने लगा। शराब के साथ अफीम भी खाने लगा। नतीजा यह निकला कि मेरे पास जितनी भी पूँजी थी, वह भी खरम हो गई। अपने-पराये हो गये। मुझे कोई भी आकर नहीं पूछता था। पैसों के बिना कोई किसी को नहीं पूछता। तब मेरा मन उछाट हो गया। एक दिन मैं वहाँ से बिना किसी को कहे रवाना हो गया। मुझे कोई ढूँढने नहीं आया, किसी ने मुझे पाने की चेष्टा नहीं की। उन्होंने भी सोचा होगा, 'चलो शराबी चला गया, अच्छा ही हुआ, जो कुछ इसकी जमीन होगी, अपनी हो जायगी।' फिर मैं भी पलट कर वहाँ नहीं गया। मुझे वहाँ लौट जाने में कोई दिलचस्पी दिखाई नहीं पड़ी। इस

गाँव में आ गया। इस गाँव में मुझे शान्ति और सन्तोष मिला। इसके जमींदार दामोदरजी बड़े भलेमानुस हैं। घमण्ड उन्हें छूआ तक नहीं है। मैंने उनके हुजूर में बिनती की। उन्होंने मुझे पहरेदार बना कर बिठा दिया। तब से मैं यहाँ बैठा हूँ। लोग यहाँ मेरी बड़ी इज्जत करते हैं। मेरे दुःख-दर्द में वे शामिल होते हैं। फिर भी मुझे एकान्त ही पसन्द है। मैं चाहता हूँ—जीवन के शेष दिन इस शोपड़ी में ही गुजार दूँ।”

बच्चा एकाएक जोर से रोया।

नैना हड़बड़ा उठी। उसने तुरन्त छोटी सी मधिया (छोटी खटिया) से अपने बेटे शिव को उठाया और उसे बहसाने लगी।

मूले को जम्हाई आने लगी थी, उसने अँगड़ाई लेकर कहा, “अच्छा बेटा, मैं सोता हूँ।”

नैना भी अपने पलंग पर सो गई।

सोते-सोते मूले ने कहा, “मेरी एक बात को ध्यान से सुनो, अपने बेटे को खूब पढ़ा-लिखाकर हुशियार करना।”

नैना चुप रही।

रात ढल रही थी।

×

×

×

सातवें दिन जमना लौट आई।

उसके हाथ में एक गट्ठर था। उस गट्ठर में नैना के लिये चूंदड़ी और बच्चे के लिए दो-चार घघरियाँ (फ्राक) थी तथा मूले के लिए एक गमछा और एक बगलबन्दी।

नैना मुँह चढ़ा कर भीतर बैठी थी। जमना ने उसे कई बार पुकारा, “शिव की माँ, ओ शिव की माँ !” पर नैना भीतर से बाहर नहीं आई। जमना

ने अब भीतर प्रवेश किया। नैना रुठी रानी सी मुंह फुलाये बैठी थी। जमना ने उसके गाल को पकड़ कर खीचा और कहा, “पति शहर से आया है और तू मुंह फुना कर बैठी है ! क्या उसकी आवभगत ऐसे की जाती है ?”

“मुझसे न बोलिए।”

“क्यों ?”

“मुझे अकेली छोड़ कर चले गये। जानते हो, जाने के बाद मुझे किन-किन आफतों का सामना करना पड़ा। रात को अकेली खेत में सोती थी। छोटा-सा फूँन जैसा बच्चा, क्या पता साँप-विच्छू काट जाये तो !” उसकी नजर जमना पर जम गई।

जमना ने उसे अपनी बाँहों में भर कर घूम लिया, “अच्छा बाबा, मुझे माफ़ कर दे, आइन्दा सोच-समझ कर बाहर जाऊँगा।”

“छोड़ न !” उसने कृत्रिम श्लोष से कहा, “मूला न होता तो मैं जिन्दा नहीं मिलती।”

“तभी मैं उसके लिए गमछा और बगलबन्दी लाया हूँ।”

“सच ?”

“हाँ !”

इसके बाद जमना स्नान आदि करने भीतर चली गई।

दोपहर हुई।

मूला अपनी झोंपड़ी में बैठा हुआ ऊँध रहा था। जमना दरवाजे के आगे खड़ी हो गई।

जमना को देखकर वह चौका, फिर हँस कर बोला, “कब आये बेटे ?”

“आज मोर को।”

“सब ठीक है न ? हाँ, वहाँ को अकेले छोड़ कर मत जाया करो। अकेले उसे खतरा रहता है। फिर सुम जानते ही हो कि यह गाँव एक ब्राह्मण का है और ब्राह्मण के सुखी गाँव पर कुछ राजपूत डाकू नजर गढ़ाये बैठे हैं। जाने कब वे इस पर हमला बोल दें !”

“भाग्य का लिखा तो काका मिटेगा नहीं।”

“भाग्य के भरोसे बैठ कर आदमी को कर्महीन भी नहीं बनना चाहिए।”

जमना ने सोचा—यह भंगी भंगी नहीं, अवश्य पिछले जन्म में कोई पंडित

रहा होगा। वह मुस्कराकर बोली, “सो काका, तुम्हारे लिए शहर से सामा है।” जमना ने इतना कहकर वह गमछा और बगतबन्दी मूले के बागे रख दी।

मूना कुछ क्षण तक उन दोनों वस्त्रों को देखता रहा। उसकी आँखें छन-छला आईं, मानो उसे वर्षों के उपरान्त पहली बार कोई अपना मिला हो। उसके अंग-अंग में एक विचित्र स्फूर्ति का संचार हो उठा। उसके हाथ, जिनमें वे वस्त्र थे, काँप उठे। वह मौन-चिर दृष्टि से जमना को देखता रहा। उसकी सजल गहरी आँखों में अतीव अनुराग था, मानो उसकी आत्मा की सहस्र ध्वनियाँ मूक समवेत स्वर में उसे आशीष दे रही हो। वह भावावेश में आगे बढ़ा। उसने चाहा कि वह जमना को अपनी याँहीं में भर ले, किन्तु संस्कारों ने उसे रोक दिया। आखिर वह हरिजन है! वह क्यों इसे स्पर्श करके अपने परलोक को बिगाड़े! यम, उसके मुँह से इतना ही निकला, “तुम हजार बरस जिओ।”

“नहीं काका, इतना जी कर क्या कहूँगा? जितना अधिक जीऊँगा, उतने अधिक कष्ट झेलूँगा।” जमना के चेहरे पर मुस्कान नाच उठी।

“जीने से कायर धबराते हैं। देखो, मेरे जीने में क्या सार है? न उद्देश्य और न कारण! फिर भी आत्महत्या नहीं करता। सोचता हूँ, यहाँ बैठकर राहगीरों को सही रास्ता बता दूँ, यह भी ठीक है, कुछ पुण्य ही होता है।”

जमना को सहसा अपना अतीत याद आ गया। वह झोंपड़ी से बाहर निकल कर एक वृक्ष के नीचे खड़ी हो गई। जनानी ड्योड़ी में जब वह पहले-पहल आई थी और अपने आपको रानी समझती थी, यह उन्हीं दिनों की बात है। तब वह एक परदेशी लड़की से मिली थी। वह शिक्षित थी और अत्यन्त भावुक मनोवृत्ति की थी। एक दिन उसने बेचारी एक घा घरेबानी लड़की को डाँट दिया था। उसकी डाँटने पर वह लड़की अपने मनोद्वेग नहीं रोक सकी। वह बोली, “बहन, मेरा नाम प्रतिभा है। मैं भी तुम्हारी तरह एक कुटनी के चक्कर में पड़कर यहाँ आ गई थी। गरीबी से सीधी महल की मालकिन बनाना चाहती थी। कुछ दिन तक मैं भी तुम्हारी तरह आकाश में उड़ती रही। अन्त में मुझे ठाकुर की जनानी ड्योड़ी में कैद होना पड़ा। इसलिए इस मोके पर सबको स्नेह दो, प्यार दो, सबकी आशीष और कल्याण लो ताकि तुम्हें जीवन गुजराने में उपेक्षा और दुत्कारें नहीं सहनी पड़ें। तब तक जब तुम उपेक्षित

कर हमारी तरह नरक की भयानक यंत्रणाएँ भोगो तो अन्य बदनमीव स्त्रियाँ तुम्हें महानुभूति दें। तुम्हें धोरज बँधाएँ।”.....इसके बाद जब उसके अच्छे दिन घटे गये, तब प्रतिभा जमना को अपनी अच्छी सहेली समझती थी। पाली समय मिलता था। प्रतिभा ने उसे पढ़ाया-लिखाया। जीवन और जगत के धारे में गूड़तम बातें बताईं। एक बार जमना ने उससे पूछा था, “तुम यहाँ से भाग क्यों नहीं जाती?”

“भाग कर जाऊँ कहीं?”

“अपने घर।”

“क्यों? क्या मैं घरवालों से पूछकर यहाँ आई थी? अपनी मर्जी से भागी थी और अब अपना सर्वस्व सुटा कर कहीं जाऊँ? समाज, धर्म और घर अब सभी मेरे लिए मिट गये हैं। मेरा वहाँ कोई नहीं है। जाऊँगी तो सब दुस्कार देंगे। कुलटा, छिनाल, बदजात—अब मेरे लिए यही विशेषण रह गये हैं। लेकिन अब अधिक जिन्दा भी नहीं रहना चाहती। उस कुटनी ‘तारा’ का इन्तजार है। जिस दिन वह यहाँ आ गई, उसी दिन मैं उसे जान से मार दूँगी और खुद मर जाऊँगी। बिना कारण जीवन को मूर्ख ही ढोते हैं, उससे प्रति-शोध लेने के बाद मेरे जीवन का कोई भी अर्थ नहीं रह जायगा।”

“लेकिन घुरे को घुरा देने से भगवान् नाराज हो जाते हैं।”

उसकी भूकुरियाँ तन गईं। उसकी आँखों में स्फुटिलग सी दीप्त हुई। वह चिढ़े हुए स्वर में बोली, “भगवान् धनवानों का होता है। अगर भगवान् होता तो इस मड़ाष में सड़ रही मानवी का हाहाकार और आर्त्तनाद सुनकर ‘द्रोपदी की कथा’ की पुनरावृत्ति नहीं कर देता? यहाँ एक पांचाली नहीं, सैकड़ों पांचालियाँ दानव दुःशासन के पंजों में तड़प रही हैं और मुक्त होने के लिए अनवरत अनुनय-अनुरोध कर रही हैं। लेकिन कहाँ है हमारा कान्हा? कहाँ है उसका सुदर्शनचक्र? कहाँ है उसकी गीता के न्याय-नीति का उद्घोष? लगता है कि किसी चतुर लेखक की यह सब अत्यन्त प्रभावशाली एवं सजीव कल्पनाएँ हैं जो निरन्तर प्रचार-प्रसार के कारण भूतिमन्त होकर हमारे सम्मुख खड़ी हो गई है, वना कोई भी शक्ति ऐसे जुलम को न देख सकती है और न सह सकती है।.....मुझे इहलोक-परलोक की चिन्ता नहीं। यदि तुम नरक में विश्वास करती हो तो मैं उसकी भयंकर यातनाएँ भी सहने को तैयार हूँ। मैं

समझूतों के दास्य दुःखों को भी मुक्तान के साथ सहन कर लूँगी। किन्तु तारा की बच्ची को जरूर जान में लाऊँगी।

जमना उसके दम हृद् संकल्प में आनंदित हो गई थी। जमना उसकी उनसे हुई ओलों के साथ को नहीं सह सकी। उमने इतना ही कहा, "मुझे तुम्हारे बातों ने डर भगता है। मैं ऐसा नहीं कर सकती।"

"मैं किसी को बाध्य थोड़े ही करती हूँ। मेरा प्रतिशोध में विश्वास है। समझौते की नीति मैं कतई पसन्द नहीं करती। मुझे ऐसा लगता है कि सन्झौता करने वाले इन्सान शायद मुख और सन्तोष पाते हैं और बाद में उन्हें अरुणत कष्ट-बनेस उठाना पड़ता है। भविष्य में उनके समझ वही समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं। पाप को बदलने के बजाय मिटाना ही ध्येयस्वरूप है। जमना, ये नाग हैं, जहरीले नाग; यदि हम एक-एक नाग को किसी भी दण्ड नीति से समाप्त कर दें तो हमारी सन्तानें बड़ा मुग पा सकती हैं।"

जमना ने तब उसके मर्म को समझने की बड़ी चेष्टा की थी, पर अब वह उसके अर्थों को समझ पा रही थी।

इसके लगभग एक माह बाद प्रतिभा ने तारा को गोली से उड़ा दिया और साथ में एक पहरेदार हिजड़े को। उस दिन जनानी ड्यूटी में भयानक मायूजी छा गई थी। बाद में खुद उसने गोली से आत्महत्या कर ली, लेकिन उसकी मौत जमना में दुस्साहस भर गई। गोली से फटी उसकी छाती को जमना ने देखा था। उसके चेहरे पर वही अप्रतिम साहस था। पराजय की रेखाएँ जग भी नहीं थी उसके मुख पर। जमना उसके लिए बहुत रोई थी। उसकी पेटो में कुछ पुस्तकें थी और कुछ पत्र जो उसने किसी सहिन के नाम पर लिखे थे। उन पत्रों में भाषिकता और नारी का आर्त्त शब्द-शब्द में भरा था। नारी जीवन के आमूलचूल परिवर्तन का उसमें घोष था। उसमें विद्रोहिणी नारी को प्रभावशाली शैली में लिखे कुछ पत्र थे। ठाकुर ने उन पत्रों को तुरन्त जला दिया और पहरेदार को आज्ञा दी कि इन पुस्तकों को, जिनमें स्वतन्त्रता की बु आती है, किसी जंगल में गाड़ने के लिए भेज दिया जाय।

उसी दिन जमना ने जनानी ड्यूटी से भागने का निश्चय किया था।

नेना उसे मिल गई थी।

महल में होली का उत्सव था।

ठाकुर व अन्य रहने वाले 'कसूम्बे' में मस्त थे। ढोलनियों के नृत्य व गीत हो रहे थे। महल के पीछे के भाग में सन्नाटा था। नैना और जमना इस दिन के लिए पहले से ही तैयारियाँ करे बैठी थीं। जैसे ही सभी नाचने-गाने में निमग्न हुए, इन दोनों ने एक हिजड़े पहरेदार को रुपये दिये और भाग चली।.....

"जमनू ?"

जमना मूले का स्वर सुनकर चौंक पड़ी। उसे भी ध्यान नहीं रहा कि वह विचारों में निमग्न इतनी देर से खड़ी है।

"बया है काका ?"

"वहाँ खड़ा-खड़ा क्या कर रहा है ?"

"यूँ ही विचारने लगा।"

"क्या ?"

"यही की आदमी को उद्देश्यहीन होकर नहीं जीना चाहिए। तुम्हें भी कुछ ध्येय बना लेना चाहिए।"

"क्या बनाऊँ ?"

"यह जगह सूखी पड़ी है। यहाँ चारों ओर के आदमी आकर विध्याम करते हैं। तुम यहाँ छोटी-सी बगिया लगा दो। कुछ पेड़ लगा दो। उन्हें पोसो और पालो ताकि यके-माँदे यात्री आकर दो घड़ी सुस्ता लें।"

"ठीक कहते हो बेटा, ये काम हो जायगा तो सचमुच मैं मरने के बारे में सोचूँगा नहीं।" फिर उसके चेहरे पर कोमलता छा गई। वह एक लम्बी साँस लेकर बोला, "तुम्हें भगवान पहले भेज देता तो कितना अच्छा होता।"

जमना निश्चर रही।

"दिल से कह रहा हूँ कि तुम कुछ पहले आ जाते तो मैं आज तक निकम्मा नहीं बैठता।"

"अच्छा चलूँ काका ?"

"चलने के लिए मैं तुम्हें नहीं कह सकता।"

"लेकिन कपड़े कल पहन लेना !"

"जरूर !"

"मैं आऊँगा, तुम्हें देखने।"

“वया इन कपड़ों में ?

“हाँ !”

जमना चली गई ।

×

×

×

७

...

जमना जब लौटी तब नैना भोजन बना चुकी थी । वह बच्चे को लेकर झोपड़ी के द्वार पर खड़ी थी । जमना को देखते ही वह बोली, “जहाँ जाते हो, वहाँ मुँह लटका कर बैठ जाते हो, पोछे की फिकर भी नहीं रखते ?”

जमना हँस पड़ी । अपने सिर का साफा नैना के हाथ में देती हुई वह सापरवाही से बोली, “फिकर न होती तो क्या मैं इतनी जल्दी लौट आता !”

“जरा सूरज की ओर देखना तो !”

“यही बजा होगा ग्यारह-बारह ।”

“बारह !” जीभ निकाल कर नैना बोली । जमना ने उसे बाँहों में भर कर कहा, “मुझे ऐसा लगता है कि तू पिछले जन्म में मेरी बहू थी । काश, मैं इस जन्म में भी तेरा मर्द ही होता ।”

“अब कौन से मर्द से कम हो ? केवल मूँछों की जखुरत है । बातचीत का सलीका, डाँट-डपट ठीक मर्दों जैसी ही है ।”

“लेकिन कभी-कभी मुझे डर लगता है । बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है । सदा भय बना रहता कि कहीं भेद न खुल जाय ।”

नैना ने कहा, “डर को फेंक आओ खाई में, आओ पहले खाना खा लो ।”

तब दोनों खाना खाने बैठे ।

बच्चा समीप सोया हुआ था ।

कीर लेते-लेते जमना बोली, “एक बात बताऊँ तुम्हें नैना !”

“क्या ?”

“आजकल अपने ठाकुर की पाँचों जंगली धी में हैं ।”

“कैसे ?”

“उसका बड़ा भाई खेतसिंह महाराज बन गया है । उसको भँवरसिंह ने गोद ले लिया है ।”

“तू नहीं समझती जमना, जैसे साँपनाथ वैसे नागनाथ !”

यह बात वही पर समाप्त हो गई ।

जैना ने कुछ देर के बाद मौन तोड़ा, “जमींदार साहब की बेटी का विवाह है । परम्परा से उसका सारा खर्च हमें ही देना पड़ेगा, पर जमींदार साहब हम किसानों से आधा ही लेंगे । इसलिए हमें भी उन्हें ५० रुपये देने हैं । साहूकार का कर्ज देने के बाद मेरे पास कुल ३० रुपये बचे हैं, २० रुपयों की ओर जरूरत है । क्या तुम जाकर कुछ रुपया साहूकार से फिर नहीं ला सकते हो ?”

“ला सकता हूँ ।”

“लाने से बेहतर यही है कि तुम एक बार जाकर जमींदार साहब से विनती करो । वे हमें नया जान कर माफ़ कर देंगे ।”

“फिर मैं कब जाऊँ ?”

“कल सवेरे चले जाना ।”

दूसरे दिन ही जमना जमींदार के घर जा पहुँची । जमींदार अवंता-बन्दना में व्यस्त था । उसका नौकर उसी जगह पर बैठा कुत्तों को रोटियाँ खिला रहा था । जमना ने जाकर राम-राम की । नौकर ने कोई उत्तर नहीं दिया ।

जमना ने जोर से कहा, “राम-राम ठाकरा !”

नौकर ने निगाहें उठा कर उसकी ओर देखा ।

“ठाकरा आपके राज्य में हमारी सुनवाई नहीं हो रही क्या ?”

ठाकरे के चहरे पर दम्भ नाच उठा ।

“हाँ ठाकरा, जमींदार साहब से मिलना चाहता हूँ ।”

नौकर ने जो जाति का राजपूत था, जिसे ‘ठाकुर सा’ सुनने में अत्यन्त गौरव का अनुभव होता था, जमना को झिड़कते हुए कहा, “तू सवेरे-सवेरे

क्यों आता है? तेरा मुँह देखने पर मुझे सारे दिन लुगाइयाँ-ही-लुगाइयाँ मिलती हैं। क्या मूरत पाई है? एक बच्चे के बाप हो गये, पर न दाढ़ी है और न मूँछ। भगवान से मैं हर घड़ी यही प्रार्थना करता हूँ कि वे तेरे लड़के को तुझे पर न करें।”

“ठाकुर सा ईश्वर पर किसी का क्या अधिकार हो सकता है?”

“हाँ भाई, ठीक कहते हो। नहीं तो क्या मैं इस ब्राह्मण के यहाँ नौकरी करता!” ठाकुर सा सुनते ही वह पिघल गया।

“ठाकुर सा, ईश्वर जो भी करता है, अच्छा ही करता है।.....क्या जमींदार सा घर में है?”

“हैं और पूजा कर रहे हैं।”

“जरा मेरे आने को खबर पहुँचा दीजिए।”

“पहुँचाता हूँ।”

नौकर चला गया और चन्द ही क्षणों में वापस लौट कर बोला, “तुम्हें बैठकखाने में बैठने के लिए जमींदार साहब ने कहा है।”

“जो हुक्म ठाकुर सा!”

शायद नौकर जमना के कथन का मर्म समझ गया हो, इसलिए उसके चेहरे पर क्षण भर के लिए कठोरता आई, पर उसने उस कठोरता को मन ही मन दबा लिया। वह गम्भीर मुद्रा में हवेली में चला गया।

जमना दामोदर की प्रतीक्षा करती रही। लगभग आधा घण्टे के बाद दामोदर ने बैठकखाने में प्रवेश किया।

जमना ने उसके चरण-स्पर्श किये।

दामोदर ने उसे आशीर्वाद दिया।

“क्या बात है बेटा?” स्नेह से पूछा दामोदर ने।

“एक प्रार्थना लेकर आया हूँ।”

“क्या?”

“मेरे पास आजकल रुपये नहीं हैं। कुछ कर्ज था, उसको देने के बाद मेरे पास कुल तीस रुपये बचते हैं। मैं चाहता हूँ कि आप मुझसे तीस रुपये लें। वैसे आपकी बेटी मेरी बहिन के समान है। बहिन को जितना भी दूँ

थोड़ा है, पर मजबूरी मेरे सामने है। साहूकार ब्याज में कमर तोड़ देता है।”

दामोदर ने क्षण भर जमना के चेहरे के भावों को पढ़ा, फिर मधुर स्वर में वह बोला, “मैं तुम्हारी मजबूरी जानता हूँ, मैं मुनीमजी को कह दूँगा कि वह तुमसे तीस रुपये ही ले लें।.....और हाँ, आजकल खेती का क्या हाल-चाल है?”

“सब आपकी दया है। इस बार मैं समझता हूँ कि कच्चा मकान बना ही पूँगा।”

“भगवान सब शुभ ही करेगा।” कह कर जमींदार भीतर चला गया।

जमना ईश्वर को दुआएँ देती हुई मूले के पास गई। मूले ने शोंपड़ी के आगे बीस-पच्चीस मटकियों का ढेर लगा रखा था। आज उसने जमना का गमछा और बगलबन्दी पहन रखे थे। सदा की अपेक्षा आज वह बड़ा ही प्रसन्न दीख रहा था। वह एक फावड़ा और एक कुदाल ले आया था।

जमना को देखते ही उसकी स्थिति उस छोटे बालक की तरह हो गई जिसकी बर्पागठ हो और वह पहले-पहल नये वस्त्र पहन कर अपने बुजुर्गों के समक्ष खड़ा होता हो। मूले की दृष्टि जमीन की ओर गड़ गई।

“काका, आज तुम पहचाने भी नहीं जा रहे हो !”

“आज मेरे बेटे ने मुझे नये कपड़े पहनाये हैं न !”

“और इन मटकियों का क्या करोगे ?”

“इनमें पानी भर कर रखूँगा। कल शाम को मैं जमींदार साहब के पास गया था। मैंने उन्हें अपनी योजना बताई। वे बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने मुझे कहा कि हर सुबह-शाम हवेली का माली आकर तुम्हारे पेड़-पौधे देख जायगा और नये पेड़ भी लगा जायगा। संभालना काम तुम्हारा है।.....मैंने उनको आश्वासन दे दिया है।”

तभी भा गया मधला मोची। उदास और चिन्तातुर।

आकर मूले के पास चुपचाप बैठ गया।

“क्या बात है मधला ?” मूले ने उससे पूछा।

“काका, आज तुझे मेरी लाज रखनी होगी !”

“कहो बात क्या है ?” मूला गम्भीर हो गया।

“मुझे छोरी की समुरान जाना है । पास में पैसा नहीं है ।”

“पैसा यहाँ कहाँ रखा है !”

“मैं तुमसे पैसा माँगने नहीं आया हूँ !”

“फिर क्या चाहते हो ?”

मैं तुम्हारे कपड़े चाहता हूँ । मुझे नये कपड़े चाहिए । समघी के घर जाना है । सुना है—मेरी बेटी के बेटा हुआ है । यदि ठाठ-वाट से नहीं जाऊँगा तो समघी जरूर मेरा अपमान करेगा । वह बड़ा गरूर वाला है । उसके पास थोड़े पैसे हैं न !”

कह कर वह उत्तर की प्रतीक्षा में अपसक देखने लगा ।

अचानक मृत्यु के क्षणिक आघात से प्राणी का चेहरा पीला हो जाता है, ठीक उसी प्रकार की स्थिति मूले की हो गई । वह जड़वत् खड़ा-खड़ा दूरस्थ घोरी की कुतूहल भरी दृष्टि से देखता रहा मानो इसके पहले उसने उन घोरों को कभी देखा ही न हो । उसकी आँखों में शनैः-शनैः कुतूहल की जगह अतुल पर अवसाद छाता गया ।

जमना ने उस असह्य मीन को भंग किया, “यह कपड़े इनको मँने दिये हैं मघले ! मला किसी की भेंट को दूसरों को कैसे दिया जा सकता है ?”

“किसी चीज पर मेरा अधिकार नहीं है ?” मघला उठ कर जाने लगा ।

“ठहर मघले !” कह कर मूला झोंपड़ी के भीतर गया । उसने वापस अपने पुराने कपड़े पहने और उन नये वस्त्रों को उसने जमना के देखते-देखते मघले को दे दिया ।

जमना ने विरोध किया, “यह क्या किया काका ! क्या मैं इसीलिए यह कपड़े लाया था ?”

ऐंद्रिजालिक प्रकाश की तरह प्रभावशाली मुस्कान मूले के मूँछे होठों पर दोड़ी । वह आदेश देने वाले साधुजों की भाँति बोला, “दान की हुई चीज पर दाता का कोई अधिकार नहीं होता है ।”

तब वह उद्दिग्ग-सा जगल की ओर चला गया ।

×

×

×

साहूकार ने जमना के लिए एक नया संकट खड़ा कर दिया ।

बात यह हुई कि जमना ने कर्ज के जो रुपये साहूकार को दिये थे, उन्हें वह इन्कार कर गया और उसने इसकी शिकायत जमींदार को कर दी । जमींदार ने अपने आदमी को भेजा । जमना वहाँ गई । जमींदार अपनी बैठक खाने में बैठा था । उसके हाथ में गोमुखी थी । उसके अघर अभ्यनार्थ तड़प रहे थे । उसके पास साहूकार बैठा था, काला-कलूटा । दानवी क्रूरता उसकी बिच्छू सी आँखों में चमक रही थी । बड़े-बड़े साहूकारों के विपरीत एक बात उसमें थी कि उसका पेट मोटा नहीं था । उसके शरीर पर अधिक चर्बी नहीं थी ।

जमना पा-लागी करके बैठ गई ।

थोड़ी देर बाद जमींदार ने अपना हाथ गोमुखी से निकाला और पश्चात्ताप से आँखें मिचमिचा कर बोला, "जमनू, साहूकार क्या कह रहा है ?"

"क्या ?"

"कह रहा है कि जमनू ने मेरे कर्ज के रुपये नहीं दिये ।"

"हैं ?" जमना की आँखें विस्फारित हो गई ।

"यह ठीक नहीं है । न्यायसंगत भी नहीं । लिया है तो देना भी चाहिए ।"

जमना ने अपने आपको सयत करके कहा, "मैंने इसकी पाई-पाई चुकता कर दी है । यह झूठ बोलता है ।"

"मैं कसम खाकर कहता हूँ.....।"

जमना उग्र हो उठी, "सेठजी, कसम आपके लिए हसुवे के समान है । जब इच्छा हुई तब खा ली, पर हम गरीबों के लिए उसका बड़ा महत्व है । माई-बाप, मैं आपके धरणों की सोगन्ध खाकर कहता हूँ कि मैंने इसके सारे रुपये चुका दिये । आपको विश्वास न हो तो मेरे हाथ में भगवान की मूर्ति रख दीजिए ।"

"तुमने इससे रसीद क्यों नहीं ली ?"

"मैंने इससे रसीद माँगी थी, पर इसने मुझे नहीं दी । इसने मुझे कहा कि गाँव में बेईमान नहीं बसते ।"

“हूँ !” एक कठोर भावना जमींदार के चेहरे पर उत्पन्न हुई। उसकी गर्दन का हिलाना इतना यंत्रवत् था मानो वह कोई गम्भीर बात सोच रहा हो। साहूकार हवेली की मोटी दीवारों को निर्विकार भाव से देख रहा था। उसकी मगिया से ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उसे उन दोनों की बातों से कोई सरोकार नहीं है।

“लेकिन व्यापार, वह भी सूदखोर के साथ किया व्यापार, बड़ी सावधानी से करना चाहिए, क्योंकि इनका अपना कोई ईमान और धर्म नहीं होता। इनके जीवन का सत्य है—पैसा और इनकी आत्मा का सन्तुलन और सुख है पैसा।” वह क्षण भर के लिए चुप रहा और फिर आधुनिक नेता की तरह अपने शरीर को, विशेषतः ऊपर के हिस्से को, कड़ा करके धीरे-धीरे बोला, “इनका विश्वास अगर इनके अपने बेटे भी कर लें तो यह उनसे भी दो पैसे ठगने का प्रयास करेंगे।”

साहूकार चौंक कर आगे बढ़ा। उसने जमींदार के चरण स्पर्श किये और अत्यन्त नाटकीयता से बोला, “नहीं-नहीं माई-बाप, आप मुझे इतना नीच और ओछा मत समझिए, यदि आपको मुझ पर विश्वास नहीं आता है तो मैं इसके सारे रुपये छोड़ता हूँ।”

“क्यों ?”

“धर्म की बात है। मैं थोड़े से रुपयों के लिए आपके सामने बेईमान नहीं बन सकता।”

“प्रमाण के बिना मैं फैसला नहीं कर सकता।” जमींदार जमना की ओर उन्मुख हुआ, “तुम्हें इसके रुपये देने ही पड़ेंगे।”

जमना जोर से चिल्लाई, “दुहाई, अन्नदाता दुहाई !”

“फैसले के बाद दुहाई उचित नहीं लगती। क्या तुम्हें मेरे फैसले में सत्य नहीं दीखता ?”

“अन्नदाता !”

जमींदार ने जोर से पुकारा, “मुनीमजी !”

मुनीमजी हाथ जोड़ कर चुपचाप हज़ूर के दरवार में खड़े हो गये।

“थाई सा के विवाह मे साहूकार कितना रुपया दे रहा है !”

“धीरे धीरे !”

“इससे एक हजार रुपये वसूल करना ।”

साहूकार की मुद्रा ऐसी हो गई जैसे उसके सिर पर पहाड़ टूट पड़ा हो ।

वह गिड़गिड़ाता हुआ बोला, “मार्द-बाप, यह क्या ? मैं……!”

“साहूकार, तुमने मेरे गाँव को किसी अन्यायी का गाँव समझ रखा है, जहाँ न्याय थोर धर्म राठोड़ी छूती से होता है ! जहाँ अच्छे-दुरे की पहचान नहीं है ! जहाँ इन्सान की कीमत एक कीड़े-मकोड़े से अधिक नहीं है !”

साहूकार ने कुछ कहना चाहा, पर जमींदार ने उसे रोक दिया, “तुम फिर अपने आपको घोखा देने की चेष्टा कर रहे हो ! क्या मेरी आँखें सच्चे को नहीं पहचान सकती ? मैं सब जानता हूँ कि तुम……!”

साहूकार का मुँह रक्त-आदमी की तरह पीला पड़ गया ।

“तुम सौ-पचास रुपये बचा सकते हो, पर मैं तुमसे सात सौ रुपये वसूल करूँगा ।”

अब साहूकार के पाँवों के तले की जमीन खिसक गई ।

गिड़गिड़ा कर बोला, “मुझे क्षमा कर दोजिए अन्नदाता, मैं अब कभी भी झूठ नहीं बोलूँगा । मुझे जमनू ने रुपये दे दिये थे ।”

“आया रस्ते पर !”

साहूकार ने उनके पाँव पकड़ लिये ।

“जाओ जमनू ! भविष्य में कभी किसी सूदखोर का विश्वास न करना ।”

“ठीक है !” जमना चली आई ।

इसके उपरान्त साहूकार बहुत रोया, सब जमींदार ने उसके पाँच सौ रुपये छोड़ दिये ।

जमना जीवन के प्रति और सजग हो गई ।

×

×

×

“नैना !”

“.....” वह नहीं बोली ।

“मैं पूछता हूँ कि ओ शिव की माँ, तेरे मुँह में जबान है या नहीं ?”

नैना ने करवट लेकर जमना की ओर देखा । उसकी आँखों में प्यार था ।

“वाह री, तेरे नखरे भी पूगलगढ़ की पद्मिनी से कम नहीं हैं ! सवेरे के चार बज रहे हैं और तू भैंस की तरह पड़ी है । उठ, जल्दी से नहा-धोकर तैयार हो जा । मुझे शिव को मन्दिर लेकर जाना है ।”

“अरे ! मैं जिसर ही गई ।” उसने हाय लम्बे किये । जमना ने उसे बाँहों में भरा ।

“औरत का दिमाग ही ऐसा होता है । दिन की बात रात को याद नहीं रहती और रात को दिन को ।”

नैना ने उसे धुँधलके में प्यार भरी दृष्टि से देखती रही । उस दृष्टि में वैसा ही उलाहना था जैसा पति-पत्नी की मोठी झड़प पर होता है । नैना उसके गाल को खींच कर बोली, “अरे ! जा रे मर्द के बच्चे !”

जमना तन कर बैठ गई । उसने नैना को बाँहों में भर कर फिर घुम लिया । नैना ‘हाय-हाय’ करके भाग खड़ी हुई । जमना हँस कर बोली, “देखी मेरी मर्दानगी, मिजाजण गोरी का भागते पता ही नहीं लगा ।”

नैना अपना गाल कुछ देर तक मलती रही, फिर उसके पास आकर बोनी, “मैं भी तेरे साथ मन्दिर चलूंगी । शिव की दसवीं बर्यमाँठ है । जहर चलूंगी । मेरे न चलने से देवता नाराज हो जायेंगे ।”

“चली चलना । पत्नी के साथ ही पति की यात्रा सफल होती है ।”

फिर दोनों घर का काम-काज करने लगी ।

इन वर्षों में जमना और नैना ने अपने जीवन का निर्माण बहुत सुन्दर ढंग से कर लिया था । उनके पास १२ बीघा जमीन अपनी हो गयी थी । मोनड़ी की जगह कच्चा मकान था । सीन्दो सी रुपये पास रहते थे । शिव जमींदार द्वारा संचालित स्कूल में पढ़ता था । वह अत्यन्त सुशील और चरित्रवान लड़का था । नैना उसे हर ममय अच्छी बातें बनाया करती थी और जमना उसे मोर्च और त्याग की कथाएँ सुनाया करती थी । शिव जमना को काका कह कर पुकारता था । राण भर की देर हो जाती तो वह छेत की ओर दौड़ जाता और काका को पसीटना हुआ से जाता था कि माँ तुम्हारा इन्तजार कर रही है !

जमना उस बालक का आग्रह कभी नहीं टालती। उसके कहने भर की होती कि उसकी इच्छा को पूरा कर दिया जाता। शिव में नैना को कोमलता और दृढ़ता थी। उग्रता उसे छू तक नहीं गई थी। आज वह दस वर्ष का हो गया था। उसकी वर्षगांठ के उपलक्ष्य में मन्दिर में बड़ी पूजा का आयोजन था। नैना और जमना दोनों इसे सफल बनाने में संलग्न थीं। उन्होंने एक बालक की पूजा का सामान सजाया, एक रुपया घँट का रत्ता और चरस पड़ीं।

मन्दिर का कार्य पूरा करके जमना शिव को लेकर जमींदार के घर गई। प्रशस्त भोजन की दिप्ति के उपरान्त भी जमींदार के नेत्रों की ज्योति मद्धिम रह गई थी। हाथों में कम्पन सा आ गया था। आजकल उसकी आत्मा भगवान्-भजन में लवलीन रहती थी। वह गाँव के दरिद्रता-पीड़ित प्राणियों को धैर्य बँधाया करता था, येनकेन प्रकारेण मदद दिया करता था।

शिव ने जमींदार को साष्टांग प्रणाम किया।

जमींदार के अग्रतः से आशीर्वाचन प्रस्फुटित हुए, “जीते रहो बेटा, और अपने माँ-बाप के नाम को उजागर करो।”

शिव ने उठ कर जमींदार के कुलदेवता प्रलयंकर को नमस्कार किया। जमींदार ने पुजारी की भाँति शिव को भगवान् का चरणामृत पिलाया और प्रसाद खिलाने के साथ उसने एक बार पुनः उसके चिरायु होने की शुभकामना की।

वहाँ से जमना शिव को लेकर मूले के पास आई।

मूले की झोंपड़ी के समीप हरे-भरे वृक्ष लहलहा रहे थे। चतुर्दिक हरी-तिमा का साम्राज्य था। आजकल मूले का ध्यान सभी बातों से हट कर अपनी इस छोटी सी दुनिया को बसाने में केन्द्रीभूत हो गया था। सुबह से शाम तक वह इन वृक्षों की रक्षार्थ उद्यम किया करता था। वस्तुतः अब उसकी कल्पना सृष्टि में इस वगिया का स्वर्गीय रूप देखने का संकल्प था। सुन्दर से सुन्दरतम रूप में वह इसे बनाना चाहता था। पता नहीं, उसमें ऐसे सृजन की शक्ति कहाँ से आ गई थी। इस कार्य से जमींदार उससे प्रसन्न था, फलस्वरूप दोनों समय का भोजन उसे जमींदार के यहाँ से मिलता था।

जमना को देखकर वह विह्वल उठा। उसके श्रुतियोंदार चेहरे पर एक

ऐसी अलौकिक द्रिष्टि का आविर्भाव हुआ जो देखने वालों में भी आनन्द र संचार कर देती थी।

“जमनू ! मैंने तुम्हें अभी-अभी याद किया था। सच, तुम्हारी उम्र कम है। मरते समय मैं इस बगिया का स्वामी तुम्हें ही बना कर जाऊँगा।”

“अभी काका तू थोड़े ही मरने वाला है।”
शिव का तीव्र महीन स्वर बीच में ही गूँज उठा, “काका, राम-राम, मैं दस वर्ष का हो गया हूँ।

मूला का रोम-रोम खिल उठा। आत्मिक-स्नेह से बोला, “जीते रहो, दस हजार वर्ष के हो। तुम्हें मेरी उम्र लग जाय।” कहकर वह शिव को धूमने लिए आगे बढ़ा। किन्तु उसके चरण अज्ञात शक्ति से रुक गये। आहत मन की तीक्ष्ण व्यथा से वह मन ही मन चीख पड़ा, “ओ ! परमात्मा, मुझ पर क्या व्याय क्यों ?”

जमना उसके हृदय का भाव समझ गई। लेकिन किसी आन्तरिक क्रोध से वह विवश-सी खड़ी रही। फिर भी उसके संस्कारों से आक्रान्त मन में हल-सी मच गई, मानो वह अपने आप से प्रश्न कर रही है कि आखिर ये देवता रूपी हरिजन इस बच्चे का प्यार क्यों नहीं कर सकता ?

शिव काका की बगिया में मुक्त पवन-सा विचरण कर रहा था। जमना के मानस-पटल पर एक चित्र नाच उठा। मूल के शब्द थे “मेरी बहू चाहती थी, हमारे बच्चे होंगे, एक सुखी परिवार।” आह ! के अन्तस् में कितना पीड़ित हाहाकार है !

“जच्छा काका, मैं चलूँ ?”

“जाओ घेठा, पर मुझे वचन दो, मेरी मौत के बाद तुम इस बगिया संभाल लोगे, इसे उजड़ने नहीं दोगे। तुम विश्वास रखो कि मौत के बाद भी तुम लोगों को इस बगिया में मिलूँगा। मेरी आत्मा यहाँ से बभी नहीं सवती।”

जमना धन पट्टी।

काका अतृप्त-मा देपता रहा।

शिव बूद-बूद कर चल रहा था।

उस दिन खेत से लौटते-लौटते नैना को बुखार आ गया। सर्दी लग कर पंख-पांख इतने जोर से दुखने और टूटने लगे कि शिव धबरा गया। नैना 'ओय, हाय राम' चिल्ला रही थी। उसकी आँखें लाल सुख हो रही थी। वह बार-बार वेदना भरे स्वर में कह रही थी—“मेरे पाँव टूट रहे हैं, मेरे पाँव टूट कर खल रहे हैं।”

शिव कभी उसके पाँव दबाता और कभी सिर। कभी वह नैना को पानी से धो-धार घूँट पिलाता। अन्त में वह मूले के पास भागा और काका को बुलाने का अनुरोध किया। मूला लकड़ी लेकर खेत की ओर चला। शिव वापस आकर माँ के पास बैठ गया। वह परेशान और चिन्तित था। उसकी नजर बार-बार द्वार की ओर उठ जाती थी।

अप्रत्याशित गाँव में कोलाहल उभरा। कोलाहल दूरागत था।

सभी नैना का पड़ीसी छगन आया। वह धबराया हुआ-सा प्रतीत होत था। उसने आते ही अचेतावस्था में पड़ी नैना को कहा, “गजब हो गया नैना बहिन !” नैना ने उसकी बात का कोई जवाब नहीं दिया। वह केवल अभिप्राय भरी दृष्टि से छगन को देखती रही।

“गाँव में खून हो गया। केवलचन्द ब्राह्मण ने ठाकुर हरीसिंह के बेटे प्रीतमसिंह का खून कर दिया। भरे बाजार में हूसिये से उसकी गर्दन घड़ से अलग कर दी।”

शिव की आँखों में जिज्ञासा भरा भय नाच उठा।

“मैं वहीं खड़ा था। बात करते-करते वे आपस में गर्म हो गये और गर्म होकर गाली-गलौज करने लगे। प्रीतम ने केवल धक्का दिया। केवल ने उसे आगाह किया। उसे बार-बार समझाता रहा, पर प्रीतम मान ही नहीं रहा था। केवल को गुस्सा आ गया। तुम जानती ही हो कि शरीर का वह पहलवान है ही। एक ही चोट में प्रीतम का काम तमाम कर दिया। लेकिन अब बात बिगड़ती नजर आ रही है। प्रीतम के नाना महाराजा खेतसिंह के दरबार में पाकर हैं। यह भी सुनने में आया है कि हरिसिंह अपने समुर से मदद माँग कर

केवल की फाँसी की सजा दिलायेगा ।" छगन अपने आप कह कर प्रकट करने लगा ।

नैना बुखार में तड़प रही थी । उसने छगन की बात अच्छी तरह सुनी । शिथ अवश्य ध्यानपूर्वक उसकी बात सुन रहा था । जब उसने का कपन का कोई प्रभाव नहीं देखा तब चलता बना ।

मूला जमना को लेकर आ गया । मूले ने जमना से परामर्श भरे स्वर कहा, "तुम तांत्रिक जीवानन्द के पास चले जाओ । वह तुम्हें 'एक पैसा' का देगा, इसे पहना देना । सियोदाऊ (सर्दों लगकर आने वाला बुखार) मथ से ऐसे हवा-सा उड़ता है जैसे तोप के गोले के सामने से आदमी !"

"मैं उसके पास जाता हूँ, तुम यही रहना काका !"

"हाँ-हाँ !"

"शिथ बेटा, माँ को जो जरूरत हो, वह उसे देते रहना ।"

नैन बार-बार पानी माँग रही थी ।

छगन मूले को देख कर अपने घर से वापस लौट आया था ।

मूले से दूर बैठता हुआ वह बोला, "ऐसी घटना मैंने जीवन भर देखी । बात-बात में खून-खराबी कर देना शैतनों का ही काम हो सकता है ।

मूले ने छगन की बात का कोई उत्तर नहीं दिया ।

"मूलिया, तूने अपनी आँखों से किसी की गर्दन को घड़ से अलग होते देखी है ?" छगन के स्वर में वड़प्पन था ।

"नहीं !" मूले ने गर्दन हिला दी ।

"मैंने आज अपनी जन्मपत्री में झूठा मार ही लिया । सच मूलिया, मैंने प्रीतम को पहले नीचे पटकवा, बाद में एक ही झटके में गर्दन को इस अलग किया जैसे मूली को उसके पत्तों से ।"


"मूर्ख आदमियों के काम हैं यह सब !"

"महामूर्खों के !"

"नहीं तो उसे किसी की जिन्दगी लेने का क्या अधिकार था ? जब किसी को जिन्दगी दे नहीं सकते, फिर हमें लेने का क्या अधिकार है ?" ने कहा ।

वे दोनों बातचीत कर रहे थे, तभी आ गई जमना ।

जमना के हाथ में लौ लकड़ में बंधा एक पसा था। उसने उस पसे पर
पूँ की ओर नैना को पहना दिया। — — — — —
नैना 'हाय-हाय' कर रही थी।

बात को दोहरा रहा था 
मूला उठा और चलता हुआ बोला, 'जमनू बेटा, 'खंगर मेरी जेहरत' पड़े'
तो बुला लेना। अभी मैं बाजार की ओर जा रहा हूँ।'

मूला बाजार की ओर गया।

वहाँ बड़ी भीड़ थी।

स्वयं जमींदार उपस्थित था। उसने खून से लथपथ जमीन को साफ करवा
दिया था। साथ ही अपने निजी आदमियों की संगीनों की छाया में प्रीतम की
लाश को जलाने का हुक्म दे दिया था। अपने विश्वस्त आदमियों को उसने
गाँव के चारों ओर तैनात कर दिया था कि कोई भी राजपूत गाँव से बाहर न
जाने पाये, जाने वाले को तुरन्त गिरफ्तार कर लिया जाय।

हरिसिंह और केवल के घरों के आगे भी जमींदार के आदमी तैनात थे।
हरिसिंह अपने बेटे की लाश को महाराजा के सम्मुख पेश करना चाहता था,
पर जमींदार ने इसकी आज्ञा नहीं दी। जमींदार ने केवल इतना ही कहा "यह
मेरे गाँव का मामला है, इसलिए इसे मैं ही सुलझाऊँगा।" तब हरिसिंह ने उस
पर सीधा लांछन लगाया कि "मैं अपना न्याय आपसे नहीं करवाना चाहता,
क्योंकि आप ब्राह्मण हैं, इसलिए आप ब्राह्मण का पक्ष लेंगे।" इससे जमींदार
हरिसिंह से रुष्ट हो गया और उसने उसके प्रति कड़ा रख लेने की प्रतिज्ञा कर
ली।

दोपहर तक यह मामला ठण्डा-सा पड़ गया।

लाश जला दी गई।

उसके दो सप्ताह बाद जब शिव को शहर के स्कूल में दाखिल कराके
जमना लौटी तब उसी रात एक भयानक घटना घटी। केवल का पता नहीं
था। हरिसिंह को जमींदार ने आश्वासन दिया था कि यदि यह शान्त रहेगा
तो वह 'केवल' को मृत्यु का ही दण्ड देगा, किन्तु केवल कहीं भाग गया था।
उसका पता नहीं लग रहा था। हरिसिंह प्रतिशोध की आग में जल रहा था।
उसने किसी तरह अपने ससुर को यह खबर पहुँचा दी। जाति-गौरव-मदान्ध

उसके समुर और दस सालों ने बदला लेने की ठान ली। बदला कब और कं लिया जायगा, इसकी खबर किसी को नहीं लगी।

तारो भरी रात थी।

उसके घुंघलके अन्धेरे में नैना अपने पुत्र की मधुर स्मृति में डूबे हुई थी उसकी बिना घर में शून्यता छा गई थी। रह-रह कर उसे ध्यान आता था उसका शिव मही कही खेन रहा है।

आखिर उसने जमना से पूछा, “जब तूने उसे अकेले को छोड़ा तो वह रो होगा ?”

“हां, उसकी आंखें आंमुओं से भर आई थीं।”

“अब वह कब वापस आयेगा ?”

“एक साल के बाद।”

“इतनी जल्दी ?”

“लेकिन वह दो महीनों के लिए ही आयेगा। शहर के मदरसों (स्कूलों) में गमियों की छुट्टियां होती हैं। समझी !”

“नहीं, नहीं, वह जब मेरे पास सदा-सदा के लिए कब आयेगा ?”

“छः साल बाद, छः साल में वह दसवीं पास कर लेगा। दसवीं पास कर के बाद वह हाकिम बन सकता है।”

“सच ?”

“हां !”

“लेकिन छः वर्ष में मैं उसके लिए रोती-रोती थक जाऊंगी।”

“भोरतो की तरह हिम्मत न तोड़। बड़े दिनों के बिछोह के बाद मुझे कितना मिलेगा ? लोग तुझे हाकिम की मां कहेंगे।” जमना अकड़कर बोली।

“मेरा जी नहीं लगता है।”

“क्यों ?” कहकर जमना उसके पास आ गई। उसने नैना को बाहुओं में भर लिया। अत्यन्त प्रेमपूर्वक बोली, “मेरे होते हुए तेरा जी क्यों नहीं लगेगा ? अब मैं तेरे संग ही सोऊंगा। उसके होते हुए तेरे संग सोने में मुझे लज लगती थी।”

“अरे जा !”

“आज मैं अकेला नहीं सोऊंगा।”

यह बातचीत हाँ ही रही थी कि 'घाय-घाय' की आवाज सुनाई पड़ी। मन्नाटे में भयकर आवाज ने जमना और नैना के मन में भय उत्पन्न कर दिया। वे डर के मारे एक-दूसरे से लिपट गईं। तभी आवाज आई कि गाँव में डाकू आ गये हैं। सब चौकन्ने हो गये। जमना ने भी लाठी सँभाली।

नैना ने उसे रोका। उसने आगे बढ़ कर कहा, "कहाँ जाता है?"

"अपने घर के आगे।"

"नही, मैं तुझे नहीं जाने दूँगी।"

"क्यों?"

"कह दिया न!"

अँधेरे में गोलियाँ आग उगल रही थीं। लगभग पन्द्रह-बीस मिनट तक गोलियाँ चलती रही। इसके बाद जमादार संगीनों में लँस होकर आ गये। उन्होंने डाकुओं का सामना किया, डाकू भागे। वे पूरब की तरफ से आये थे और पश्चिम की ओर जमना के घर के आगे से भाये। वे निरन्तर गोलीमाँ चला रहे थे। अचानक एक गोली जमना के, जो द्वार के आगे खड़ी थी, आ कर लग गई। वह चीख कर गिर पड़ी। नैना उसकी चीख सुन कर आई। जमना के गोली गर्दन के पाम लगी थी। नैना ने झट से दीया जलाया। देखा जमना खून से लथपथ है। उसकी आँखें बाहर निकल आई हैं। उसके चेहरे पर भयानक पीलापन छा गया है।

नैना बिचाड़ पड़ी। उससे लिपट गई। बोली, "यह क्या हुआ, तू बाहर क्यों गई थी?"

जमना ने संकेत से उसे शान्त रहने को कहा। नैना के आँसू नहीं रुक रहे थे। उसने रोते-रोते पूछा, "क्या?"

"मैं मर रही हूँ, मरते हुए मैं शिव को नहीं देख सकी। पर तू वायदा कर कि तू शिव को ऐसा आदमी बनायेगी जो हम दोनों का नाम उजागर करेगा। तू उसे यह कभी न बताना कि मैं उसकी कोई नहीं लगती थी। मैं यह भी चाहती हूँ कि तू मूले को बुलाकर मुझे अभी की अभी जला दे। यह भेद प्रकट हो गया तो शिव मुझे अपना काका नहीं समझेगा। तब इस ससार ठा० ५

में मेरा अपना कोई नहीं होगा। ययन देती है न? योन.....
योन.....!"

जमना धन बगी।

जमींदार के आदमी हाथुओं का पीछा करते-करते आ गये थे। सरहद से ओर ये बढ़ रहे थे। उनके पीछे जमींदार छुद आ रहा था। जमींदार से देखते ही नैना उसके कदमों में लिपट गई। वह दहाक मार कर रो पड़ी। जमींदार उसके रोने का साह्य नहीं समझा। उसने नैना को उठाया और स्नेह में हाथ फेर कर पूछा, "गब कुशल-मंगल है न?"

नैना जमींदार का हाथ पकड़ कर लाई और जमना का निर्जीव शरीर दिखा दिया। दीये की हल्की लौ में जमना का विकृत मुख भयावह लग रहा था। रक्त की बूँदें बिसर गई थी। रून की एक सघु घारा उनके पाम से बह चली थी।

"यह सब कैसे हुआ?"

"इन्हे डाकू की गोली लग गई!"

"राम-राम!"

जमींदार नैना को एक किनारे खींच कर ले गया। वह अत्यन्त स्नेहित-पीड़ित स्वर में बोला, "जो हो गया, उसके लिए मैं तुमसे क्षमा चाहता हूँ, पर मैं चाहता हूँ कि इस लाश को अभी इसी वक्त जला दिया जाय। वर्राकि सवेरे महाराजा के आदमी जाँच-पड़ताल करने आयेंगे और अधिक खून-खराबी देख कर वे मेरे विरुद्ध कठोर कदम भी उठा सकते हैं।"

नैना ने विनीत-हँसे स्वर में कहा, "आपका हुक्म सिर आँखों पर।"

"फिर मैं अभी चार आदमी भेजता हूँ, वे सब प्रबन्ध कर देंगे।"

रात में पाँच मुँह जला दिये गये। जमना, केवल का बाप, माँ, भाई और उसकी पत्नी।

दरअसल वे हत्यारे डाकू नहीं थे, वे हरिसिंह के साले व समुर के नोकर थे। प्रतिशोध में उन्होंने केवल के परिवार को मार डाला। केवल के घर सिर्फ उसका आठ वर्ष का बच्चा बचा था। जमींदार बच्चे को अपने घर गया।

गनीमत यह हुई कि महाराजा तक यह रिपोर्ट नहीं जा सकी। नैना।

भी जमींदार ने प्रसन्न कर दिया। पर सातवें दिन महाराजा का एक हरकारा आया और उसने जमींदार को महाराजा के हज़ूर में पेश होने का हुक्म सुनाया। जमींदार को एक सोने की मोहर लेकर जाना पड़ा। वहाँ से जब वह लौटा, तब वह बहुत रोष में था। वह बार-बार हरिसिंह पर झुल्ला रहा था। महाराजा ने सारी घटना का उल्लेख करके कहा, “तुम्हें तो सोने की मोहरें देने पड़ेंगी अन्यथा हम तुम्हारी जमींदारी को जब्त कर देंगे।”

उन्होंने उस पर यह इल्जाम भी लगाया कि “इस परिवार की लतम कराने में तुम्हारा ही हाथ है।”

जमींदार बड़ा था ही। मन्तानहीन और भ्रान्त। उसने दूसरे ही दिन चुपके से अपने सारे जेवर और नगदी अपने भतीजे को देकर श्रद्धाघ्न भेज दिया। तब वह हरिसिंह के पास गया। उसने उसके समुर की मारी बेईमानी बखान की। उसे मालियाँ तक दे डाली। आदेश में उसने सम्मति का उल्लेख भी कर दिया। हरिसिंह को गुस्सा आ गया। उसने तत्काल कहा, “जमींदार साहब, मुझे टक्कर न लीजिए, केवल की तरह मैं आपकी सात पीढ़ी को भी समाप्त करा दूँगा। यहाँ राजपूतों का राज्य है।”

जमींदार तुरन्त समझ गया कि इस हत्याकाण्ड में किसका हाथ है।

लेकिन केवल धूप थोड़े ही बैठने वाला था। उसने ठीक बीस-पच्चीस दिन बाद हरिसिंह के घर के नौ सदस्यों को मार डाला और फिर उसके समुर के गाँव गया। पहली बन्दूक में केवल ने उसके समुर को उस लोक पहुँचा दिया। उसके बाद इधर सिर्फ अकेला केवल और उधर हरीसिंह के सारे सारे। दोनों ओर से बन्दूकों का खुलकर प्रयोग हुआ। अन्त में केवल उसके भैंसले सारे को मार कर वीर-गति को प्राप्त हो गया। परिणामस्वरूप महाराजा ने दामोदर की जमींदारी अपने दखल में कर ली और उसे राज्य से निकल जाने का आदेश दे दिया। जमींदार तुरन्त चला गया। उसने कोई विरोध नहीं किया। वह जमींदारी से बक चुका था, फिर उसके अपनी सन्तान भी नहीं थी।

×

×

×

नया प्रचण्डक महाराजा का छोई रिबेदार था। राजप्री सामन्त था। नाम था—उल्लाससिंह। उसने आते ही गाँव में साग के नये वानून बनाते शुरू किये। उसने गाँव के समस्त किसानों को एकत्रित करके यह घोषणा की—(१) जाजम खर्च

(२) कुँपगजी का कलेवा

(३) याईजी का हाथ

(४) कारज खर्च

(५) पट्टा मँग

(६) घुँवा पाँछ

(७) रोटबन्दी

(८) हलवेठिया

(९) ठाकुर साहब का नाई

(१०) सफाई खर्च

(११) रंगमहल का खर्च

—इतनी साग किसानों को हर वरस देनी पड़ेगी। इसके साथ उल्लास सिंह ने यह भी कठोर शब्दों में कहा, “मेरे खेत की जुताई और कटाई के समय हर घर से एक आदमी काम करने आयेगा। जो इन आज्ञाओं को नहीं मानेगा, उसके साथ कठोर व्यवहार किया जायेगा।”

इस नई घोषणा से ग्रामवासियों में हलचल मच गई। राजपूतों को ऐसा विश्वास था कि हमें इन साग-बाग से मुक्ति मिलेगी, पर उल्लाससिंह ने किसी का भी लिहाज नहीं रखा। चले जब राजपूत टोली उसके पास गई, तब वह बोला, “न्याय-अपना पराया कुछ भी नहीं देखता, मैं आपका ठाकुर हूँ और आप मेरी प्रजा। प्रजा सब बराबर है।” इससे राजपूत टोली में रोष की लहर दौड़ गई। किन्तु कुछ करना उनके बस के बाहर की बात ठहरी।

उल्लास ने मूले की बगिया को भी सहायता देनी बन्द कर दी। उसने एक दिन यह हुक्म जारी किया कि “इस बगिया का मालिक आज से वह

भंगी नहीं, मैं रहूँगा।" और सब उसके दो आदमियों ने आकर बेचारे मूले को उसकी बगिया से घबके मार कर बाहर निकाल दिया।

उस समय दोपहर थी।

मूला मिट्टी की टूटी मटकी से अपनी बगिया के पेड़ों को पानी दे रहा था। वह अत्यन्त प्रसन्न और खुश था। उसकी आँखों में अपने हाथ के लगाये वृक्षों को देखकर एक अलौकिक चमक उत्पन्न होती थी। लगता था, इस बगिया के विभिन्न हरे-भरे पेड़, उसके अपने घन-वृक्ष हों। वह धीरे-धीरे कोई लोक-गीत भी गुनगुना रहा था।

एकाएक उल्लासमिह के कारिन्दों ने जोर से उसे सलकारा।

मूला तुरन्त सिर झुका कर उन दोनों के सामने हाजिर हो गया।

"क्या है अन्तदाता?" उसने विनम्र शब्दों में कहा।

"आज तुझे इस बगिया को खाली करना होगा!"

जैसे बिजलियाँ गिर पड़ी हों मूले पर—ऐसी भगिमा हो गई उसकी।

"ठाकुर की आज्ञा है कि तू यहाँ नहीं रहेगा!"

"आखिर क्यों?"

"यह तू उनसे पूछना।"

"लेकिन मैं यहाँ से नहीं जाऊँगा।"

दोनों कारिन्दे उसके दृढ़ स्वर और निश्चय के भाव को देख कर सहम गये। सहसा उनका साहस नहीं हुआ कि वे उसकी ओर बढ़ें। हल्की जड़ता के बशीभूत वे उस अर्धभरी दृष्टि से निहारते रहे।

अचानक बड़ा कारिन्दा सावधान होकर कठोर स्वर में बोला, "तुझे यह जगह इसी घड़ी खाली करनी होगी, अन्यथा हमें लाठियों से काम लेना पड़ेगा।"

मूले ने इधर-उधर देखा जैसे उसे लग रहा था कि वह कोई स्वप्न देख रहा हो। भावावेश में उसके होठों पर हल्के उन्माद की हँसी बिखर गई, मानो यह स्वप्न अभी-अभी टूट जायगा और ये दो काल्पनिक यमदूत एकदम से गायब हो जायेंगे। जाग्रतावस्था में भी उसकी अर्ध-चेतना कह रही थी—
"कैसे विचित्र सपने आते हैं!"

"ओ बूढ़े, अपना बोरिया-बिस्तर मोल करेगा या लाठी को संभालू?"

चेतना उसकी तेज आवाज सुनकर सजग हो गई। मूला आँखें फाड़-फाड़ कर उन दोनों को देखने लगा।

“क्या हमें नहीं जानता? हम दोनों ठाकुर के कारिन्दे हैं।”

“जान गया, जान गया!”

“फिर इस बगिया को छोड़ कर भंगी बस्ती में चला जा।”

“क्यों?”

“ठाकुर सा का हुक्म है।”

“मैं इसे किसी के हुक्म से नहीं छोड़ सकता। इस बगिया का मातिर मैं हूँ, तुम्हारा ठाकुर नहीं।”

“बदतमीज, जवान लड़ाता है।” कह कर एक आदमी आगे बढ़ा, पर दूसरे ने उसे रोक दिया, “अरे रे रे रे.....किसको छूता है, जात हा भगी है, तू खुद भ्रष्ट हो जायगा।”

पहला आदमी एकदम रुक गया। फिर उसने लाठी का धक्का देकर मूले को नीचे गिरा दिया। मूला उठने लगा, पर दूसरे ने उसकी पीठ पर एक लकड़ी की चोट और की। बूढ़ शरीर। कपों से श्रान्त और दूटा हुआ। दूसरी चोट से मुँह के बल गिर पड़ा। नाक से खून बहने लगा।

तभी आ गई नैना। उसके हाथ में दो बाजरी की रोटियाँ थी और उन पर नमक। जब उसने मूले को पिटते देखा तो वह भीचकी-सी चीखती हुई

बस्ती की ओर भागी। बस्ती वालों ने जब यह सुना, सब वे सबके सब लाठियाँ लेकर बगिया की ओर भागे आये और उन्होंने आब देखा न सब, उन दोनों कारिन्दों को पीट कर भगा दिया।

धीरे-धीरे राजपूत, ब्राह्मण, वैश्य चले गये। हरिजन भी अनागत आगका से भयभीत होकर चलते बने। केवल रह गई नैना। वह कुछ देर जमीन पर पड़े मूले को देखती रही, जिसका मुँह पीला पड़ गया था, जिसकी आँखों में मृत्यु की भयावह छाया तैर रही थी। वह इस तरह सिसक-सिसक कर सबी साँस ले रहा था जैसे गर्मी के मौसम में कोई हारा हुआ पशु लेता है।

उसने पुकारा, “काका!”

मूले ने धीरे से करवट बदली।

“पानी!”

“हां, घेटा पानी नहीं, मुझे छूना मत, तुम्हें मेरी सींगन मेरे हाथ मत लगाना।” नैना अजीब स्थिति से घिर गयी।

नैना ने इधर-उधर देखा और फिर वह भंगी वस्ती की ओर भागी। वहाँ से वह एक लड़के को लेकर आई और उसने मूले की पानी पिलाया। मूला अपना हाथ-मुँह धोकर बैठ गया। उसकी आँखों से आँसू वह रहे थे। तब वह नैना की ओर न देखकर अपने आप से बोला, “सचमुच अब मुझे यह गाँव छोड़ना ही पड़ेगा, कौन ऐसी दुष्ट आत्मा की छत्रछाया में रहेगा जो अगुणों का भण्डार है। जो आदमी को सुखी हुई डाल समझता है।”

“लो काका, खाना खा लो !”

“खाना अब मैं भर कर ही खाऊँगा।”

“काका, तुम्हें मेरी वसम है। खाना तुम्हें खाना ही पड़ेगा।”

“बिटो तंग न करो। मन के ऊपर से किया गया कोई काम ठीक नहीं होता।”

नैना का ध्यान उसके घुटनों की ओर गया। घुटनों से लहू बह रहा था। मूले ने उस लहू को क्षण भर के लिए कृपा भरी दृष्टि से देखा, फिर उसने अपनी हथेली में धूल ली और उसे साफ करके अपने घुटनों पर छिपका दी।

“जब तुम्हारी इच्छा हो तब रोटियाँ खा लेना। हाँ, शहर में कौन से मदरसे में शिव पढ़ता है ?”

“क्यों ?”

“मैं उसे घर लाना चाहती हूँ।”

“लेकिन क्यों ?”

“मैं अकेली हूँ। मुझे डर लगता है !”

“फिर तुम किसी पड़ोसिन के यहाँ क्यों नहीं चली जातीं ? उसको यहाँ ले आओगी तो उसकी पढ़ाई अधूरी रह जायगी। इससे जमनू की आत्मा को बड़ा दुःख पहुँचेगा।”

“आत्मा का दुःख इस जीवन से अधिक नहीं है। कल कोई रात के अँधेरे में घर में घुस आया और मुझे ही कत्ल कर दे तो ?” नैना की आँखों में भय की रेखाएँ नाच उठी।

“तुम अंधेरे से डरती हो ? नया ठाकुर न्याय-अन्याय के भेद को नहीं समझता है, फिर भी इस ठाकुर के अन्याय के थोड़े से अंधेरे के डर से तुम अपने बेटे के जीवन में उग्र भर के लिए न मिटने वाला अंधेरा पंदा री दोगी ! फिर वह इन जालिमों का सामना कैसे करेगा ? फिर वह बड़ा होकर इनसे लड़ेगा कैसे ? हम लोगों के सपने कैसे पूरा करेगा ?”

“लड़ने के लिए उसे तत्सवार कौन उठाने देगा ! जाट का बेटा है वह ! फिर राजपूत जब चाहे, उसे शूली पर चढ़वा सकते हैं ! मैं अपने बेटे को तल-

वार की धार पर चढ़ने नहीं दूँगी ।” कहकर नैना चलने लगी । उसे नाराज होते जाते देखकर भूला बोला, “सुन, बेटा सुन । शहर में एक मदरसा है—जैनियों का । वही पढ़ता है तुम्हारा बेटा ।”

नैना ने जाते-जाते कहा, “मैं उसे ले आऊँगी ।”

वह घर आ गई और सामान बाँधने लगी; त्योही ठाकुर के घर आ बुलावा आ गया । वह गई । ठाकुर के दरबार में गाँव के बड़े-बड़े पंच और बूढ़े लोग बैठे थे । एक ऊँचे सिंहासन पर ठाकुर बैठा मूँछों पर ताव दे रहा था । नैना को देखते ही ठाकुर ने कहा, “जानती है, मैंने तुझे क्यों बुलाया है ?”

नैना आगे बढ़ी । उसने घूँघट निकाल लिया । सबसे पहले उसने ठाकुर के चरण-स्पर्श किये । बोली, “मैं नहीं जानती, अन्नदाता !”

“सच-सच बता, मेरे आदमियों को किस-किस ने पीटा ?”

“मैं कुछ नहीं जानती !”

“झूठ बोलने की सजा बड़ी बड़ी होती है ।”

“आपके चरणों की सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि मैं कुछ भी नहीं जानती ।

मैं उस समय विलकुल हक्की-बक्की हो गई थी ।”

ठाकुर ने कड़क कर कहा, “तुझे लगता है कि इस मामले पर गाने गाँव वाले एक हो गये हैं । किन्तु नतीजा इसका अच्छा नहीं निकलेगा । फिर मैं धर्म के विरुद्ध जरा भी नहीं चल सकता । भूले को कल तक वहाँ से हटाना ही पड़ेगा ।”

बौधरी तोताराम खड़ा होकर बोला, “अन्नदाता ने खम्मा, यह न्याय नहीं है । वह नीची जाति का भले ही हो, पर है देवता के समान ।”

“धू है !” ठाकुर के चेहरे पर घुणा नाच उठी। वह सबको फटकारता हुआ बोला, “तुम लोगों की अवल पर पत्थर पड़ गये हैं। एक भंगीड़े को देवता कहते हुए तुम लोगों को सज्जा नहीं आती ? आप ब्राह्मणों का धर्म क्या यही कहता है कि आप अपने ईश्वर के समान ठाकुर की आज्ञा की अवज्ञा करो ? मैं कहता हूँ कि उस बगिया को मूला कल तक खाली कर दे ! जाओ तुम सब !”

सब चले गये।

नैना को वहाँ रोक लिया गया।

सबके चले जाने के बाद ठाकुर ने उसके बारे में सारी जानकारी हासिल की और उसे हुक्म दिया, “रात को तुम्हें ठकुराणी के पास दो घण्टे के लिए आना पड़ेगा।”

“क्यों ?”

“ठकुराणी सा की सेवा के लिए।”

नैना ने हाँ भर ली, क्योंकि उसे डर लग रहा था कि अगर ठाकुर ने उसके विगत जीवन का गम्भीरतापूर्वक अन्वेषण किया तो उसका जीवन पुनः उसी नाटकीय यातनाओं से युक्त ड्योढ़ियों में बन्द हो जायगा। फिर भी उसे अन्देशा हुआ कि उसके जीवन की मुक्ति के क्षण अब समाप्त हो रहे हैं। अब वह पुनः ठाकुरों के अत्याचारों को सहने के लिए दुर्भाग्य के हाथों सीपी जा रही है।

वह लौट आई और वेदना में तड़पती रही।

×

×

×

उसे आज जमना की बड़ी याद आयी। वैसे भी उसका स्वभाव बन गया था कि वह जमना के बिना इस जीवन को बंजर धरती महसूस करे। वर्यो पति के रूप में उसे समझ कर नैना उसके अभाव में अपने को सचमुच विधवा समझने लगी। उसे रात को नींद नहीं आती थी। उसको बार-बार जमना का व्यवहार, बर्ताव, उसकी अकड़, उसका प्यार, आलिंगन.....ओह ! वह सचमुच उसके बिना अपने आपको खुश नहीं रख सकती। वह जीवन अब उसके उसके लिए एक शाप है। उससे अच्छा नैना को पति नहीं मिल सकता।

नैना को महसूस हुआ कि जमना उसके समीप सो गयी है। उसके गालों पर उँगलियाँ दौड़ रही हैं। उसे अपने में भीच कर उस पर चुम्बनों की वर्षा

कर रही हैं। उसकी दोनों टाँगों को अपनी टाँगों में जकड़ उसे मनोस रही हैं।.....सच जमना उसे कितना प्यार करती थी। क्या कोई पति भी अपनी पत्नी को करता होगा? बेहद प्यार!

और इधर उसके बिना सब नीरस-नीरस हो गया था। उसने 'काला' ओढ़ लिया था और अपने आपको उतनी सीमा में रहने दिया जैसे उसका असली पति मर गया हो।

सच नैना अपने आपको विधवा समझती है। उसे इतनी अनुभूति के साथ एक अज्ञात आनन्द का आभास होता था। और यह सही भी है कि वह जमना के बिना अपने आपको काफी असुरक्षित समझने लगी थी।

जमना लोगों की सन्देह का पात्र अवश्य रही पर भोले ग्रामवासियों ने उसे बिना सूँछ और जनानिया मर्द समझ रखा था। कुछ भी हो, उसके बिना नैना का जीवन अन्तहीन कषा की व्याध लेकर गुजर रहा था।

X

X

X

शिव आ गया।

जब उसने अपनी माँ को देखा, तब वह बीचका-सा उसे देखता रहा। काले वेश में नैना का गौरा रंग हालाँकि प्रिय लग रहा था, फिर भी बापक की प्रखर बुद्धि ने यह समझते देर नहीं लगाई कि काले वस्त्र अशुभ के सूचक होते हैं। उसने वास्तव्य से परिपूर्ण आँखों से माँ को देखकर कहा, "तू काले कपड़े क्यों पहनती है?"

नैना का गला भर आया। उसके नयनों में अश्रु छनछना आये।

"तूने मुझे बताया नहीं; और काका कहाँ है?"

नैना अब अपने को नहीं रोक सकी। यह फूट-फूटकर रो पड़ी। उसने

को सीने से लगाकर कहा, "तेरा काका हमें सदा-सदा के लिए छोड़कर
जा गया।"

शिव के मानस-पटल पर काका के साथ गुजारे हँसो-सुखी के दिन नाच
। वह दहाड़ मारकर रोया नहीं, पर उसकी अश्रु भरी आँखों में क्षाब्धी
पुन-वेदना स्पष्टतया पहचानी जा सकती थी। वह बहुत देर तक वही बैठा
। और अन्त में माँ के बड़े अनुरोध पर स्नान आदि करने लगा।

स्नानादि से निवृत्त होने पर माँ ने उसे छोट का रंग-बिरंगा कुर्ता पहनाया।
सके बालों में इतना तेल डाला कि वह लसाट पर वह निकला। काजल
सकी आँखों में डाला और लसाट के दोनों कोनों में उसने बालों की ओर
मुख्य दो अर्ध-चन्द्राकार बनाये ताकि उसके घन्चे को नजर न लगे।

तब उसने भूतिमन्त सौन्दर्य के समान अपने पुत्र के चेहरे पर झलकती
रामा और सुषमा को देखा। और भावावेश में उसके गालों पर कई चुम्बन
कित कर दिये। शिव का वर्ण गोरा था। वर्ण में कान्ति थी। आँखों में
गहराई के कारण दूसरी को मोहने वाला एक विचित्र आकर्षण था। उसके
गाल गहरे काले थे। हालाँकि गाँव में कोई भी बाल नहीं रखता था, लेकिन
उसने शहर में अन्य लड़कों की तरह बाल कटवाये थे।

"माँ, मैं बाहर जाऊँ?"

"हाँ बेटे, पर पहले शिवजी के दर्शन कर लेना और हाँ चौधरीजी को तूने
तोई कण्ट तो नहीं दिया?"

"नहीं।"

चौधरी तोताराम ही उसे लेकर आया था—शहर से।

शिव बाहर घूमने लगा गया।

वह गाँव के मँले-कुर्चले लड़कों में राजकुमार की तरह लग रहा था। सारे
लड़के उसके धीरे हुए थे और शहर की बातों को सुनने के लिए उत्साह दिखा
रहे थे। वह स्वयं भी अभिमान भरी भावनाओं से भरकर छोटी-छोटी बातों
को नमक-मिर्च लगाकर अपने मित्रों के सामने पेश कर रहा था।

अभी वह घूम ही रहा था कि एक रथ उसके सामने से गुजरा।

रथ को देखते ही गाँव के सारे लड़के हतप्रभ से खड़े हो गये। उन्हें इस
तरह खड़ा देखकर शिव ने पूछा, "इसमें कौन बंठी है?"

"आई सा ?"

"कोन आई सा ?"

"अपने नये ठाकुर की घेटी ?"

शिय उस लट्की को बहून देर तक देखता रहा ।

जब वह घर लौटा तब तक साँझ हो गई थी । नैना अपने घर के काम-काज निपटाकर ठाकुर की हवेली की ओर चलने को उद्यत हुई ।

उसकी कमर के सहारे लटकते हुए कहा, "माँ, कहाँ जा रही हो ?"

"ठाकुर के घर !"

"क्यों ?"

"आज से मैं कुछ देर के लिए वहाँ हर रोज जाया करूँगी ?"

"पर पहले तो तू नहीं जाती थी !"

"पहले की बातें पहले अन्नदाता के नाथ चलें गईं । अब नई बातें ।

यदि हम उनके वहे अनुगार नहीं चलेंगे तो कष्ट ही पायेंगे ।"

"फिर मैं भी चलूँगा ।"

"न-न !"

"नहीं माँ, मुझे अकेले को यहाँ डर लगता है ।"

नैना ने उसे अपने साथ ले लिया ।

ठकुराणी मखमली सीमा पर सोई हुई थी । उसने अनेक कीमती वस्तुएँ पहन रखी थी तथा अफीम का नशा भी करती थी । उसे डोलनियों का शौक था । हर रात वह अपने आगे डोलनियों का नाच-गाना कराया करती थी । जब वह नशे में मस्त हो जाती, तब वह अपनी अनेक दासियों के हाथ दुर्व्यवहार भी कर बैठती थी ।

नैना ने जाकर ठकुराणी सा को नमस्कार किया ।

ठकुराणी ने तुरन्त कहा, "तू नयी है क्या ? हाय राम, यह रूप तो हवेली में नहीं आ सकता । नाथी, इसे कह दे कि जिस पग आई हो, उनील पापस लौट जा ।"

ठकुराणी की खास दागी नाथी आई और उसने बड़ी उपेक्षा से बिना कुछ बोले, हाथ के संकेत से कहा कि तू चली जा । नैना ने सोचा कि बसो, २१

डूटी। तभी ठकुराणी की बेटो केसर कुँवर ने शिव का हाथ पकड़ कर कमरे में प्रवेश किया।

“माँ सा, माँ सा, इसे कहो कि यह हमारे साथ खेले।”

ठकुराणी सा चौकसी हो गई। गाव-तकिए के सहारे अकड़ कर बैठकर वह गम्भीर-भारी स्वर में बोली, “यह कौन है छोरा?”

नैना रावले (अन्तःपुर) के समस्त कायदे-कानून जानती थी। एक इस्लामी ढंग का अभिवादन करके वह बोली, “यह लड़का आपकी दासी का है।”

“तू क्या काम करती है?”

“मैं सेती-वाड़ी करती हूँ।”

“घर में और कौन-कौन है?”

“इस बच्चे के सिवाय कोई नहीं।”

“विधवा हो!” और ठकुराणी अट्टहास करके बोली, “मैं भी कैसी सूख हूँ। काले कपड़ों को देखा ही नहीं।” वह नाथी की ओर मुखातिव होकर बोली, “इसे कह दो कि यह हमारा पखा झला करे, पर इतना ध्यान रहे कि वह ठाकुर सा से बातचीत न करने पाये। अगर कभी हमने इसे ठाकुर सा से बातचीत करते देख लिया तो हमसे ज्यादा कोई बुरा नहीं होगा।”

नाथी ने फिर पहले की तरह मौन रहकर ही उसे सकेत किया।

“ओ छोरे, दाई सा के साथ खेल।”

शिव उसके साथ चल दिया।

ठाकुर की गोलियों के अनेक बच्चे केसर की हाजिरी में थे। वे गुलाम जो अर्ध-नंगे थे अथवा बच्चियाँ जिन्होंने केसर के फेंके हुए वस्त्र पहन रखे थे, अभी से अपने अस्तित्व को मार कर केसर के लिए खिलोने बने हुए थे। केसर उनका खिलोनों की तरह उपयोग करती थी। कभी किसी को ‘घोड़ा बनाती और कभी चार-चार बच्चों को एक-दूसरे पर मुलाकर उन पर बैठ जाती। शिव को यह सब अच्छा नहीं लगा। वह निश्चल-सा खड़ा रहा।

केसर ने आकर पूछा, “तू चुनचाप क्यों खड़ा है?”

शिव ने कहा, “मैं तुम्हें.....।”

बीच में ही एक दासी क्रोधित होकर आई और बोली, “तुम नहीं ‘आप’।

इन्हें ‘जो’ कह कर पकारा करो—आप के साथ।”

शिव सँभल गया, “मैं आप का खेल देख रहा हूँ।”

तभी एक बच्ची चिल्लाई, “वाई सा, वाई सा, धोड़ा तैमार है।”

एक नड़का धोड़ा बन गया। केसर ने उसकी पीठ घपघपाई। अपने साथियों को बुलाया और तीनों जाने उस पर चढ़ गये। धोड़ा बना हुआ लकड़जोर था। तीनों का बोझ वह नहीं सह सका। दब गया। उसके दबे सवारियों गिर पड़ी। केसर को गुस्सा आ गया। वह उसे डाँटने लगी। सभीप में पड़े बेंत को उठाकर उसने सड़क को पीटना शुरू कर दिया। सा चीख पड़ा। शिव से उसका रोना नहीं सुना गया। उसने तुरन्त अपने के हाथों से बेंत छीन ली।

दासियाँ अभी पत्थर की तरह निश्चल खड़ी थी, बेंत को छीनते-उन्होंने शिव को पकड़ लिया और उसे डाँटने लगीं। केसर को भी गुस्सा आ गया। उसने बेंत छीन कर सड़क से शिव की पीठ पर जमा दी। शिव ने विरोध ही कहा, “मुझे और मार लो वाई सा, पर इसे मत मारो। यह बहुत बला है। लो, मारो न !” “नहीं तो आप मुझे धोड़ा बना लीजिए। मैं सबका बोझ उठा लूँगा।”

केसर उसे देखती रही—स्नेहपूरित भावों से।

फिर उसने खिड़की से उस बेंत को बाहर फेंक दिया।

दासी ने दूध का गिलास उसके सामने हाज़िर किया। ठकुराणी सा आज्ञा थी कि जब केसर कुँवर को दूध पिलाया जाय तो उसके पास कोई बच्चा न रहे। धीरे-धीरे बच्चे भी यह सब समझ गये थे। दूध का गिलास देखते ही वे बाहर चले गये। केवल शिव खड़ा रहा।

दासी ने कहा, “बाहर निकल !”

शिव बाहर की ओर जाने लगा।

केसर ने आज्ञा भरे स्वर में कहा, “यह नहीं जायगा।”

दासी ने अनुरोध किया, “ठकुराणी सा ने मना कर रखा है।”

केसर ने पाँव पटकते हुए हठपूर्वक ऊँचे स्वर में कहा, “मैं कहती हूँ, यह नहीं जायगा, नहीं जायगा ! यह चला जायगा तो मैं दूध नहीं पीऊँगी !”

लाचार दासी ने शिव को वहीं पर खड़ा रखा।

आधा गिलास दूध पीने के बाद कुंसेर ने शिव की ओर गुंजास करके कहा, "ले यह दूध तू पीले !"

शिव ने गर्दन हिलाकर कहा नहीं।

"क्यों ?"

"दूसरे के हिस्से का और उसका जूठा दूध नहीं पीना चाहिए । ऐसा करने से पाप लगता है ।"

उसके उत्तर को सुनकर केसर बोली, "पाप नहीं लगता है । मेरा जूठा सब खाते हैं । मेरे कपड़े सब पहनते हैं । फिर तू क्यों नहीं खाता ?"

कमरे की दीवार पर एक चित्रावली लगी थी । उस चित्रावली के नीचे कहानी भी खुदी थी कि एक शेर था । उसे मांस नहीं मिला । वह रात-दिन मांस की टोह में रहता था । अन्त में वह भूखा ही मर गया ।

शिव उसकी ओर देखता रहा और अन्त में बोला, "मैं जाट का बेटा हूँ । मैं किसी का जूठा नहीं खाता ।"

केसर ने हठ पकड़ लिया । शिव नहीं माना । केसर रोने लगी । शिकायत ठकुराणी के पास पहुँची । ठकुराणी ने शिव को पकड़ कर दो चाँटे मारे । नैना का रोम-रोम सिहर उठा । उसकी इच्छा हुई कि वह ठकुराणी के गाल पर चाँटे मार दे, पर वह जहर का घूँट पीकर खड़ी रही ।

"पी दूध !"

"नहीं पीऊँगा !"

"नाथी !" ठकुराणी ने आज्ञा दी, "इसे जबरदस्ती दूध पिला दे ।"

चार-पाँच दासियों ने मिलकर उसे दूध पिलाता चाहा । शिव ने उसका जबरदस्त विरोध किया । दूध उसके मुँह में डाला । उसने उसे वापस धूक दिया ।

ठकुराणी रणचण्डी बनी हुई बोली, "राँड अपने बाप को समझाती है या मैं इसे दिन के तारे दिखलाऊँ ?"

नैना ने सोच लिया कि जब परिणाम अव्यक्त अशुभ हरे सकता है, अतः वह शिव के पास गई । उसने उसे अपनी गोद में लेकर कहा, "बेटा, दूध पी ले । दूध नहीं पीयेगा तो तेरी माँ को कोई न कोई कष्ट हो जायगा !"

शिव मौन रहा ।

नैना ने थपु भर कर कहा, "बपा तू चाहता है कि तेरी माँ....?"

शिव ने झट से गिलास उठाकर दूध पी लिया।

रात चल रही थी।

ठाकुर की घड़ी ने दस बजाये।

ठकुराणी ने जम्हाई लेते हुए कहा, "कल से इस छोरे को मत सता।"

तभी केंसर बोली, "यह कल भी आयगा। मैं इसके साथ हर रोज़ खेवूंगी।"

अगर आपने इसे नहीं बुलाया, तो माँ सा मैं आप से रुठ जाऊँगी।"

"नैना इसे भी साथ ले आना।"

नैना ठकुराणी के चरण-स्पर्श करके चल दी। वह रास्ते भर शिव का घे समझाती रही कि हमारा भला इसी में है कि हम ठकुराणी का हुकम मानते रहे।

नैना ने उसे करुण-स्वर में कहा, "तू नहीं जानता है कि मैंने तुझे कैसी आफतें सहकर पाला है। तेरे बाप ने तेरे सुख के लिए रात-दिन एक का दिये थे। वह तुझे एक बड़ा आदमी बनाना चाहता था। इसलिए अब हमें अपने आपको जीने के काबिल बनाने के लिए पत्थर के प्राणी की तरह कुछ सहते रहना चाहिए।"

नैना का घर आ गया था।

घर के आगे मूला बैठा था।

"काका! तू यहाँ क्यों बैठा है?"

"मेरी बगिया ठाकुर सा ने छीन ली।"

"राम-राम, ऐसे दुष्ट पर बिजली क्यों न गिर पड़े!" नैना ने बड़बुआ दी।

मूले ने कहा, "इसे जीवन में मेरी तरह कभी मुझ और शान्ति नहीं मिलेगी। यह मेरी तरह अपनी सबसे प्यारी वस्तु के लिए पागल हुआ प्रमेगा?"

घान पक रहा था।

मतवाने किसान सेतो की झुरमुट में राजस्थानी लोक गीत 'तेजा' गाने थे।

नैना ने दो सेतिहारो से बातचीत कर ली थी कि वे कटाई के वक्त आकर मदद कर दें। नियमानुसार जो भी देना होगा, वह उन्हें दे देगी।

नेता ने मूले से भी अनुरोध किया कि वह उसके खेत में रहना शुरू कर दे। इससे उसका मन भी बहसता रहेगा और उसके खेत की भी रखवाली हो जायगी। किन्तु मूले ने उसके अनुरोध को स्वीकार नहीं किया। उसने अतुल धन्यता से आँखें भर कर कहा, "मैं इस बगिया के सामने भूखा-प्यासा मर जाऊँगा। मुझे मेरी बगिया चाहिए। देखो न उसके लहलहाते पेड़, उसके फूल और उसकी कलियाँ। न बेटी न, मैं अपना जीवन छोड़ कर जीना नहीं चाहता।"

शिव का मन भी अशान्त था। वह दिन भर गुप्तचुप-सा बैठा रहा। वह खेत भी गया, पर वहाँ भी वह अपने समयस्कों से नहीं बोला। उन्होंने उसकी कयड़ड़ी खेलने के लिए अनेक मिश्रतें कीं, पर वह राजी नहीं हुआ। उसके सामने वही हठीली और गर्बीली केसर नाच रही थी। उसकी इच्छा होती थी कि वह उसके दो-चार थप्पड़ मारकर अपने पाँवों को धोया पानी पिलाये।

वह बार-बार अपने माल को मलता था जिसके गोरे रंग पर नील जम गई थी। वेदता का ज्वार उसके बिद्रोही मन में रह-रह कर उठता था और उसकी इच्छा होती थी कि वह ठकुराणी को लाठी मार दे जब वह भरपूर नींद में सोई हुई हो। इसी तरह की बिद्रोहात्मक बातें सोचता हुआ वह अपने खेत से साँझ को घर लौटा।

माँ गृह कार्य से निवृत्त होकर राखले में जाने के लिए तैयार हो गई थी। शिव को देखते ही उसने कहा, "ले झट से तैयार हो जा, समय हो गया है।"

"मैं वहाँ नहीं चलूँगा।"

"क्यों?"

"कह दिया न, मैं वहाँ नहीं चलूँगा।"

"अच्छे बेटे हट नहीं करते। चल, जल्दी से रोटी खा ले।"

"कह दिया न मुझे भूख नहीं है।" शिव के स्वर में हठ था।

"हठ छोड़ बेटे तू क्या जाने कि गरीब को कैसे जीना पड़ता है? फिर हमारे संग कोई बोलने वाला भी नहीं है। काका तेरा मर गया। अगर क्षणभंग भी करें तो कौन अपनी फरियाद लेकर राजाजी तक जायगा?"

"लेकिन यह अन्याय है।"

“न्याय-अन्याय को बड़े लोग नहीं देखते । बड़े लोग देखते हैं, अपना अपना स्वार्थ, अपना लाभ । इसलिए बेटे हमें जैसे-तैसे दिन गुजारने पड़ेंगे । चल, जल्दी से खा-पी ले ।”

लेकिन शिव ने नहीं खाया । उसने नैना की कोई भी बिनती नहीं मानी । वह भूखा ही चला पड़ा ।

ठकुराणी के चारों ओर विलास का सागर सहरा रहा था ।

वह अफीम के नशे में उन्मत्त थी और दोलनियाँ नृत्य कर रही थी । समझ के कोई कामोत्तेजक गीत गा रही थीं । इस गीत का कोई-कोई इतना अच्छील था कि नैना को साज आने लगी, पर ठकुराणी और दामियाँ बाह-बाह कर रही थीं । नैना एक कोने में खड़ी होकर पछा पछा लगी ।

शिव कैशर के पास चला गया था ।

कैशर उसे लेकर झरोखे में गई ।

एकान्त ।

कैशर ने विनम्र शब्दों में कहा, “शिव, तू मुझे माफ़ क दे, अब मैं तुझे कभी भी लग नहीं करूँगी । अब मैं तुझे कभी भी छूटा खाने के लिए नहीं कहूँगी ।”

शिव निरुत्तर रहा ।

“तुम्हारे जी की सौगन्ध । सच, तुम मुझे बहुत अच्छे लगते हो । इतने अच्छे जितना मुझे मेरा अपना जी ।”

तनिक रोष के साथ वह बोला, “तुम्हारे जो क्या भरौसा ? पहले के करता है, बाद में रोस “गुस्सा” करेगा । मैं ऐसा भायला (दोस्ती) नहीं रखता । इससे लाभ ही क्या !”

“नहीं-नहीं, ऐसा अब कभी भी नहीं होगा । मैं तुमसे नहीं झगडूँगी । नहीं सडूँगी ।”

शिव ने उसकी ओर देखा ।

कैशर की आँखों में स्नेह था, जो सजलता बनकर दीप्त हो गया था ।

“और मैं तुम्हारा झूठा भी नहीं खाऊँगी ।”

“मत खाना ।”

“और तुरहें अपनी माँ को यह भी कहना पड़ेगा कि वह मुझे कर्मा भी नहीं मारेगी।”

“कह दूँगी।”

“फिर मैं तुम्हारा पक्का भायला हो जाऊँगा।”

केसर ने शिव को देखा—वह उसे देखती रही। अत्यन्त गीरा और आक-
षक। उसे मन ही मन उसका रूप-सौन्दर्य भा गया। उसने शिव का हाथ
अपने हाथ में ले लिया। दोनों जने उसी कमरे में आये। अन्य वच्चे उसे देखते
ही उछल-उछल कर नाचने लगे।

एक ने कहा, “आँख-मिचौनी खेलो।”

सब ने उसमें ही मिलाई। खेल आरम्भ।

डाई आई छगू में।

शिव ने उसकी कसके आँखें बाँधी।

केसर ने मुस्कराते हुए कहा, “और अच्छी तरह बाँधो। देखो न, उसे
नीचे से दिख रहा है।” केसर ने आकर उसे हट्टी का चोर बताया। शिव ने
उसे दुबारा बाँधा। वच्चे इधर-उधर दौड़ने लगे। संयोग समझिए कि छगू ने
केसर को ही पकड़ा।

शिव ने केसर की आँखें बाँध दीं।

वह इधर-उधर दौड़ती रही, पर उसके कोई भी हाथ नहीं आया।

घड़ी ने नी बजाये।

ढोलनियों का गीत एक बारगी बन्द हो गया था।

केसर ने अपनी पट्टी खोल कर कहा, “मेरे तो कोई हाथ ही नहीं आता।”

तब शिव ने उसकी डाई खुद ले ली। केसर के चेहरे पर प्रसन्नता भरी
मुस्कान धिरक गई। उसने उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, “सच तुम
मेरे पक्के भायले हो।”

खेल पूनः आरम्भ हो गया।

तभी ठाकुर ने उस कमरे के आगे से प्रस्थान किया। उसकी दृष्टि शिव
पर पड़ी। दृष्टि पड़ते ही ठाकुर ने कहा, “यह छोरा कौन है?”

खेल रुक गया।

समरे में मग्राटा छा गया।

शिव ने अपने आँखों की पट्टी खोल दी और वह भय मिश्रित दृष्टि में ठाकुर की ओर देखने लगा।
 "अन्नदाता ने सम्मा!" दासी ने सिर झुकाकर कहा "यह नैना का बेटा है।"

"नैना का बेटा?" विस्मित प्रश्न ठाकुर की आँखों में चमक उठा। वह चलता हुआ बोला, "जैसी माँ, वैसा ही बेटा। अरे तुम इस तरह क्यों खड़े हो खेलो-खेलो।"

एक घण्टा और बीत गया।
 ठाकुराणी कामोत्तेजक बातों से खिलखिला कर हँस रही थी।
 तभी दासी ने आकर कहा, "ठाकुर सा, नैना को बुला रहे हैं।"
 ठाकुराणी की हँसी रुक गई। त्योंरियाँ खट गईं। वह भड़क कर बोली "कह दो कि नैना नहीं आ सकती!" फिर वह रुक कर बोली, "ठहरो, मैं खुद चलती हूँ।"

ठाकुराणी चली।
 ठाकुर शराब के नशे में धुत था। ठाकुराणी को देखकर वह भाषा पिनाड़ और पी गया। लड़खड़ाता हुआ वह बोला, "तू आ गई नैना?"

ठाकुराणी ने कोई उत्तर नहीं दिया।
 ठाकुर ने उसे अपनी गोद में बिठा लिया। ठाकुराणी भी उन्हें प्यार करने लगी। ठाकुर को बहुत देर तक यह पता भी नहीं लगा कि जो उसको सान्निध्य-सुख दे रही है, वह वस्तुतः कौन है। अप्रत्याशित ठाकुराणी के हाथ का तीखा कंगन ठाकुर के घूमा। ठाकुर चौंक पड़ा। तीव्र पीड़ा की भावना ने उसकी चेतना को सजग कर दिया। जैसे कुत्ता कान फड़फड़ा कर उठता है, ठीक उसी तरह वह अपनी आँखें मलता हुआ उठा और दीदे फाड़-फाड़ कर ठाकुराणी को देखने लगा।

"तुम!"

"हाँ ठाकुर सा!"

ठाकुर के होठों पर भेद भरी मुस्कान दोड़ गई। मधुर स्वर में बोला "सचमुच तुमने एक आला दिमाग पाया है। मुझे शराब पीने के बाद तुम

बहुत याद आती है। बस कल से जब मैं शराब में भस्त होऊँ, तब तुम आ जाया करो।”

“जो हुक्म !”

जब ठाकुराणी छोटी सब रात के बारह बज गये थे। उसकी दासियाँ ज्यों की त्यो उसके कमरे में बैठी थी। ठाकुराणी ने आकर नैना के अतिरिक्त सबको अपने कमरे के बाहर भेज दिया।

कमरे में कुछ देर सप्ताटा छाया रहा।

नैना अज्ञात भय से पौली पड़ गयी। जाल में फँसी हिरणी की तरह उसकी दशा थी। भयाक्रान्त-सी वह कमरे के एक कोने में खड़ी हो गई उसके अधर स्वतः ही ईश्वर की अभ्यन्तः फड़क उठे।

“नैना, मेरे हुक्म को भूल गई हो या याद है ?”

“याद है।”

“एक बार फिर याद दिला रही हूँ कि तू ठाकुर से नहीं बोलेगी। उनके साथ रंगरेलियाँ नहीं मनायेगी। इस पर भी तूने मेरा कहना नहीं माना तो फल अच्छा नहीं निकलेगा। जो कोख ठाकुर को सुभायेगी, उसी कोख में एक दिन उनही ही आज्ञा से अंगारे भरवा दूँगी। मैं किसी सौत को नहीं सह सकती।

नैना क्षर-क्षर रो पड़ी।

उसने ठाकुराणी के पाँव पकड़ कर कहा, “आप मुझे मुक्त कर दीजिए, मैं यहाँ आना भी नहीं चाहती हूँ। अकेली हूँ। खेती-बाड़ी का काम-काज भी मेरे पास बहुत ही रहता है। लेकिन ...?”

“ओह ! तो तू यह चाहती है कि मैं तुझे सेवाओं से मुक्त कर दूँ ? ऐसा नहीं हो सकता। लेकिन कल से तू सवेरे आकर मेरी गायों का काम कर दिया करता।”

“जो हुक्म !”

“अधेरे-अधेरे आना और काम खत्म करके चली जाना।”

नैना ने बाहर निकल कर नाथी से कहा कि वह शिव को बुला दे।

शिव केसर से अभी बातचीत कर रहा था। नाथी ने उसे चलने के लिए कहा। केसर ने कहा, “कल जरूर आओगे न ?”

"हां !"

"भूलना मत ।"

"नहीं-नहीं ।"

केसर उसे द्वार तक जाते देखती रही ।

रास्ता सुनसान था ।

नैना ने शान्ति को भंग करते हुए पूछा, "तू इस हवेली में नहीं बस चाहता है ?"

"नहीं ।"

"फिर कल से सुबह ही आ जाया कलंगी ।"

घर आ गया था ।

पर नैना की नींद कहां ? अंधेरे के गहरे और भयावह आवरण में ही अपने सुखी जीवन को भूली-भटकी किरणें दूँड रही थी । वह करे तो करे ? आखिर वह भी जनानी ड्यूडी से भागी हुई एक अपराधिन है । वही इसकी खबर राजाजी को मिल गई तो ? कही उसने फरियाद की और उनके विगत जीवन का पता लग गया तो ? तो ठाकुर उत्सास उसे केसरीनुई की जनानी ड्यूडी में भेज देगा और इस बार जरूर उसे कठोर दण्ड दिया जाएगा । काला मुँह करके, नंगी करके उसे सारी जनानी ड्यूडी धुमाया जाएगा और फिर उसे अन्धेरी कोठरी में सड़ने के लिए फेंक दिया जाएगा । अनागत अत्याचारों के बारे में वह रात भर सोचती रही । कब रात डूबी और अंध भोर का तारा उगा, यह विचारों के तीव्र प्रवाह में उसे अंगड़ा जैसा लगा ।

वह शिव की सुपुष्तावस्था में छोड़कर ठाकुर की हवेली को वापस चली । उसके पाँव धके वात्री की तरह बहके-बहके में लपते थे । उसके मस्तिष्क में विचारधारा भी पहाड़ी-ढनान में बहती पानी की धारा की तरह अमनगुन में और टेढ़ी-मेढ़ी थी । वह आन्तरिक तीव्रता में इतनी तन्मय थी कि उसे रात के सपनाटे और भय की खबर ही नहीं लगी । वह जाकर अन्य गुनानों के साथ काम में लग गई । सवेरे के इस काम में दो स्त्रियाँ और दो पुरुष थे । ठाकुर के साथ गये और छः भैसे थी; बारह बैल और तीन ऊँट थे । नित्य तीन घंटे तक काम करके वह वापस सौट आई ।

लेकिन रात को जब वह निश्चिन्त होकर शिव की नानी की कहानी सुना रही थी, तब ठाकुर के रावले से हरकारा आया और उभने कहा, "शिव को ठकुराणी बुला रही है।"

"क्यों?"

"मैं नहीं जानता, उन्होंने हुक्म दिया और मैं हाजिर हो गया।"

"अकेले शिव को बुलाया है?"

३१ "हाँ!"

"चला जा, बेटा!"

"मैं नहीं जाऊँगा।"

"फिर वही हठ!" कहकर दीप की ली में नैना ने उसे गहरी करुणा से देखा। वह अवर्णनीय करुणा, जिसके प्रचुर प्रभाव ने शिव को चलने के लिए जबुर कर दिया। वह उस हरकारे के साथ चज पड़ा।

रावले में केसर अपने कमरे के झरोखे से उसकी प्रतिष्ठा कर रही थी। उसकी मुद्रा किसी विरहणी से कम उदास और सन्तप्त नहीं थी। उसने ज्योंही शिव को देखा त्योंही वह भागती हुई उसके सामने दोड़ी और उसका हाथ पकड़ कर दृष्टि से स्वर में बोली, "तुमने मुझसे पक्का भावला किया था न! कहा था न कि मैं हर रोज आऊँगा। फिर आज क्यों नहीं आया? मेरी अच्छी रखते-रखते मेरी लाँछें ही थक गई। बोल न, बोल....." केसर निरन्तर धोल रही थी, पर शिव भीन था। वे दोनों चलते-चलते उसी झरोखे में आ गये थे। झरोखे में कोई नहीं था। एक दीया जल रहा था। उसका मद्धिम प्रकाश उन दोनों पर पड़ रहा था।

"तुम बोलते क्यों नहीं?"

"मुझे यह अच्छा नहीं लगता कि मुझे कोई तुम्हारा आदमी बुलाने आये।"

"क्यों?"

"पता नहीं, माँ क्यों उदास हो जाती है? उसने तुम्हारे आदमी को ज्योंही देखा त्योंही उसका मुँह उतर गया। सब, तुम्हारे आदमी को देखते ही माँ का खून सूख जाता है।"

केसर ने विवशता भरे स्वर में कहा, "अब मैं तुम्हारे लिए आदमी नहीं

भेजूंगी। पर तुम्हें भी वचन देना होगा तुम हर रोज आओगे। इस गे.
मुझे एक तुम ही अच्छे लगते हो। सबसे सुन्दर, सबसे भले।”

“मैं हर रोज आऊँगा।” दोनों के हाथ एक-दूसरे के हाथ में थे।

X

X

X

१३

दुभाग्य के पख दानव की तरह क्रूर और विशाल होते हैं।

हरे-भरे खेतों पर टिड्डी दल आ पड़ा। किसान प्रति रोघ के लिए खेतों के चारों तौर खाद्यां खोदने लगे। पर सुरक्षा के साधनों के का अभाव होने के कारण उनके खेतों को टिड्डीयों इस तरह चट कर गई, वहाँ वर्षों से सूखा पड़ रहा हो दीन-हीन किसानों की दशा बिगड़ गई। सब शकुर के सामने फरियाद लेकर गये। ठाकुर ने उन्हें स्पष्ट में कह दिया कि वह कुछ भी करने में असमर्थ है। उसने यह बताया कि महाराजा की अकाल की सूचना से ही है, वे जो भी हुक्म देंगे उसे वह पूरा करेगा।

यह टिड्डीयों पूरे प्रान्त पर आई थी। सारे प्रान्त में हाहाकार मच गया। दरिद्र और साधनहीन किसान गावों को छोड़-जोड़ कर राजधानी को जाने लगे सौर महाराजा खेत सिंह के समक्ष प्रार्थना करने लगे। हजारों किसानों की सम्मिलित आवाज को वे भी अनसुना न कर सके। विवश होकर उन्होंने एक आज्ञा-पत्र जारी किया कि इस वर्ष का लगान किसानों को छोड़ दिया जाय और गरीबों की रोजी-रोटी के लिए उन्होंने दो महलों का निर्माण कराना शुरू कर दिया।

चोपरी तोताराम महाराजा की आज्ञा लेकर गाँव आया।

उमने सारे गाँव वासियों को यह खबर दी। वे सब ठाकुर सा के समीप अर्ज लेकर गये। ठाकुर ने सारी बातें सुन कर कहा, “महाराजा का हुक्म तिर-आँखों पर, लेकिन हम किसानों का लगान नहीं छोड़ सकते। ऐसा हम

तो हम खाएंगे क्या ? महाराजा के भाय के साधन हजारों हैं । करोड़ों रुपये उनके पास हैं । इसलिए वे ऐसा हुक्म दे देते हैं, पर ऐसा नहीं करेंगे ।”

बेचारे किसान अपना मुँह लेकर वापस लौट आये ।

धीरे-धीरे किसानों की दशा बिगड़ती गई ।

गाँव का चौधरी अपने परिवार को लेकर किसी बड़े दूरस्थ शहर में चला गया । अंत में किसानों की दशा इतनी खराब हो गई कि वे अपनी सी-सी रुपयों की गायें-भैंसें एक-एक रुपये में बेचने लगे । प्रान्त के साढ़-साधू उनके भूखे-नांगे बच्चों को खरीदने लगे । सूखे घेतों में मरे पशुओं के कंकाल अत्यन्त भयानक लग रहे थे ।

भूले की बगिया के छोटे-छोटे फूलों के पीछे एवं बेलें टिड्डियों की भेंट खड़ गई थी । वह एक गड़े वृक्ष के नीचे चिर मौन धारण करके बैठ गया था । लोग उसे बूढ़ कहते थे, पर वह किसी का भी कोई उत्तर नहीं देता था ।

एक दिन सबेरे-सबेरे यह खबर फैली कि मूला मर गया है ।

नैना अपने को नहीं रोक सकी ।

वह भागी-भागी वहाँ गई । भूले की मृतक शरीर पड़ा था और दो कौब ने उसकी आँखों को कुरदे लिया था । नैना रो उठी । उसे लगा कि क्या ऐसे देवता की ऐसी ही दर्दनाक मौत बिघाता ने लिखी थी ! तब वह रोती-रोती हरिजन-वस्ती में गई ।

हरिजन-वस्ती सूनी थी । सिर्फ दो घर जो ठाकुर की हवेली साफ किया करते थे, वे ही आबाद थे । उसने आवाज लगाई । एक बुढ़िया बाहर आई । घेंसी हुई आँखों में चमक और दन्तहीन मुँह । जब वह उसके आगमन पर निष्प्रयोजन ही हँसी तब नैना भयभीत हो गई । उसे लगा कि यह कोई बुढ़िय नहीं, कथाओं में वर्णित डायन है ।

“क्यों बेटी ?”

“दांदी, मूला काका मर गया है, जरा उसके जलाने का प्रबन्ध करा दो ।”

बुढ़िया निर्विकार भाव से एक सुने मकान की ओर बढ़ी । उसमें से एक मरे हुए बच्चे को उठा कर लाई और उसे नैना को बताती हुई बोली, “यह लावारिस नहीं है, यह अनाथ नहीं है, फिर भी सुबह से मरा पड़ा है । अब में

जाऊंगी और इसे गाड़ कर आऊंगी। हालांकि हिन्दू मुर्दों को गाड़ते नहीं होते मजदूरी में सब ठीक होता है। फिर उस मूले को कौन गाड़ेगा? बा, नी तुझे उससे इतनी हमदर्दी है तो खुद जला आ। ऐसे खराब समय में सब बने होते हैं और सत पराये होते हैं।" कह कर बुढ़िया अपने घर में घुस गई।

नैना वहाँ खड़ी की खड़ी रही।

चन्द ही क्षणों में बुढ़िया वापस लौटी। उसके हाथ में नमक की एक थैली थी। तब वह बच्चे को कन्धे पर डाल कर बिना नैना की ओर देखे सान की ओर चल पड़ी।

नैना का भावुक मन कराह उठा। उसे लगा कि उसका कलेजा मुंह से आ रहा है। वह उन्हीं पाँवों लौट पड़ी।

वह पागलो की तरह घूमती और अपने उजड़े गाँव को देखती रही। वन समर्थ घरों के अतिरिक्त सारा गाँव खाली हो गया था।

एक गरीब किसान अपने बेटे को दादूपंथी साधू को बेच रहा था। नैना ने अवरोध उत्पन्न किया, "अपने बेटे को क्यों बेचता है भाई?"

साधू ने उसे तीक्ष्ण दृष्टि से देखा जैसे वह अभी उसे शाप दे देगा। वह निश्चल-अटल खड़ा रहा। तभी उसकी माँ आ गई।

पुत्र को बेचने वाली माँ आद्रं स्वर में बोली, "नहीं बेचूँगी तो यह मुझ ही मर जायगा। मैं अपने लाडले को अपनी आँखों के आगे मूला मरते देख सकती। मुझे इसे बेचने दो। बेचने दो!"

"नहीं-नहीं!" उसने काँपते स्वर में कहा।

"फिर तू इसे अपने घर ले जा।"

नैना के सन से क्षण भर के लिए प्राण निकल गये।

"मैं इसे नहीं बेचूँगी, कौन अपनी सन्तान को बेचता है! ऐसा नीब काम कौन कर सकता है। बेटा, इसे तू अपने घर ले जा। मुझे इससे सुटी होगी। ले जा..... खड़ी क्यों है?"

नैना पूर्ववत् खड़ी रही, फिर वह आहिस्ते-आहिस्ते पदम उठाती हुई चल पड़ी।

पुत्र को बेचने वाली माँ एक बार भाग कर उसके सम्मुख फिर आई और रोती हुई बोली, "यह मुझे पचास रुपये दे रहा है, तू मुझे कुछ भी मत

पर मेरे बच्चे को इस साधु से बचा ले । न जाने बाद में उसका क्या हाल होगा ?”

नैना ने उसकी फँसी हुई झोली को हाथ के झटके से तोड़ते हुए व्यग्रता से कहा, “मेरे पास भी धन कहाँ है जो मैं इसकी भूख मिटा सकूँगी !”

तब वह हवा के वेग से चली गई ।

शिव उसकी घर में प्रतीक्षा कर रहा था ।

“रोटी !”

नैना के मस्तिष्क में ‘रोटी’ का आराम घूम गया । उसे याद आया की उसका अपना बेटा भी तो जून से भूखा है । वह कांप उठी

वह ठाकुर के द्वार गई । ठाकुर ने उसे कमरे में बुलाया और उसके सतीत्व के बदले उसे झोली भर के धान दे दिया ।

इसके पश्चात् नैना घर आई । अस्मत्त-फरोसी से मिले अनाज के दानों को पीस कर उसने रोटियाँ बनाई और शिव की खिलाकर वापस बगिया पहुँची ।

मूले की छाश के चारों ओर कौवे जमा थे ।

नैना ने एक फावड़ा लिया और बगिया के बीचों-बीच उसने एक कदर खोदी । कदर खोदते-खोदते उसकी आँखों में आँसू बहते रहे । अन्त में उसने मूले को उस कदर में गिरा दिया और ऊपर से धूल डाल दी । जब कदर धूल से भर गई तब उसने उस पर कांटे बिछा दिये ताकि साव को बदमाश कुत्ते न निकालें ।

×

×

×

सन्नाटा, दूरगम भयावह सियारों की हुआँ-हुआँ !

सूखी और सहसा सुहाग उजड़ी विधवा घरिनी !

शिव अपने खेत की पाल पर अन्यमनस्क-सा बैठा था। उसके चारों ओर टिट्ठियों का भरा हुआ समूह था। कुछ टिट्ठियाँ अब भी उसमें ऐं रही थी। कुछ टिट्ठियाँ अब भी वालों के सूखे ढण्ठलों से लिपटी पड़ी थी। शिव के खेत के समीप तोताराम की भैंस मरी पड़ी थी। उसका ब्रह्म हिस्सा जंगली जानवरों और गिद्धों की भेंट चढ़ चुका था। उसके समीप नंगा-भूखा इन्सान एक पेड़ की छाल को काट रहा था। शिव उसके पास जाकर बोला, "तुम इस पेड़ की छाल को क्यों काट रहे हो?"

आदमी ने पैनी नजर से शिव को देखा। निरन्तर श्रृंखला से उसके बने की हड्डियाँ उभर गई थी, जिससे उसकी मुलाक़ाति की कोमलता एक क्षीन व भयप्रद कठोरता में बदल गई थी। आँखों के नीचे काली लकीरें खिचनी थी। इन लकीरों ने उसकी घँसी हुई आँखों की गहराई को बढ़ा दिया था।

"तुम पेड़ को काट रहे हो, पेड़ काटना पाप होता है।"
आदमी विचित्र व्यंग्यभरी मुस्कान के साथ बोला, "पेट को न भरना ही पाप होता है, ऐसा पाए जो सातों जन्मों में भी नहीं छूटता। इसलिए पहले मैं पेट भरूँगा।"

शिव को उसकी दर्शन भरी यह बात समझ में नहीं आई। वह घर की ओर चल पड़ा।

रास्ता सुनमान था।

दो आदमी रास्ते में झगड़ रहे थे।

शिव उनके समीप खड़ा हो गया।

दोनों नंगे थे। बस केवल एक-एक चियड़े से उन्होंने अपनी लाज ढक रखी।

एक आदमी ने दाँत पीसकर कहा, "पहले मैंने इस जमीन को देखा। इसलिए इसे मैं खोदूँगा।"

दूसरे ने अहम् से हँकार भर कर कहा, "देखा है तो मैं क्या करूँ? यहाँ हममें छिपा अनाज मैं ही खूँगा।" उगने एक बार अपने पुष्ट मातुओं पर हसवान की तरह देखा और फिर बड़बड़ाया, "जिसकी लाठी उसकी भैंस खाए यह थी—

सामीनों का ऐसा अनुमान होता है कि जहाँ चोटियों के घर होते हैं,

नाज प्रवश्य होता है। मंग्रह की भावना रखने वाली चीटियाँ निरन्तर अनाज गिरे वे एक बड़ा ढेर जमा कर लेती हैं।

ये दो व्यक्ति इसी टोह में थे और दोनों ही एक जगह पर इकट्ठे हो गये। पहला आदमी पहुँचे आया था। मानवीय नियम और कानून के अनुसार इस जगह पर उमका हो हक होना चाहिए।

दूसरा व्यक्ति जो ताकत में पहले से कहीं अधिक था और जिसकी अंगारों की जलती आँखों में क्रूरता स्पष्ट झलकती थी, जिसके इरादे भाव-भंगिमा से अच्छे नहीं लग रहे थे, जो यह चाहता था कि यह आदमी मुझ से जगड़ पड़े और मैं इसे पीटूँ और फिर एक विजेता घोर की तरह इस घरती में छिया चीटियों का अनाज ले लूँ।

वे दोनों कुछ देर तक चुप रहे।

शिव उन दोनों को देखता रहा—मौली दृष्टि से।

तब पहले ने जमीन को खोदना शुरू किया। दूसरे पूर्ववत् हुंकार भरी और समीप आकर पहले की कंधों से पकड़ा। उसे खड़ा किया। फिर एक जोर का घूँसा मारा। पहला आदमी मुँह के बल गिर पड़ा। दूसरा पैशाचिक हँसी के साथ चुनौती देता हुआ बोला, “क्यों, सीधे-सीधे जायगा या पसलियाँ तोड़ें।”

लाचार पहला आदमी दीनावस्था में हीले-हीले चल पड़ा।

दूसरे ने जमीन खोदनी शुरू की।

जमीन खोदकर उसने अनाज निकाला और उन कच्चे दानों को वह आतुरता से चबाने लगा।

शिव अभी तक उसे देख रहा था।

भूख उसे भी थी, इसलिए उसने अपने होठों पर दो-चार बार जीभ फेरी और चलने को उद्यत हुआ।

दूसरे आदमी ने जब उसे जाते हुए देखा, तब एक मुट्ठी भर अनाज उसे देते हुए कहा, “नजर मत लगाना।”

शिव चल पड़ा।

पथहीन यात्री की तरह वह टेढ़े-मेढ़े रास्तों से गुजर रहा था। ठाकुर की हवेली के समीप पहुँचते ही उसे अपनी माँ मिल गई। वह कीचड़ से सनी

थी और उसके सामान जरीर में गोबर के दाग लगे थे। वह अपनी सीटें दया दृष्टि से देखता रहा।

"बह! गया था?" नैना ने प्यार से पूछा।

"सेत की ओर!"

"क्यों?"

"भूँ हो!"

"भूत लगी है?"

"नहीं!" उसने नकारात्मक-मूचकस्मिर हिलाकर पूछा, "सो, गांव के पास एक आदमी पेड़ की छान छील रहा था। बरा आदमी का पेट इन्हीं भर जाता है?"

नैना की आँखें भर आईं।

"तुम रोने क्यों लगीं?"

"रोती हूँ अपने दुर्भाग्य पर। कैसा प्यारा गांव था अपना। आज वही गांव की दुर्दशा देखकर मेरी आत्मा भर आई है। बेटा, भूख जब तेज होती है तब परधर भी अच्छे लगते हैं। तब पेट की आग परधर को भी हवन बन सेती है।"

दूर से एक महीन आवाज ने शिव को पुकारा, "शिव, ओ शिव!"

शिव ने अपनी नजरें ऊपर की।

केसर उसे हाथ के संकेत से बुला रही थी।

नैना ने कहा, "चला जा, वह क्या कहती है!"

शिव चला गया।

वह झरोखा।

शिव को देखते ही केसर दीड़ी-दीड़ी आई। उलाहने मरे स्वर में बोली,

"तू दो दिन फिर क्यों नहीं आया?"

"ऐसे ही।"

"देखो शिव, ऐसा करोगे तो ठीक नहीं रहेगा। वचन भंग करना महापाप होता है। फिर मैं भी नाराज हो कर कहीं कुछ कर बैठूंगी।"

"क्या कर बैठोगी?"

"शिवजी की पार्वती की तरह चिड़ी बन कर उड़ जाऊंगी।"

“पावती शिव की सुगाई (पत्नी) थी।”

“मैं……” “सहसा केसर चुप हो गई। अबोध अवस्था में भी अन्तस् के कौन से संस्कार ने उसकी चाणी को अवरुद्ध कर दिया, यह वह खुद भी नहीं जान सकी। नज्जा से उसकी पलकें झुक गईं।

“तुम कहती-कहती चुप क्यों हो गई?”

केसर ने बात को बदलते हुए कहा, “मैं तुम्हारी अटीक रखती हूँ। इस तरोखे में दीया जला कर बैठ जाती हूँ। मेरी आँखें इसी रास्ते पर जमी रहती हैं। सोचती हूँ कि तुम आओगे, जरूर आओगे। पर तुम नहीं आते। तब मैं गुस्ते में भर आती हूँ। अपनी बात अपने मन में रखकर मैं खिलौनों की तोड़ देती हूँ और दूसरों बच्चों को पीटती हूँ।”

“ऐसा तुम्हें नहीं करना चाहिए।”

“फिर तुम आ जाया करो।”

“अब बराबर आऊँगा।”

वे दोनों कुछ देर तक चुपचाप बैठे रहे।

एकाएक केसर बोली, “खाना खाओगे?”

“नहीं।”

“क्यों?”

“अपने घर अपनी माँ के साथ खाऊँगा। हम दोनों ने कल रात से कुछ नहीं खाया है।” उसने सत्य भाषण किया।

“क्यों नहीं खाया?”

“घर में अनाज नहीं है। क्या तुम्हें मालूम नहीं कि गाँव में अकाल पड़ गया है। सारे खेतों को टिड्ढियाँ खा गई हैं। लोग भूख के मारे पेड़ की छालें तक खा रहे हैं।……” गरीब किसान गाँव छोड़कर भी खले गये हैं।”

“भुझे मालूम है।”

“यह कितना बुरा है!”

“मैं क्या करूँ?”

“तुम्हें अपने बाप से कहना चाहिए कि कोठरियों में पड़ा हुआ धान वे भूखे आदमियों में बाँट दें।”

“क्यों मेरे कहने पर वे धान बाँट देंगे?” उसने बाल-सुलभ भाव से आँखें

मटका कर कहा, "तुम्हें एक बात बताऊँ, हमारे पास बड़ी-बड़ी कोठियाँ हैं।
से भरी पड़ी हैं। हम कभी भी भूखे नहीं सोते।"

शिव चुप हो गया।

"अच्छा, मैं ठाकुर सा के पास जाती हूँ। मैं जाकर जरूर कहूँगी।
इतना सारा धान रखकर क्या करेंगे? उन्हें थोड़ा धान भूखे आदमियों
केना चाहिए।"

शिव सरोसे से अपनी माँ के पास आ गया। माँ अपने कार्य से निवृत्त
चुकी थी। वह अपने हाथों को धो रही थी। हाथ-मुँह धोकर वह
के पास गई और खाने के लिए कुछ माँगा। ठाकुराणी ने रात की बाती
उसे दे दी। तब वे दोनों जने वहाँ में चल पड़े।

रास्ते में ठाकुर के कारिन्दे दो किसानों को पकड़ कर कर सा रहे थे।
किसान के माथे से खून बह रहा था। दूसरा एकदम मौन था।

शिव ने माँ से पूछा, "इन्हें कहाँ ले जा रहे हैं?"

"ठाकुर सा के पास।"

"क्यों?"

"लगान वसूल करने के लिए।" माँ ने आहिस्ते से कहा, "खेत ठहर
गये हैं, लोगों के खाने के ठिकाने नहीं हैं, पर ठाकुर सा को लगान चाहिए।
उसका बस चले और यदि आदमी की खाल बिकती हो तो वह आदमी की
खाल से भी अपने रुपये वसूल कर ले।"

शिव ने अपने दिमाग पर जोर लगा कर कहा, "माँ, फिर तुम लगान
कैसे दोगी?"

"ठाकुर सा कह रहे थे" माँ ने उसकी ओर बिना देखे ही कहा, "कि
मेरे पास रुपये नहीं हैं इसलिए मैं तेरे खेतों को अपने कब्जे में कर लूँगा। मैं
कहा कि फिर मेरा गुजारा? ठाकुर सा ने कहा—मेरी हवेली में काम करो
और खाओ।"

"मैं वहाँ नहीं रहूँगा।"

"कौन वहाँ रहना चाहता है; पर मजबूरी क्या कुछ नहीं करा देती?"
शिव के मुख पर व्यथा छा गई।

× . . .

×

×

उसके कुछ दिनों बाद ही नैना पुनः ठाकुर की हवेली में सदा-सदा के लिए आ गई। जिस भयावनी जनानी ड्योढ़ी से एक दिन वह और जमना जान की बाजी लगाकर भागी थी, उसी में वह पुनः दुर्भाग्यवश चली आई। जब वह अपना घर का सारा सामान ढो रही थी, तब उसकी बड़ी-बड़ी आँखों से खून के आँसू टपक पड़े। उसे लगा कि वह किसी कसाई से कम हृदयहीन नहीं है जो एक बकरे को पालता-पोसता है, और बाद में उसको अपने हाथों से काट कर देता है। एक दिन इस घर को उसने अपने हाथों से बनाया था और आज उसे ही सदा-सदा के लिये छोड़ कर जा रही है।

शिव के चेहरे पर भी गम्भीर उदासी छा गई। उसके हृदय में घृणाजनित प्रतिहिंसा थी जो मनुष्य में शत्रु के प्रति ही उत्पन्न हो सकती है। उसके रोप में पड़ते हुए भारी कदम उसकी विनाशक भावना के प्रतीक थे।

हवेली की चहार-दीवारी के किनारे-किनारे कच्ची मिट्टी की मजबूत कोठड़ियाँ बनी थी। इन कोठड़ियों के पीछे एक छोटी खिड़की थी, फिर भी इनमें रहने वालों का दम घुटता-सा रहता था।

इन्हीं कोठड़ियों में से एक कोठड़ी नैना को मिल गई। नैना ने उस कोठड़ी में अपना सामान सरतीब से रख लिया। शिव मौन था। उसका मन ग्लानि से भरा था और वह शक्ति के बाहर ठाकुर के प्रति हिंसारमक कार्यवाहियों की रचना किया करता था। उसका बाल-विश्वास कभी-कभी चलचित्र के हीरो की तरह सैकड़ों आदमियों से लड़ने का असंगत प्रयास कर बैठता था।

अब वह भी पहले की तरह आजाद नहीं था।

उसे भी अपनी माँ के साथ काम करना था और बाद में उसे कुएँ से पानी भरना पड़ता था। शिव निरन्तर पानी भरते-भरते परेशान हो जाता था और अन्तर्बेदना के कारण उसका मुख विवर्ण और विकृत हो जाता था। तब उसकी इच्छा होती थी कि वह घड़े को फोड़ दे। पर वह ऐसा नहीं कर सकता था। ऐसा करने से उसे ठाकुर के कारिन्दे का अमानुषिक दण्ड भोगना पड़ता था।

ठाकुर का फारिन्दा जिसका असली नाम जालिमसिंह था और जिसे आज-फस अपना नाम दयालुसिंह रख लिया था [हम भी उसे दयालुसिंह नाम से ही सम्बोधित करेंगे] शिव को घूप में उकड़ बना देता था और उसी कमर पर चोन्न रख देता था अथवा उसे गर्म पत्थरों पर सड़ा कर देता था। उसकी मुद्रति में तनिक भी फरुणा नहीं झलकती थी।

रात को शिव केसर के पास जाता।

केसर उसे छुप-छुप कर स्वादिष्ट मिठाइयाँ पिलाती और उसे आश्वासन देती कि वह उसे शीघ्र ही दयालुसिंह के अत्याचारों से मुक्त करा देगी। शिव ने इधर अपने आपको बाह्य रूप से नितान्त भिन्न बना लिया था। उसके हृदय में गहरी घृणा थी, पर ऊपर से वह चतुर भाकर की तरह रहता था और केसर से रात-दिन बिनती करता था कि वह उसकी माँ की जरा भी कष्ट होने देगी।

एक दिन यातों ही यातों में शिव ने केसर से कहा, "मैं तुम्हें चोले सगता हूँ न?"

"बहुत चोले सगते हो, चन्दा से भी चोले।"

"फिर अपने पिताजी से कहकर मेरी माँ को अपनी माँ की साती बनवा दो न!" उसकी आकृति पर वेदना की रेखाएँ नाच उठीं, "उसे तो बहुत काम करना पड़ता है! फिर दयालुसिंह उसे घड़ी भर भी सुत की सी नहीं लेने देता।"

"वा बाबा, ना।" भयमिश्रित स्वर में केसर बोली, "एक बार मैं तुम्हारे कहने से ठाकुर सा को घान बाँटने के लिए कहा था, जानते हो, उसने फल मुझे क्या मिला? ठाकुर सा ने मुझे तड़ातड़ पीटा और कहा कि उस किसी ज़ालिम ने तुम्हें ऐसा सिखाया-पढ़ाया है। उन्होंने मुझे उस ज़ालिम नाम बसाने के लिए बहुत धमकाया और डाँटा, पर मैंने तुम्हारा नाम नहीं बताया। ऐसा करने से मुझे उस रात का खाना भी नहीं मिला। मुझे भूख को नींद नहीं आई। मैं रात भर तारे गिनती रही। सबेरे माँ ने आकर मुझे बचाया।" अब मैं तुम्हारा कहना नहीं मानूँगी। तुम नहीं जानते कि मैं किस डरपोक हूँ। कभी भूल से तुम्हारा नाम मुँह से निकल गया तो तुम्हारी छान्नी नहीं।"

और शिव ने फिर केसर को कहना उचित नहीं समझा ।

तत्पश्चात् वह कोल्हू के बेल की तरह अपने काम में लगा रहता था ।

“वह न किसी से अधिक बोलता था और न ही वह चांचल्य से गाता था । अब उसके जीवन में उदासी आ गई । ठहरे हुए पानी की तरह चिर शान्ति । वह समझता है कि उसका जीवन दुःखों की प्रतिच्छवि है और ऐसे नाजुक समय में उसे अपनी माँ के कहे अनुसार धैर्य और विवेक से काम लेना चाहिए ।

नैना का ठाकुर से अब वासनात्मक सम्बन्ध समाप्त हो गया था, जिसमें उसकी कई उदारताएँ समाप्त-प्रायः हो गई थीं । अब उसके साथ एक गोली से अधिक अच्छा वर्तन नहीं होता था । ठाकुर ने उसके घर को बेचकर सारे रुपये लगान के रूप में वसूल कर लिये । नैना ने कोई विरोध नहीं किया । वह अपने आपको एक अपराधी समझती थी । वह चाहती थी कि उसका पिछला इतिहास कोई न जाने !

जनानी ड्यूडी में एक नई (वेश्या) का प्रवेश हो गया था, जो अपने समय की प्रसिद्ध तबायफ थी । आजकल ठाकुर सा उसके प्रेम में डूबे रहते थे ।

रात के समय शिव अपने सारे कामों से निवृत्त होकर पुस्तकें लेकर बैठ जाता था । वह रामायण पढ़ता था, महाभारत पढ़ता था और पढ़ता था अनेक कहानियों की पुस्तकें ।

पल,

दिन,

रात,

सप्ताह,

महीने,

साल,

गुजरते हैं
गुजरते हैं

×

यौवन ने अँगड़ाई ली और मोने का उपक्रम करने लगा ।

भारी कदमों की आहट ने उम उपक्रम में बाधा डाली और यौवन पुनः अँगड़ाई लेकर उठ गया । आदाव करके बोला, "लौंढी को हुनम ?"

"आज हमारे यहाँ कई ठाकुर-उमराव आने वाले हैं । मुजरा होगा । ठाकुर ने तवायफ़ गुलबदन की कहा । गुलबदन ने सलाम बजा कर . . . में प्रवेश किया ।

ठाकुर ने अपने बैठकस्थान को सजाया ।

बारह वज्रत-वज्रते दस ठिकानों के सरदार आ गये ।

महफिल जम गई ।

गुलबदन ने कई राजस्थानी गीत गाकर ठाकुर मोहनसिंह की फरमाइश पर मुगलवंश के अन्तिम सम्राट् बहादुरशाह 'जफर' की एक दर्द भरी पश्चिमी सुनाई—

लगता नहीं है दिल मिरा उजड़ दियार में ।
 किसकी धनी है आसमे नापाएदार^१ में ।
 कह दो इन हसरतों से कहीं और जा बसों ।
 इतनी जगह कहाँ है बिले बाग़वार में ।
 इक शाले गुल पे बँठ के बुसबुल है शादमा^२ ।
 काँटे बिछा दिये हैं बिले सात्ताज़ार में ।
 उम्मे दराज़ भाँग के लाये थे चार दिन ।
 दो आरजू में कट गये दो इन्तज़ार में ।
 है कितना बदनसीब ज़फर दफन के लिए ।
 दो गज़ ज़मी भी मिल न सकी कूए^३ यार में ।

ठाकुरों में कुछ इन महफिलों की तवायफ़ों के अतिरिक्त उसमें गाई जाने

वाली चीजों के साहित्यिक महत्व को भी समझते थे । वे उन गीतों व गजलों में छिपी शायर की अन्तरचेतना को पीढ़ा और उसके अन्तस्तल के मर्म को भी ग्रहण कर लेते थे । जब गुलबदन ने अन्तिम दो पंक्तियाँ दोहराईं तब ठाकुर मोहन की आँखें सजल हो गईं और वह कहने लगा, “हे कितना बदनसीब जफ़र दपन के लिए, दो गज ज़मीं भी मिल न सकी कूए-यार में । वक्त भी क्या बला है ! फूलों पर सोने वालों को काँटों पर भी जगह नहीं देता ।”

ठाकुर उल्लास मोहनसिंह की वेदना समझ गया । इसलिए उसने गुल को कोई फड़कती हुई चीज गाने का अनुरोध किया । गुल सलाम बजा करके लोक-गीत सुनाने लगी ।

हवेली के पीछे जनानेखाने के अगले कमरे में शिव केसर से मधुर स्वर में कह रहा था, “मैं तुम्हें चन्द्रावली कहूँगा ।”

“वह कौन थी ?”

“वह केसर-सी एक खूबसूरत धीरांगना थी ।”

“तुम मुझे उसकी कहानी सुनाओगे ?”

“सुन लो तो चैन से नहीं बैठोगी ।”

“क्यों नहीं बैठूँगी ?” उसने बाल-मुलभता से कहा ।

“क्योंकि उसने अपनी मर्जी के खिलाफ हुए काम पर अपने आपको बलि-दान कर दिया ।”

“तुम मुझे वह कहानी सुनाओ,.....सुनाओ न !”

“सुनो—

“एक अत्यन्त रूपवती युवती थी । रूप भी ऐसा जो दीपक लेकर दूँड़ा जाय तो भी न मिले । अनूठा और अनोखा । आद्वितीय और अनुपम । नाराज न होना—शृंगार रस में बह रहा है । नारी-सौन्दर्य का वर्णन करने में मनुष्य ढरता भी है, फिर भी करता है । यह उसके मन की बड़ी दुर्बलता है ।”

“अच्छा बाबा, जो मन में आये कहो, मैं तुम्हें कुछ भी नहीं कहूँगी ।” केसर ने मस्ती से मुस्कराते हुए उसे हाथ जोड़ दिये ।

“मैं चन्द्रावली के रूप का वर्णन कर रहा था । मध्यकालीन कवियों की तरह नख-शिख का वर्णन । रंग गोरा—ठीक तुम जैसा । नाराज मत होना । मुझे तुम भी हजारों में एक लगती हो । बाल वासुकी नाग की तरह बल खाये

हुए। ललाट प्रशस्त। भौंहें धनुषाकार। नाक सहृण की धार की भाँति तीक्ष्ण।
होंठ रेशम के तार की तरह कोमल। दाँत दाढ़िम बीज ज्यूँ। उभ्रत उदोर।
पीपल के पत्ते की तरह येठ। जाँघें संगमरमर के स्तम्भों की तरह बिम्बी।
छोटे-छोटे पाँव !

"ऐसी चन्द्रावली एक दिन सरोवर पर सखियों सहित पानी भरने गई।

"तभी एक बलशाली मुगल सरदार आया और उसे पकड़ कर ले गया।
सखियों ने आकर उसके घरवालों को खबर दी। घरवाले मुगल-सरदार के
पास गये। उसने उन सबको डाँट कर भगा दिया। चन्द्रावली ने सोचा कि
बल से कोई काम नहीं बनता है तो उसने अकल से काम लेने का निश्चय
किया। उसने अपने माँ-बाप को समझा कर लौटा दिया और कहा, "मनो
इच्छा के बिना मैं कोई काम नहीं करती। आप निश्चित रहिए, मैं प्राण दे दूँगी
पर उसे अपने तन को स्पर्श करने नहीं दूँगी।"

"बेचारे शक्तिहीन घर वाले बापस आ गये।

"इधर मुगल सरदार नशे में उन्मत्त चन्द्रावली के पास आया।

"चन्द्रावली भयभीत नहीं हुई। उसने मुगल सरदार को अर्ज की कि वह
बहुत प्यासी है। उसे पानी पिलाया जाय। मुगल सरदार सुराही लेकर स्वयं
तम्बू से बाहर निकला। उसके बाहर निकलते ही चन्द्रावली ने महान शौ
उठाया और तम्बूओ में आग लगा दी। देखते-देखते आग ने भयंकर रूप धारण
कर लिया।

"बाहर सरदार चीख रहा था। उसके मददगार आग बुझा रहे थे।

"आग तो बुझ गई, पर चन्द्रावली नहीं बची। वह जल कर राख हो चुकी
थी, क्योंकि उसे अपने पर हुई अवदस्ती पसन्द नहीं थी।

"यही कथा है। इसलिए मैं तुम्हें चन्द्रावली कहना चाहता हूँ। चन्द्रा,
चंदा या चन्द्रावली, क्योंकि मैं तुमसे भी उम्मीद रखूँगा कि तुम अपनी इच्छा
रहित कोई भी काम नहीं करोगी ! जीवन में अनेक बाधाएँ आती हैं तब
हमारा मन, विवेक, हृदय और हमारी विभिन्न प्रवृत्तियाँ लोभ-सवरण नहीं बन
सकती। तब मनुष्य अपनी प्रिय वस्तु को छोड़ कर दूसरों के संकेतों पर नाच
है। केसर ! मैं तुम्हारा गुलाम हूँ, और एक गुलाम के प्यार की इच्छा
होगी, नहीं समझ पा रहा हूँ।"

केसर ने फूंक से दिया बुझा दिया ।

उसने आगे बढ़कर शिव का हाथ अपने हाथ में ले लिया । वह मधुर विगलित स्वर में बोली, "ऐसा न कहो, मैं तुम्हें प्यार करती हूँ । सच्चे मन से प्यार करती हूँ । तुम गुलाम हो, इसलिए तुम प्रेमी नहीं बन सकते, यह कोई तर्क नहीं ।"

"प्रेम के साथ तुम्हें प्राप्ति के अधिकार ?"

जलता प्रश्न समाधानहीन-सा उन दोनों के सम्मुख खड़ा हो गया ।

"मैं इसके लिए भी प्रयास करूँगी ।"

"इतने असम्भव को सम्भव करोगी ?"

"आशा बहुत बड़ी चीज है ।"

"जिस आशा को अन्धेरा लील चुका है, उस आशा की आश रखना भी व्यर्थ है । वहाँ निराशा है । घोर निराशा ।"

"तुम मुझे नहीं समझते !"

"क्या कहती हो ?"

"मैं तुम्हारी ही रहूँगी ।"

"यह मेरा सौभाग्य है ।"

फिर दोनों अल्पकाल के लिए एक-दूसरे की बाहुओं में जकड़े रहे । वासनात्मक प्यार की उत्तेजना में उन्हें यह भी ख्याल नहीं रहा कि ऊपर की महफिल समाप्त हो चुकी है । पाँवों की निरन्तर आहट ने उन्हें सावधान किया और शिव सजग पहरेदार की तरह तन कर जनानी इयोड़ी के आगे खड़ा हो गया ।

सब ठाकुरों के चले जाने के बाद ठाकुर उल्लाससिंह ने अपनी पूरी हवेली के चारों ओर चक्कर लगाया । शिव को खड़ा देखकर उसने कहा, "मैं तुम्हारी सेवाओं से प्रसन्न हूँ । मेरी लाइली भी तुम्हारी अवसर प्रशंसा करती है । कहती है—तुम बड़े स्वामिभक्त हो । जहाँ हमारा पसीना बहेगा, वहाँ तुम्हारा खून बहेगा ।.....ऐसा होना भी चाहिए । सुनो, कल से मैंने तुम्हारी माँ को केसर कुंदर के पास रख दिया है, क्योंकि आजकल उससे कठोर मेहनत नहीं होती । अवस्था के साथ-साथ वह आजकल बीमार भी रहती है ।"

"यह आपकी कृपा है ।"

“देखो, मैंने तुम्हारा मकान वापिस तुम्हारे नाम से कर दिया है। स तुम्हारी माँ ने मेरे सामने झोली फँसाई थी। उसकी झोली मैं खाती नहीं स सका।...और हाँ, तुम शादी क्यों नहीं कर लेते?”

“बाद में करूँगा।”

“क्यों?”

“ऐसे ही ठकुर सा, जीवन में अनेक कठिनाइयाँ हैं, अभाव है, परेशानियाँ हैं। अभी मुझे शादी एक झंझट सी लगती है। सोचता हूँ—वेबारी को तब तक इन आफतों में क्यों फँसाऊँ?”

ठाकुर को उसकी यह बात रुचिकर नहीं लगी। उसने अपने स्वर को कठोर करके कहा, “यहाँ तुम्हें आराम नहीं है?”

“बहुत आराम है।”

“फिर?”

“मैं शादी करना नहीं चाहता। मुझे आज का जीवन एक जंजाल लगता है। यह जीवन भी कोई जीवन है।”

“फिर मर क्यों नहीं जाते?” ठाकुर जहर उमल कर चलता बना। ठाकुर के जाते ही शिव फिर अपनी बीट पर चक्कर निकालने लगा।

बी कदमों की आहट उसके समीप आई।

आहट उसके पास आकर खरम हो गई। उसका हाथ अपने हाथ में सेरी हुई केसर बोली, “तुम शादी क्यों नहीं करते?”

“मेरी मर्जी।”

“देखो, शादी नहीं करो तो तुम्हारा वंश कैसे चलेगा? फिर तुम्हारी माँ भी बूढ़ी हो रही है। उसकी सेवा कौन करेगा?”

“मेरा वंश चलेगा, जरूर चलेगा।”

“लेकिन...”

शिव ने केसर को अपनी बाँहों में भरकर घूम लिया, “आशंका करने की जरूरत नहीं है। मेरा वंश तुम चलाओगी, जरूर चलाओगी।”

केसर कुँवर ने भी उसी जना के वशीभूत होकर शिव के गालों पर चुम्ब की वर्षा कर दी और वह भाग गई।

...शिव की स्मृति में विस्मृत-सा सदा रहा।

भोर का तारा उगा ।

शिव अपनी कोठरी में आया और चुपचाप बैठ गया ।

नैना बिस्तरे पर पड़ी थी । उसे हलका बुसार था । शिव कुछ देर तक चारामग्न बैठा रहा । अन्त में वह उठा और माँ के ललाट को छूता हुआ बोला, "तुम्हें बुखार है ।"

"नहीं तो ।"

"फिर शरीर जल क्यों रहा है ?"

"गरमी से ।"

"आज तुम आराम कर लो ।"

नैना ने कहा, "मैं पहले ही सोच चुकी हूँ । चलो अच्छा हुआ कि हमें ठाकुर ने अपना घर लौटा दिया ।"

"कोई अहसान नहीं है ।"

"धीरे बोला करो ।"

शिव चुप हो गया । धीरे-धीरे उसे नीद आ गई ।

उसे सोये दो घण्टे भी नहीं हुए थे कि हवेली में जोर का शोरगुल मचा । नैना ने शिव को जगाया । शिव ने हवेली में जाकर पता लगाया कि ठाकुर की माँ की तबीयत एकाएक गड़बड़ा गई । बंध जी उनकी नाड़ी पकड़े बैठे हैं । ठाकुर सा, ठाकुराणी और केसर कुंवर व अन्य नौकर-चाकर उनके चारों ओर जमे हुए हैं ।

शिव जब तक शीघादि से निवृत्त हुआ तब तक ठाकुर की माँ के प्राण-पछेरू उड़ चुके थे । ठाकुर सा ने उनकी अर्धी निकालने के लिए हुक्म दिया । हुक्म की तरह यह समाचार सारे गाँव में फैल गया ।

ठाकुर ने नियम बना रखा था कि जब कोई उसके परिवार में मरे, तब सारे गाँव को उसकी अर्धी में शामिल होना पड़ेगा ।

गाँववासी इकट्ठे हो गये ।

एक पालकी में ठाकुर की माता के शव को बिठाया गया और बड़ी धूम-धाम से यह अर्धी निजली । अर्धी से लौट आने पर सारे गाँव के घूटे, जवान व बच्चों का मुण्डन कराया गया । जिसने मुण्डन नहीं कराया, उसे ठाकुर ने

गद्गार आदि कहा और उसे ऐसी घमकी दी कि बेचारे को हार कर अपने के बाल मुड़ाने ही पड़े ।

औरतें हवेली में आ-आकर रोती थीं ।

रोने वाली औरतों का मुँह उघाड़-उघाड़ कर ठाकुर की विशेष दक्षिण देखती थी कि उनकी आँखों में आँसू हैं या नहीं ? बाहर की स्त्रियों के उदारता बरती जाती थी, किन्तु हवेली की दासी की आँखों में अगर आँसू आते तो उसकी खैर नहीं । उसे ठाकुर के सामने पेश किया जाता । कभी ठाकुर उस दासी के नगे वदन पर कोड़े तक लगवा देता था ।

शिव को भी मुण्डन कराना पड़ा ।

नैना बारह दिन तक बँसक (बारह दिन तक स्त्रियाँ रोती हैं; उसे स्थानी में बँसक कहते हैं) में बैठी । तेरहवें दिन शिव को किसी साम शहर भेज दिया गया । श्रीखेतसिंह का लड़का जवान हो चुका था ।
था—पद्मसिंह ।

उस दिन राजाजी शहर के किसी मंदिर में जाने वाले थे ।

सड़कें भीड़ से भरी थी । जहाँ-तहाँ पुलिस वाले खड़े-खड़े प्रजा की ओर को सँभाल रहे थे । शिव भी एक ओर खड़ा हो गया । लगभग आधे घण्टे के सवारी निकली ।

पहले पुलिस बाजा, फिर रथ, फिर सजे हुए घोड़े और इसके बाद मोंट पर राजाजी । उनके पीछे युवराज पद्मसिंह । और उसके पीछे केसरीसिंह बेटा अनूपसिंह ।

शिव ने अपने पास खड़े एक व्यक्ति से पूछा, “राजाजी की सवारी रथ पधार रही है ?”

“मंदिर ।”

“क्यों ?”

“सुना है कि वहाँ कोई दादूपंथी साधू आया है । वह बहुत ही चमत्कारी है । वह बीमार को दैवी-शक्ति से ठीक कर देना है ।”

“राजाजी को क्या हो गया है ?”

“आप बाहर के हैं ?”

“जी !”

“तभी आपको मासूम नहीं है कि राजाजी को आजकल कम दीखता है
र उनके भतीजे अनूपसिंहजी वचन से ही अपंग हैं। उन्हें दो साल की आयु
ही लकवा मार गया था।”

शिव के मन पर झटका-सा लगा। वह कुछ क्षण अपने साथी को देखता
था और अन्त में बोला, “राजाजी साधू को अपने यहाँ भी बुला सकते थे।”

“साधु महाराज कही भी नहीं जाते।”

शिव और कुछ पूछना चाहता था, लेकिन सवारी जा चुकी थी। और
सका साथी कहीं खो गया था। शिव भी दिन भर ठाकुर के लिए सामान
त्यागि खरीदता रहा। सन्ध्या होते ही वह ऊँट पर सवार हुआ और चल पड़ा।

वह रास्ते भर केसर के बारे में सोचता रहा। उसने कई बार यह भी
सोचा कि केवल केसर के प्यार के सम्मोह में वह अपने आपको ठाकुर की हवेली
की कैदी की तरह सड़ा रहा है। कभी-कभी वह भागने की भी सोच लेता था,
लेकिन माँ का ध्यान भी उसे दुबल कर देता था। वह यह भली-भाँति जानता
था कि उसके बाद उसकी माँ का जीवन नारकीय यातनाओं से भर जायगा।
वह दाने-दाने की मुँहताज हो जायगी।

केसर उसे हृदय से प्यार करती है। उसे विश्वास भी है कि वह आजीवन
उसे प्यार करेगी। वह उसके लिए सब कुछ करने को तत्पर है। वस्तुतः केसर
शिव की चाहती थी। आतंक और रूढ़ियों के बीच रहते हुए भी केसर के मन-
मन्दिर में शिव की मूर्ति थी और वह येन-केन-प्रकारेण शिव की प्रसन्न रखने
का प्रयास करती थी।

ऊँट घोरे पर था।

एकाएक ऊँट का पाँव बिड़का। शिव चौंक गया।

देखा—अधेरा घना होकर छा गया है।

दूर-दूर से धोरों की चोटियाँ प्रेत छायाओं-सी लग रही हैं।

तब वह कोई गीत गुनगुनाने लगा। वह गीत अधिक देर तक नहीं गुन-
गुना पाया, क्योंकि उसके मन में केसर सम्बन्धी बातें छाई हुई थीं।

एक दिन की बात है—

ठाकुर ने गाँव की एक युवती को जो अपने पति की आज्ञा की अवज्ञा करती
थी, अपनी हवेली में बुलाया। दीपहर का समय था। ठाकुराणी पीहर थी।

इसलिए ठाकुर की वितासिता में एकदम स्वतंत्रता थी। शिव ठाकुर की रेंगे के अनाज की देखभाल कर रहा था।

नाथी ने आकर उसे पुकारा। वह धूल से मरा हुआ था। नाथी ने रेंगे की ओर से उसका मुँह पोंछा। दुस्तर से कहा, "ठाकुर सा तुम्हें बुला रहे हैं।"

शिव उनके सामने हाजिर हो गया।

ठाकुर ने उसे आज्ञा दी, "इस युवती के कोड़े सगाओ।"

शिव उसे प्रश्न भरी दृष्टि से देखता रहा।

"मैं कहता हूँ कि इस छिनाल को नंगी करके कोड़े सगाओ। यह अपने एसम की बात नहीं मानती है।"

युवती रेखड़ी ने ठाकुर के पाँव पकड़ लिये।

यह बोली, "यह झूठ है, सरासर झूठ है। मैं अपने पति का हुक्म मानती हूँ।"

शिव ने अनुनय भरे स्वर में कहा, "रेखड़ी ठीक कहती है ठाकुर, दरअसल इसकी सास तुम कंजर है। यह आग उसीकी लगाई हुई है।"

शिव की यह बात ठाकुर को ठीक नहीं लगी। वह शिव को समीप ले कमरे में ले गया और उसने उसके गाल पर चाँटा मारा और उसे हिदायत दे "तू मेरी ही मे ही नहीं मिसाता, तर्क करता है। अब कभी साँते तुम गडबड़ की तो मुझसे दुरा कोई नहीं होगा।" और ठाकुर ने एक साथ हवा गालियाँ शिव को मुना दीं। शिव कुछ नहीं बोला।

ठाकुर वापस अपने कमरे में आया। उसने रेखड़ी के सतीत्व का हल किया। रेखड़ी कुछ नहीं बोली, लेकिन उसका गौरा और प्रकाशवान बंगला स्याह हो गया। उसकी आँखों में अपराध झलक उठा। वह कमरे से बाहर निकली। उसके कदम भारी थे।

शिव उसे हवेली के द्वार पर खड़ा मिल गया।

रेखड़ी ने उसकी ओर दयापूर्ण दृष्टि से देखा पर वह एक शब्द भी नहीं बोली। शिव ने उसका पीछा किया। थोड़ी दूर चलकर उसने शिव को रोका। "तुम मेरा पीछा न करो। अच्छा होता कि तुम मुझे नंगी करके पीट लेते। जानते हो, बाद में उस नीच ने मेरे साथ क्या किया?"

“जानता है।”

“एक स्त्री के लिए इसके बाद मृत्यु के सिवाय क्या शेष रह गया?”

शिव ने उसको मजबूती से पकड़ लिया, “जुल्म सहकर अपने आपको मिटा ना कायरता है। जुल्म जिन्दा रहना चाहिए। उसकी जिन्दगी से ही विद्रोह जता है। तुम्हारी जिन्दगी भुझ में और गाँव वालों में शाश्वत घृणा को उत्पन्न करती रहेगी। हमें इस बात के लिए आभाह करती रहेगी कि यह इस नीच को सताई हुई मानवी है।”

“लेकिन समाज और गाँव की उपेक्षा, घृणा, लोछन मैं कैसे सहूँगी?”

“सहना ही मनुष्य का सर्वोपरि गुण होता है। रेलड़ी यह बे-इज्जती तुम्हारी नहीं, तुम्हारे परिवार की विशेषतः उस सास की है जिसके घर की तुम ह-लक्ष्मी और कुल-वधू हो।”

किन्तु रेलड़ी पर शिव की बातों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उसने रात को ही अफीम धोल कर पी ली और सवेरे भर गई। गाँव में चर्चा थी कि सास-बहू के झगड़े में बहू ने आत्म-हत्या कर ली।

शिव को उसकी मृत्यु का सख्त अफसोस हुआ। उसने रात के समय केसर पर गुस्सा उतारा और कसम खाई कि वह सुबह होते-होते इस गाँव को छोड़ कर चला जायगा। बाद में उसे फाँसी ही क्यों न लग जाय!

केसर सुनकर सन्न हो गई।

बाहर क्षीण चाँद चमक रहा था।

झरोखे के नीचे चाँद की किरणें खेल रही थी।

केसर शिव को खींच कर झरोखे के नीचे उस हिस्से की ओर ले गई जहाँ नींद अंधियारा था। उस अंधियारे में उसने बेकसी से शिव को अपनी बाहुओं में जकड़ लिया। उसका उठता-गिरता वक्ष स्पर्श कर रहा था। वह बावली-सी गर्दन हिलाकर बोली, “नहीं-नहीं, ऐसा नहीं हो सकता, तुम नहीं जा सकते, तुम नहीं जा सकते।” उसकी साँसों में ज्वालाएँ जलने लगी और आँखों से अश्रु प्रवाहित हो गये।

“मैं जाऊँगा जरूर, मैं ऐसे पिशाच के साथ नहीं रह सकता, नहीं रह सकता। गाँव का ठाकुर होकर गाँव की बहू-बेटियों से……”

“लेकिन इसमें मेरा क्या कसूर है?”

"तुम्हारा कोई बमूर नहीं है।"

दूगरे दिन मध्याह्न केगार ने ठाकुर के समक्ष बठोर दलों में बिठिया। रेगड़ी की भीत को लेकर उसने ऐसा तूफान मचा दिया कि ठाकुर को विस्मय हुए बिना नहीं रह सका। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि जो ही गाने में बाने नाग पन रहे हैं। फिर भी वह कुछ नहीं बोला, बस मामला था, दमनिए दम बात का अधिक अनावृत्त होना मुम नहीं लग रहा। उसने अपनी पेटी को कोई उत्तर नहीं दिया। शिव को इसमें बड़ी प्रसन्नता।

रात को चांद कल से अधिक प्रकाशमान था।

शिव से केगार कह रही थी, "मैंने तुम्हारे कहने पर ही विरोध किया कि तुम यह समझ सको कि मैं तुम्हें हृदय में चाहती हूँ। तुम मुझसे सादेह की दृष्टि से देखते आये हो, पर शिव मैं तुम्हें बहुत चाहती हूँ।"

इस तरह शिव उसके प्यार में जकड़ता गया।

ऊँट तेज गति से भाग रहा था।

अन्धेरा बढ़ गया।

रात ढल रही थी।

एक बैलगाड़ी ऊँट के पास आई। बैलगाड़ी में कोई जट बैठा था। बैलगाड़ीवाला, "भाई दियासलाई है?"

शिव ने उत्तर दिया, "नहीं।"

गाड़ीवान बड़बड़ा उठा, "बीड़ी के बिना दियाग भी ठीक नहीं रहता है।"

शिव उससे दूर निकल गया था।

×

×

×

पन्द्रह दिन बीत गये।

ठाकुर राजधानी से लौटा, वह बड़ा प्रसन्न था।

दोपहर का खाना खाकर वह शय्या पर पड़ा था। एक दास पंखा झल था। उसने उसे जाने का संकेत किया। उसके जाते ही उसका स्थान दासी ने ग्रहण कर लिया, पर ठाकुर ने उसे हुक्म दिया कि वह नैना भेज दे।

नैना आकर पंखा झलने लगी।

ठाकुराणी ने आकर ठाकुर को पान बना कर दिया।

पान खाकर ठाकुर ने अपने विस्तरे के नीचे से एक छोटी-सी मखमल के ढ़े की बनी पेटिका निकाली और ठाकुराणी से पूछा, “बता सकती हो कि मे क्या है?”

“मैं क्या जानूँ!”

“बताने की कोशिश करो।”

“होगा कोई गहना।”

“केवल गहना नहीं, हमारी किस्मत।”

“सच?”

“हाँ!”

“कैसे?”

“मैं अपनी बाई सा का विवाह तय कर आया हूँ।”

“कहाँ?” विस्मित हो गई ठाकुराणी।

“सुनोगी तो मन उछल जायगा। आँखों पर विश्वास नहीं होगा।”

ठाकुर ठाकुराणी की उत्सुकता बढ़ाते हो जा रहे थे। अब वह ठाकुर पास आ गई थी। नैना ने क्षण भर के लिए अपने नयन बन्द कर लिये। ठाकुराणी ठाकुर से छीना-झपटी करने लगी। ठाकुर के हाथ से वह टिका छिन गई। ठाकुराणी ने उसे खोला—पेटिका में दो हीरों के सुन्दरतम तार थे। ठाकुराणी उन्हें देखती रही, देखते-देखते वह बोली, “कितने दाम हैं?”

“एक है तीन लाख का और दूसरा एक लाख का।”

“कितने दिये हैं?”

“राजाजी ने।”

“क्यों?”

“उन्होंने हमसे हमारी बेटी अपने मतीजे केसरसिंहजी के पुत्र अर्जुन
लिए माँग ली है। ठकुराणी, हम उन्हें इन्कार नहीं कर सके। उन्होंने हमें
‘ठिकाना’ दिया, इज्जत दी, और आज अपना समझी बना कर हमारी हानि
चार चाँद लगा दिये हैं।”

ठकुराणी के चेहरे पर प्रसन्नता नाच उठी।
नैना का मुँह एकदम पीला पड़ गया।

ठाकुर ने विहँस कर कहा, “उन्होंने तीन लाख रुपये का हार बने
सा को दिया है और यह आपको।”

‘लेकिन?’ ठकुराणी अपना हार पहन कर महमते हुए बोली,
को लकवा है। वे चल-फिर नहीं सकते!”

ठाकुर हँस कर बोले, “उन्हें सिर पर उठाकर ले जाने वाले दिनों
हैं। हजारों नौकर-चाकर और गाड़ियाँ हैं। फिर हमारी बेटी इतने बड़े
फी मालकिन बनेगी। हमारा मन आकाश को छूने लगेगा। इतने ली
होना कोई मामूली बात नहीं है। सैकड़ों ठाकुर अपनी बेटी उन्हें दे
तैयार हैं।”

ठकुराणी फिर भी विचारती रही।

नैना न चाहते हुए भी बोल पड़ी, “असह्यता खम्मा करें, नमक खाना
इसलिए छोटे मुँह बड़ी बात कर रही हूँ। आप जरा बाई सा को भी पूछते
“गोली!” ठाकुर सा गरज कर बोले, “जबान कटवा डालूँगा।”

हैसियत से अधिक बोलना ठीक नहीं है। मेरी बेटी मेरे खानदान के
रिवाजों को जानती है। मैं खुद अपना भना-बुरा समझता हूँ।”

कमरे में सन्नाटा छा गया।

नैना मुँह नीचे किये खड़ी रही।

ठाकुर ने भारी स्वर में कहा, “इस रिश्ते के तय होते ही कुछ
हम से चिड़ गये। क्योंकि यह सम्मान हमारी लगातार बिनती पर
और श्री श्री पूज्य राजाजी ने हमें पाँव में सोने का गहना भी
तीन सून माफ के हुक्म दिये हैं।”

“अच्छा।”

“और मुझे उम्मीद है कि वे बाद में मुझे अपना दीवान भी बना लेंगे हैं।”

नैना कुछ नहीं बोली। यह मन ही मन विचार कर रही थी कि यह सब का के महन है। मैं उस रासस को जानती हूँ। मैं उस बच्चे को पहचानती हूँ। बड़ा है, बदनूरत है, काला है। ऐसे को केसर जैसी बेटी देकर महापाप पाया।

साँझ तक ठाकुर ठकुराणी को इस रिश्ते के सामं समझाता रहा और बाद में विवाह की तैयारियाँ करने का हुक्म देकर खुद घूमने चला गया। भी-कभी वह अपनी रसत के बीचों-बीच अपने अहम् की तुष्टि के लिए लाजा जाता करता था।

और नना भागी-भागी केसर के पास गई।

केसर स्नान करके बाहर निकली थी। उसके सद्यःस्नात यौवन और सुपम रूप ने नैना को दण भर के लिए विस्मृत कर दिया। उस समय केसर बहुत प्रफुल्ल दीप्त रही थी। उसके रेशमी अधरो पर मादक मुस्कान थी। उसकी आँखों में तरुणार्द्र की क्षांतिकी एक अनिश्चित भावना थी।

नैना को एकदम चुप देखकर बोली “काकी, क्या बात है?”

नैना कुछ नहीं बोली, यह प्रश्न भारी दृष्टि से केसर को देखती रही, पर उसकी अनावेदना और अन्तर्द्वन्द्व केसर की आँखों से न छिप सका। वह उसके पास आकर बोली, “क्या बात है, तुम कुछ कहना चाहती हो?”

काकी ने कृत्रिम हँसी के साथ कहा, “तुम बड़ी भाग्यवान हो, भगवान् तुम्हारे होठों पर यही मुस्कान रखें।”

केसर गम्भीर हो गई।

“तुम्हारा विवाह भी बहुत बड़े ठिकाने में हो रहा है। तुम रानी से कम सुख नहीं भोगोगी। वहाँ तुम रानी कहलाओगी।”

नैना यह कहकर चलती गयी।

केसर किकर्तव्यविमूढ़ बनी खड़ी रही। नैना उसके सोचते-सोचते उसकी आँखों से ओझल हो गई।

नैना अपनी कोठरी में आकर बैठ गई।

शिव पुस्तक पढ़ रहा था। वह पुस्तक पढ़ने में इतना लम्बे था कि उसे यह भी पता नहीं चला कि माँ कब आई और कब वह इस तरह सोई। वह बीमार सी लगती थी। जब उसने पुस्तक का अध्याय समाप्त लिया, तब वह उठा और पुस्तक को रखते हुए पूछा, "माँ, आज तुम क्यों हो?"

नैना के तप्त हृदये से एक दीर्घ उसाँस निकली और वह हँसे। स्वर में बोली, "आज बड़ा अनर्थ हो गया है।"

"कौन-सा अनर्थ?" शिव ने पूछा।

"केसर का विवाह तय हो गया है।"

ज्वालामुखी फूट पड़ा हो और घरती के छोटे-छोटे अनेक टुकड़े हैं, ऐसा ही शिव को अनुभव हुआ। जैसे उसके स्वप्न-लोक का संसार खण्ड हो गया हो। वह कुछ क्षण तक अपने मुँह से शब्द नहीं निकाल सका अन्त में वह बड़ी कठिनता से बोला, "तुम्हें किसने कहा?"

"बुढ़े ठाकुर सा ठकुराणी सा को कह रहे थे। विवाह ठाकुर केसरीसिंह के बेटे से निश्चय हुआ है। वह लड़का अपंग है। उसे बचपन में ही मार मार गया था।"

"बया कहती हो?"

"ठीक कहती हूँ बेटा, तुम्हारा बाप ठाकुर केसरीसिंह के जुत्तों की ब. नियाँ खूब सुनाया करता था। वह आदमी नहीं, पूरा राक्षस है। उसने ब. में इन्सानियत को सदा अपनी शैतानियत से दबाया है। उसका बेटा बचपन नहीं सकता, बंदसूरत है और अगर बाप के रक्त से उसकी रबता हुई तो अरपन्त आवारा भी होगा।"

शिव की अपनी माँ की बात का विश्वास नहीं हो रहा था। वह ब. विचलित हो कर हवेली की ओर चला। हवेली में यह खबर हवा की तरह फैली चुकी थी। दाम-दामियों में इसकी खर्चा जोरों पर थी।

शिव शीघ्र ही केसर के पास गया।

केसर अपने खुले बालों को सँवार रही थी। खुले कुन्तलों में वह ब. में धनित अंगरा-सी लगती थी। शिव को देखकर वह और अनजान बन गई।

शव उसके सम्मुख खड़ा हो गया। उसकी आकृति उदास थी और दृष्टि में रोप की स्पष्ट रेखाएँ।

“क्या बात है? आज मुँह फुलाकर क्यों खड़े हो?”

“बघाई है तुम्हें!”

“बघाई, किस बात की, जरा हम भी सुनें।” केसर ने नाटकीयता से कहा।

“तुम्हारी सगाई हो गई है।”

केसर को विश्वास नहीं हुआ। वह शिव का हाथ उत्तेजना से पकड़ कर बोली, “यह तुम क्या कहते हो? यह झूठ है, झूठ है।”

“मुझे झूठ बोलने की आदत नहीं। मैंने जो कुछ सुना है, वह तुम्हारे सामने वैसा का वैसा रख दिया। प्रमाण के लिए अब तुम्हें स्वयं अपनी माँ से पूछ लेना चाहिए।”

“मैं जाकर अभी पूछती हूँ।” वह हवा की तरह बाहर गई।

शिव वहाँ से वापस अपनी कोठरी में आ गया।

दीवार पर घूमती छिपकली ने मक्खी को दबोच लिया। मक्खी तड़पती रही। उसके छोटे-छोटे पंख फड़फड़ करते रहे, पर छिपकली के जबड़ों से वह नहीं छूट सकी। देखते-देखते वह मक्खी को निगल गई।

छिपकली और ठाकुर।

मक्खी और वह, उसकी माँ, सैकड़ों दास-दासियाँ और ग्रामीण रैयत।

विपाक प्रहार और मृत्यु।

छिपकली का मुँह अभी भी हरकत कर रहा था।

शिव ने एक पत्थर उठाया और छिपकली पर दे मारा। छिपकली तुरन्त भाग गई। वह गुस्से से ऐँठकर रह गया। आत्म-पीडा में वह जल उठा।

अभी दो क्षण भी नहीं बीते थे कि छिपकली एक बिच्छू को अपने मुँह में दबाये हुए आई। शिव उसे देखने लगा। देखता रहा। बिच्छू भी मक्खी की तरह अपने प्राणों को छुड़ाने के लिए प्रयास कर रहा था, पर छिपकली उसे लिए दीवार से चिपकी हुई थी।

शिव ने फिर सोचा—जहर को जहर ही काटता है। जो जहर जितना तेज होगा वह उतना ही भयंकर होगा। ठाकुर गाँव की बेटियों को अपने जुलूम का शिकार बनाता है और राजाजी उसकी बेटी को सदा के लिए जीवित मौत

दे रहा है। उसकी आन्तरिक धृणा फुस्कार उठी। उसकी इच्छा हुई।
जोर का अट्टहास करे। वह जोर से उछले-कूदे।

छिपकली = राजाजी !

बिच्छू = ठाकुर !

मोन अट्टहास !

"शिव है ?" बाहर से केसर ने उसे पुकारा।

शिव ने प्रत्युत्तर नहीं दिया।

केसर कोठरी में आई।

"मैंने तुम्हें पुकारा था।"

"मैंने नहीं सुना।"

"सरोखे में चलो।"

"नहीं।"

"क्यों ?"

"जाना ठीक नहीं है।"

"मैं तुमसे विनती करती हूँ। थोड़ी देर के लिए वहाँ चलो।"

"चलने से कोई लाभ नहीं होगा। अब खेल खरम हो चुका है।"

"नहीं हुआ है। मैंने माँ से कह दिया है कि यह विवाह नहीं होगा।"

अगर मेरा विवाह उस लूले-लंगड़े से जबरदस्ती कह दिया तो मैं अपने प्राण त्याग दूँगी।

"तुम्हारी माँ ने क्या कहा ?"

"कहा, यह बात सच नहीं है।"

"तुम्हें पोल्टा दिया है माँ ने।"

केसर को यह बात बुरी लगी। वह जानती थी कि माँ उसे हरव के हों करती है। यह उससे मिथ्या भाषण नहीं कर सकती। माँ केसर-नाज़नी के छल-प्रपंच नहीं कर सकती। अतः यह तनिक रूष्ट होकर बोली, "मेरी माँ तुम्हें कभी भी पोल्टा नहीं दे सकती। मैं उसको एकसौ-ती बेटी हूँ। वह माँ के एकसौ-ती बेटी को किस तरह नरक में धोके सकती है !"

शिव को केसर पर तरस आ गया। बोला, "मनुष्य की तुम्हारी हानि है। तुम्हारा भूला इमान अपनी एकसौ-ती सखाय को हो गई

लिक अपने आपको स्वार्थ के लिए दाव परसगा देता है। तुम्हारा बाप दूसरी गह अपमानित और बेइज्जत होकर आया। संयोगवश इस गाँव में कई त्याग हो गई, फलस्वरूप उस जमींदार को यह गाँव छोड़ना पड़ा। वस्तुतः एक हाथ का सुखी सम्पन्न घर चन्द स्वार्थी राजकीय मामलों से देखा नहीं गया। अब वह जमींदार हरिद्वार में अपने जीवन के शेष दिन गुजार रहा है और तुम्हारा बाप अपना सर्वस्व बलिदान करके इस प्रान्त के ठाकुरों को मोचा दखाना चाहता है। लेकिन इन ठाकुरों के आपसी द्वेष को तुम नहीं जानती। मेरे दोस्तों पर हँसी लिये हुए ये आदमी को जान से मरवा देते हैं। तुम्हारा बाप अब तुम्हें दाँव पर लगाना चाहता है। उसे उम्मीद है कि वह इस रिश्ते से इस राज्य का दीवान बन जायगा।”

केसर ने कहा, “मैं अभी ठाकुर सा के पास जाती हूँ।”

केसर चली गई।

ठाकुर घूम कर आ गया था। वह भोजन करके हवेली की छत पर टहल रहा था। केसर उसके मम्मुख लड़ी हो गई। ठाकुर देखकर उसके समीप आया। सिर पर हाथ फेर कर वह बोला, “क्या बात है साड़ी, कुछ कहना चाहती हो?”

“हाँ!”

“कहो?”

“आप गुस्सा न होइएगा।”

“क्यों, क्या कोई बुरी बात कहने जा रही हो?”

“शायद वह आपको बुरी लगे।”

“मुझे तुम्हारा कहा कुछ भी बुरा नहीं लगेगा।”

केसर की आँखें पहले ही सजल हो गईं। कण्ठ अवरुद्ध-सा हो उठा। वह साहस बटोर कर बोली, “मैंने सुना है कि आप मेरा विवाह कर रहे हैं।”

ठाकुर के कान खड़े हो गये। कड़क करके बोले, “ऐसे सवाल खानदानी लड़कियों को नहीं करने चाहिए। लड़की के विवाह के बारे में उसके माँ-बाप सोचते हैं। जाओ, भविष्य में ऐसी गुस्ताखी नहीं होनी चाहिए।”

केसर आगे नहीं बोल सकी। ठाकुर की आग बरसाती आँखें वह नहीं सह सकी। पराजित-सी आकर झरोखे में खड़ी हो गई। शिव वहाँ नहीं था। वह

वापस चला गया था। उसे रात को तैयार होकर जनानों इपौड़ी के जाना था। केसर शरीरे की दीवार का सम्बल लिये सड़ी थी।

धीरे-धीरे रात घनी हो गई थी। नाथी ने आकर उसे साने को कहा। केसर चिल्ला पड़ी, मानो देर से अपने मन के उद्वेग को दवाये हुए बैठी थी। उसका चिल्लाना सही था। नाथी के अंग-अंग में सिहरन दौड़ गई। वह एकटक केसर की लगी, जैसे वह कुछ जानना चाहती है कि आज केसर को क्या हो गया।

"तू मुझे इस तरह क्यों घूर रही है?"

"आपकी तबीयत ठीक है न!"

"क्या मैं तुझे बीमार लग रही हूँ?"

"बीमार तो नहीं, पर मुझे भ्रम हो रहा है कि आपको कोई छाया (पुल) लग गई है। एकाएक इस तरह चीखना और अबीब आँखों से घूरना, उनी लक्षण हैं।"

केसर को गुस्सा आ गया, "क्या बकती है!"

"राम-राम!" नाथी बड़बड़ाई, "अरु इसमें कोई बदमाश छिपी है। वह बहुत आतंकित लग रही थी।

केसर से अब नहीं रहा गया। वह अपना घैयें खो बैठी। उसने नाथी के पकड़ कर धकेल दिया। वह गिर पड़ी। भागी और उसने जाकर ठकुराणी को खबर कर दी। ठकुराणी तुरन्त आई। केसर ने चिढ़ते हुए "इस रांड को मेरे पास मत भेजा करो, इसका माया खराब हो गया है।"

ठकुराणी ने नाथी को वहाँ से हटा दिया। खुद केसर के पास बैठती उसे पुचकार कर पूछा, "क्या तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है। बीछ जी।"

"बुलाऊँ? ओझा जी मे मंत्र का पानी मँगवाऊँ?"

"नहीं माँ, मैं बिल्कुल ठीक हूँ। मुझे किसी तरह का तन का 'रोग' है। मन अवश्य खराब है। ठाकुर सा के पास गई थी। उन्होंने मुझे दिया। माँ सा आपको मेरी सौगन्ध है अगर मुझसे कुछ छुआया तो।"

ठकुराणी पुनः गम्भीर हो गई। उमने दीया जलाने को कहा। शरीरे में दीया जल गया। दीप के प्रकाश में ठकुराणी ने केसर का हुआ मुँह देखा। ठकुराणी को लगा कि उसकी बेटी कई रोज से बीमार

का सोन्दर्य मुक्त मुख पीला पड़ गया है। उसके अन्तर्ग में एक टीस-सी
 है। स्नेह से बोली, "मैं तुम से कुछ भी नहीं छुपाऊँगी, सच-सच कहूँगी।"

"क्या मेरा होने वाला पति लकवे का मरीज है?"

"हाँ!" माँ का सिर नीचा हो गया।

"और आप मुझे.....।"

"तुम्हारे पिता जी विवश हैं। तुम जानती हो कि जब तुम्हारे बाबा ने
 मे अपने राज्य से निकाल था तब महाराजा श्री खेतीसिंह ने हमें ठिकाना और
 ममान बरशा था। अब उन्होंने ही तुम्हारे बाप से तुम्हें माँग लिया है, फिर वे
 राजाजी को कैसे इन्कार कर सकते! एक बात और है कि टाँगों पर लकवा
 होने से क्या अन्तर पड़ेगा। उनके सँकड़ो नौकर-चाकर है, बेटी, मैं भी तुम्हारे
 सामने झोली फैलाती हूँ कि तुम अपने बाप को नाराज न करना। उनका
 गुस्सा बड़ा तेज है।" वह कुछ देर चुप रही। दीपक की लौ पर एक पतला
 भाकर जल गया। पवन का हल्का झोका लौ में कम्पन उत्पन्न कर रहा था।

"भविष्य भी देखना पड़ता है। आने वाली पीढ़ी के लिए भी सोचना
 हमारा कर्तव्य है। क्षत्राणी घर की श्रेष्ठता नहीं, कौटुम्बिक गौरव को देखती
 है। तुम ठाकुर श्री केसरीसिंह के सुपुत्र की पत्नी बनोगी। क्या यह हमारे
 लिए कम गौरव की बात है?"

"लेकिन भविष्य और आने वाली पीढ़ी.....।"

बीच में ही माँ बोली, "लाज आती है पर कहे बिना रहा भी नहीं
 जाता। निरन्तर ओझा जी के आशीर्वाद से मुझे 'पेट' रह गया है। महादेव जी
 की कृपा हुई तो इस बार बेटा ही होगा। तुमसे राखी बँधाने वाला भाई।"

"माँ सा?"

"हाँ बेटी मैं १८ बरस के बाद माँ बन रही हूँ।"

केसर का सिर झुका गया।

"अब दूसरा पहलू तुम्हारे सामने रख रही हूँ। अगर तुमने जहर खा लिया
 तो हम दर-दर के भिखारी हो जायेंगे। इस ससार में हमें पानी पिलाने वाला
 भी नहीं मिलेगा। मेरी दुर्दशा उन अभागिनों से कम नहीं होगी जिनके बच्चे
 गलियों में ही पैदा होते हैं, ठोकरें खाकर बड़े होते हैं और अभागों में ही मर
 जाते हैं। तुम इतना जल्द जानती हो कि राजा, योगी, अग्नि, जल, इनकी

उल्टी रीति है। जब राजा प्यार करते हैं, मूख करते हैं। इनके दिमाग में
ने किसी के गिराफ कोई बात बिठा दी तो फाँसी पर पड़वाते देखते
सगाते। अब तुम मुझ गमनदार हो। अपना और अपने कुटुम्ब का
सोच गमनी हो।”

केसर आँगू बढ़ाती रही।

“मुझे भी सूना-नंगड़ा जैसा पसन्द नहीं है। क्या कोई मैं इतनी
हो सकती है कि वह अपनी दफतीली घेटी का पति अपंग लाएगी? अर्थात्
उसके भी अपने अरमान होते हैं, सामंता और उमंग होती है। किन्तु मर्ग
के सामने मयको गुप्त रहना पड़ता है।” ठकुराणी उठ गई थी और
बतती यह योनी, “तुम मेरी घेटी हो। क्षत्राणी हो। वह जहर भी हँसते-हँसते
पी जाती है। कृष्णा कुमारी का नाम सुना होगा। उदयपुर की
थी। माँ-बाप की रक्षा के लिए अपने हाथों से जहर पी लिया था।”

ठकुराणी खनी गई।

केसर अकेली रह गई। आज उसे दीपक का प्रकाश अच्छा नहीं लगा।
उसने फूँक मार कर उसे बुझा दिया। झरोखे में घोर अन्धकार छा
तारों का मद्धिम प्रकाश पड़ने लगा। केसर ने अपने नयन बन्द कर लिये।

कल्पना लोक में सागर की लहरों पर उसने अपने आपको
हुए पाया।

कहीं भी किनारा नहीं। कोई भी सहारा नहीं।

एक परिचित दूरागत ध्वनि—

वह सिहर कर काँप उठी। हडबड़ा उठी। अपने आपको झरोखे में
उसे असीम धर्म व सान्त्वना मिली।

उसने नीचे झाँक कर देखा—शिव निश्चल खड़ा हुआ पहरा लगा
है।

कुँवारी रात धीरे-धीरे पाँव बढ़ा रही थी।

केसर सोच रही थी, “क्या सोच रहा होगा यह? क्या मैं फिर
इसके सामने जा सकूँगी? नहीं! कौन-सा मुँह लेकर जाऊँगी शिव के
जिसको मैंने प्रेम का वचन दिया। जो मुझे चन्द्रावली के रूप में देख
चाहता था। अब वह मुझे पराई बनते देखकर क्या सोचेगा? वह यह

के मैं गुलाम हूँ और गुलाम का जीवन मालिक के मन की खुशी के लिए ही होता है, ठीक एक खिलौने का तरह।" वह विचलित हो गई। सबकी दृष्टि उठाकर वह शिव के पास आई। भरे हुए स्वर में बोली, "मुझे क्षमा कर दो शिव, मुझे पता नहीं था कि जीवन इतना जटिल है। एक के पीछे कईयों की खुशी जुड़ी है, यदि वह पहले जान पाती तो मैं तुमसे प्यार नहीं करती। इतने भारोंसे नहीं देती।"

शिव ने उसे उठाकर कहा, "दुःख क्यों करती हो। माँ-बाप के लिए सन्तान को बलिदान होना ही चाहिए। यही हमारी परम्परा और धर्म है। चाहे माँ-बाप अनर्थ ही क्यों न करें!"

"जब परिस्थिति उत्सर्ग कराती है तब हमारे इरादे टूट जाते हैं। शिव मेरे शब्दों को तुम भावुकता समझ कर आत्मसात् भले ही न करो, लेकिन इतना जरूर कहूँगी कि मुझे तुम्हारे बिना कभी भी सुख नहीं मिलेगा।"

शिव ने उत्तर नहीं दिया।

"तुम दुःखी हो। शायद अब तुम्हें जीना ही गवारा नहीं हो सकेगा, किन्तु इसना ध्यान रहे कि मैं जो कुछ भी कर रही हूँ, मजबूरी से कर रही हूँ।"

केसर चली गई। शिव पत्थर की मूरत की तरह खड़ा रहा।

X

X

X

ठाकुर ने अपनी बेटी के विवाह के लिए अत्यन्त अनुचित तरीके से गाँव वालों से रुपये वसूल किये। इस वसूली में बेचारे कई किसान साहूकार के कर्जदार हो गये और दो-चार को अपने खेत भी गिरवी रखने पड़े। एक बार कई किसान ठाकुर के पास फरियाद लेकर गये भी, पर उससे कोई लाभ नहीं हुआ। चला ठाकुर ने उन्हें नमकहराम और गद्दार कहा। दो-तीन जनों

ने देने में अनाकानी की तो ठाकुर के आदमियों ने उन्हें खूब मारा-पोटा, घरों
विरोधात्मक रवैया खत्म हो गया। हालाँकि शिव ने तोताराम के बेटे मुले
को शहर भेजा था कि वहाँ जाकर कांग्रेस के नेता आत्मारामजी से मिले,
क्योंकि आत्मारामजी ने राज्य की कुव्यवस्था के प्रति राजाजी के विरुद्ध
आन्दोलन छेड़ने की धमकी दी थी।

इस बसूली में ऊमले जाट की घटना अत्यन्त हृदय-विदारक थी।
एक दिन अचानक ठाकुर के चार-पाँच आदमी ऊमले के घर आये। उनके
का घेटा उस समय सख्त बीमार था। ऊमले ने उनसे प्रार्थना की कि अभी
एक पैसा भी नहीं दे सकता। हाँ, दो-चार दिन में व्यवस्था करके अवश्य दे
दिया। पर ठाकुर के आदमी नहीं माने। उन्होंने ऊमले को घमकाना शुरू
उसकी लुगाई की भयभीत आवाज आई और वह भीतर चला गया।

उसके भीतर जाते ही ठाकुर के आदमी नाराज हो उठे और वे ऊमले से
गाली-गलौज करने लगे। ऊमले ने हाथ जोड़कर कहा, "अभी आप चले जायें
मेरे घेटे की तबीयत खराब है।" पर वे नहीं माने। साधारण ऊमले को दुप
आ गया और उसके मुँह से एक साधारण अपमान सूचक शब्द निकल पड़ा।
फिर क्या था! ठाकुर के आदमी उसे बुरी तरह मारने लगे।
उसकी कराह सुनकर उसकी बहू आई। उससे अपने पति को रिद्धे रू
देखा गया। उसने तुरन्त चाकू से अपने सिर का 'बोर' काट कर दे रित।
हाथ की छूटियाँ और नाक का काँटा तक दे दिया।

बारिन्दे लेकर चले गये।
आपे घण्टे तक ऊमला बेहोश पड़ा रहा। जब वह होश में आया, हा
उसका घेटा सदा-सदा के लिए बेहोश हो गया था। वह इस सड़ने को ग
सह गया। वह अपने बच्चे को लेकर रास्तों में भाग चला। उसकी बहू
गलियाने कुछ देर तक नहीं समझे, किन्तु बाद में लोग जान गये कि उ
पागल हो गया है। और एक दिन उमने उन्मादित अवस्था में ठाकुर के
बारिन्दे को जान में मार डाला। साधारण उसे पागल माने भेज दिया गया।

शादी की शहनाई बजने लगी ।

बड़ी बारात आई । खुद एक दिन के लिए राजाजी भी आये ।

सारे किसान ठाकुर की बेगार में पिसते रहे ।

बारात में शराब, अफीम और भाँग खूब उड़ी । हवेली की तमाम दासियाँ
बारातियों के विलास की शिकार बनी । विवाह सम्पन्न हो गया ।

ठाकुर ने दहेज में धनराशि के अतिरिक्त दीं, पाँच दासियाँ जिनमें नैना
भी थी और पन्द्रह दास जिनमें शिव भी था ।

बारात लौट पड़ी ।

साधूपुर ।

विशाल महल ।

सुहागरात ।

दुल्हन बनी केसर वरामदे में खड़ी थी । चाँदनी चारों ओर छिटक रही
थी । हवा ठण्डी थी । वह नीचे हो रहे शोरगुल से परेशान थी । ठाकुर केसरी
पर्सिह ने बेटे की विवाह की खुशी में पातुरों की बड़ी महफिल की थी । केसर
को यह कुछ भी पसन्द नहीं था । वह शान्ति चाहती थी, मृत्यु-सा सपना ।

दासी ने आकर दूध रख दिया ।

केसर ने नहीं पिया । वह खड़ी रही । केसर ने उसे आज्ञा दी, "तुम चली
जाओ, मुझे अब जरूरत होगी, घुला लूँगी ।

दासी चली गई ।

वही नीरवता ।

उससे अब अपने अन्तस् की आकुलता नहीं सही गई । वह छत पर आ
गई । छत से पातुरों का नृत्य दीख रहा था । वह वासना में उन्मत्त व्यक्तियों
को देख रही थी जो स्वयं के हार उन पातुरों को पहना रहे थे ।

तभी गाना बन्द हुआ ।

अनूपसिंह ने सोने की इच्छा प्रकट की । एक मुन्दर कुर्सी पर चार दास
उसे बिठाकर ऊपर की ओर चले । केसर तुरन्त कमरे में आ गई और घूँघट

पीचकर चरामदे में सड़ी हो गई। आंशुका और आनुरता से उसका हँस पड़कने लगा। वह दीवार को पकड़ कर खड़ी हो गई।

चार दास आये और अनूपसिंह को पलंग पर सुला गये।

नैना ने आकर कहा, “कुँवर सा आ गये हैं।”

केसर घायन की तरह तड़प उठी। वह चीयना चाहती थी, परन्तु विवेक ने उसे रोक दिया। पता नहीं क्यों उसके मन और हृदय पर शिव सलोनी मूरत छा रही थी। वह कल्पना कर रही थी कि वह शिव के हाथों धाँदनी में बँधी हुई है। उसका अपूर्व यौवन अपने उन्माद की जीवन में छिपा सका है। कयामत छा रहा है। उसकी मणिघर की मणि सी दीवारों में अतृप्ति में दहकते अधर ! शिव उन्हें निहार रहा है। वह निर्दयी तड़पा-रत कर उसके अधरों को पी रहा है और वह खुद उसे बाहुओं में भर कर अपने वन गई है।

“बलो बेटी, तुम्हारा बूल्हा तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है।”

केसर चली।

फूलों से सज्जित शय्या पर लेटा था—उसका पति।

उसने उसके चरण-स्पर्श किये।

“धूपट हटाओ !”

केसर खड़ी रही, इस प्रतीक्षा में कि वह उठकर ही उसका धूपट हटा देगा। अब उसकी साँस तेज चलने लगी थी। अनूपसिंह की आँखों में एक पिनोनी भूख झाँकने लगी।

“धूपट उठाओ कुँवराणी जी !”

केसर ने उसकी ओर देखा। अनूपसिंह उसकी ओर सलबाई नज़र से निरन्तर दे रहा था। इस बार केसर ने उसे कुछ क्षणों तक देखा। उसको लगा कि उसके पति की आँखों में वासना के अतिरिक्त विवशता है। वह उसके पास गई। पास जाकर गर्दन मोची करके खड़ी हो गई। अनूपसिंह ने उसका धूपट उठाया। प्रियतमा के जलते हुए रूप को देखकर वह जड़ हो गया। एकता-एकता बोले,

“पास नहीं आओगी ?”

केसर उसके पास बैठ गई।

“मुझे इस भोतल में से धराब पिताओ ,”

“नही कुंवर मा, शराब अच्छी चीज नहीं।”

“क्यों?”

“यह आदमी को चुरा बना देती है।”

“नही, मुझे यह बड़ा सहारा देती है। पिना दो न!”

केसर ने उसके आपस को टालना ठीक नहीं समझा। उसने एक गिलास भर कर उसे पिला दिया।

“मुझे बिठा दो।”

केसर ने अनूपसिंह को महारा दिया। यह बैठ गया। तब अनूपसिंह ने केसर को खींच कर अपने पास बिठा लिया। उसकी भाँति नाग-फौस-सी केसर के उन्मादित पीड़ित यौवन के चारों ओर लिपटने लगी। अनुभूति हीन परस्पर की प्रतिमा की भाँति निश्चयन बैठी रही केसर। अब अनूपसिंह ने उसे प्यार किया। उसे इतने जोर से दरिन्दे की तरह काटा कि वह सड़प उठी। “भीर रात होगी खेत में समाप्त हो गई।

दूसरी रात भी केसर ने अनिच्छा से सब कुछ किया।

तीसरी रात केसर ने एक सत्य को जाना कि अनूपसिंह नपुंसक है। लफ्फा उसके निचले पूरे हिस्से को मार गया है। तब उसकी दुर्दमनीय प्यास भड़क उठी।

शय्या सजी है।

दो बड़े-बड़े काँच के कलारमक लैम्प जल रहे हैं।

केसर उदास-सी आहत-सी बरामदे में खड़ी है। आने के बाद उसने शिव को नहीं देखा था। उसने प्रयत्न भी किया, पर शिव उसे टालता रहा। तभी प्रागर्ध—उसकी दासी सूँडकी। आते ही बोली, “कुंवराणी जी, आज मुझे आपकी नई साड़ी चाहिए।”

“क्यों?”

“वे लीट आये हैं।” सूँडकी के स्वर में कम्पन था। आँखों में मस्ती।

“तू उन्हें प्यार करती है?”

“वे मुझे भोत (बहुत) चाहते हैं। अपने जी से भी ज्यादा। देखिए न!”

उसने चरण-स्पर्श किया, जैसे वह केसर से पहले ही क्षमा माँग रही है। बोली, “मुझे देखते ही कोठड़ी में घुस गये। हाय राम, तनिक भी

नहीं। कुंवराणी जी, पर मैं भी उन्हें कैसे नाराज कर सकती हूँ? जना
उफ! जीवन में सबसे भीठा लगता है।”

“नैना से जाकर कह दे, वह तुझे एक धोती दे देगी।”

दासी चली गई।

केसर का हृदय जल उठा। संयम विद्रोह कर उठा।

उसका पति उसके धायल मन को नहीं सहता सकता। उसकी पुष्टि
नहीं मिला सकता। उसकी व्यास को नहीं बुझा सकता। सचमुच वह
है। “और वह भाग कर दर्पण के सम्मुख गई। उसने अपने आपको देखा।
अप्सरा!

सच, ऐसे यौवन को देखकर ही दाढ़िभ स्वतः ही फट पड़ता है, रक्त
घटल जाती है और तपस्या भोग के रू में खण्ड-खण्ड होकर मरिचक
हो जाती है। “आदमी जिसे देखकर धायल होकर तड़पता है।
मैं “अभागो! श्रापित इन्सान की तरह अभिशप्त! मेरे रूप की नि
रियां धूम्र में तड़पकर रह जाएंगी।

गुलामों की हुंकार सुनाई पड़ी।

केसर सावधान हो गई।

गुलामों ने लाकर अनूपसिंह को सदा की तरह पलंग पर पड़ा
केसर को लगा—देवता का अभिशाप उसमें तिपटने के लिए आ गया है।
धूणा से अपने पति की ओर देखा। वह एक बेडोल हँसी, हँस रहा था। उस
का कारण केसर नहीं समझ सकी, बल्कि वह चाँद की ओर देखने लगी।

“नैना!” जोर से पुकारा अनूपसिंह ने।

नैना अनूपसिंह के सामने गर्दन झुकाकर सड़ी हो गई।

“जा, अपनी बाईसा को बुला ला।”

नैना केसर के पास आई। अदब से बोली, “बाई सा, आप चलिए।”

केसर तड़प कर तेज स्वर में बोली, “कह दीजिए कि उसके पेट में क्या
वह कुछ देर बाद आयेगी।”

नैना का मुँह भय से विरुद्ध हो गया। वह सहमी-सी पुनः अनूपसिंह
पाग आई। आकर उसने केसर के कंधन को छुहरा दिया।

“उन्हें जाकर कहो कि हम उनके लिए हीरे की अँगूठी लाये हैं।”

नैना फिर उसके पास आई। केसर ने कह दिया कि वह दर्द के मारे अभी आ सकती। तब अनूपसिंह ने शराब पीना शुरू कर दिया। उसने अपने प की अँगूठी को निकाला और बार-बार देखा। देखने पर उसकी मुद्रा में हृति के भाव उभर आते थे। उसने नैना को पुकारा, "तू जाकर उसे कहती है नहीं? उसे जाकर कह कि यहाँ हमारा हुक्म चलता है। हमारे हुक्म को मानने का मतलब ठीक नहीं होगा।"

नैना ने अनूपसिंह का हुक्म केसर को सुना दिया।

केसर अब उसके पास आई। अनूपसिंह ने दहाड़ कर कहा, "तुम इतनी री से बर्बो आई?"

"मेरे पेट में दर्द है।"

"दर्द है या मुँससे घृणा है?"

केसर चुप रही।

"चुप क्यों हो? शादी के पहले बाप को क्यों नहीं कहा कि मुझे एक अपंग मत ब्याहो। तब तो तुम्हारा बाप आकर गिड़गिड़ाया, बोला, 'मेरी बेटी कवित्री-अनुसुइया है। मेरी पगड़ी आपके पाँव में है।' देखो, भविष्य में दर्द भय देखकर हो।"

केसर ने गहुरा भीन धारण कर लिया। अनूपसिंह ने शराब का आधा ग्लास और पिया। उसने केसर का हाथ पकड़ कर अपनी बाँहों में खींचा।

केसर ने नयन बन्द कर लिये।

एक चित्र उसके मस्तिष्क में नाच उठा।

एक राजकुमारी थी। रूपनगर की अत्यन्त रूपवती कन्या। उससे एक दैत्य विवाह करना चाहता था। जब वह दैत्य उसे नहीं पा सका तब उसने मायावी साँप का रूप धारण करके उसके महल में प्रवेश कर लिया। रूपवती, चौखना चाहती थी, सभी साँप बोला, "चीखने के साथ ही मैं तुम्हें डस लूँगा।" त्रैचारी राजकुमारी चुप हो गई। तभी उसका बाप आया और उसने तलवार से उस मायावी दैत्य का अन्त कर दिया। बेटी बाप को इस बोरता पर मुग्ध हो गई और उसने अपने बाप की कविता में भी तारीफ की। लेकिन उसका बाप राज्य का लालची था। वह चक्रवर्ती सम्राट बनना चाहता था। उसका प्रतिद्वन्दी नागपाल था। उसका एक बेटा था सिंहपाल। सिंहपाल को देवता:

का शाप था। इसलिए उसका निचला आधा अंग पत्थर का था।
 का दीवाना रूपवती का बाप उसे परास्त करना चाहता था। कई बार
 भा किये गये पर रूपवती के बाप को हर बार मुँह की खानी पड़ी।
 लालसा को सफल होते न देखकर उसने नागपाल को कहलवाया कि शक्ति
 भी तरह उसकी आधीनता स्वीकार कर ले। नागपाल ने उससे निवेदन
 कि वह अपनी पुत्री का विवाह मेरे शापित पुत्र से कर दे तो मैं उसकी
 नता स्वीकार कर सकता हूँ। रूपवती का बाप तुरन्त विचार हो गया
 रूपवती का विवाह सिंहपाल से हो गया।

उसके पश्चात् की कहानी बड़ी मार्मिक थी।
 रूपवती श्रृंगार करके बैठती थी। धीरे-धीरे वह पूर्ण यौवना अपनी
 पिपासा में दहन होने लगी। कठोर सामान्ती शासन और उसका उन्माद!
 रात-रात भर पगली की तरह महलों की छतों पर दौड़ती रहती थी। एक
 उसने अवृष्टि की दुनिया और दुःमह्य जलन में विषयान कर लिया।
 केसर का शरीर पसीना-पसीना हो रहा था।

वह भावामिभूत सी बंठी रही।
 उसे लगा कि जलती हुई उँगलियाँ उसके अंगों पर दौड़ रही हैं।
 उसके अधर पर किसी के होठ झुके हैं।
 वह भी अपने पति से लिपट गई।
 कुँवारी रात किसी पातुर की रागिनी से उन्मत्त हो उठी।
 कुँवारा जीवन बीज धारण के लिए तड़प उठा।
 विविध नशा केसर के मन पर छा गया। वह विस्मृत सी अपने
 समर्पण करने लगी। नारी की स्वाभाविक पिपासा कोमलतम हो गई।

गई।

“तुम मुझे बहुत प्यार करते हो?”

“हाँ कुँवराणी, अपने प्राणों से भी अधिक चाहता हूँ।”

“मच?”

“आँखें खोलो, देखो मैं तुम्हारे लिए रत्नमयी अँगूठी लाया हूँ।”

“मुझे पहना दो।”

“अरे वह नीचे गिर गई।”

“उठाओ न !”

“कैसे उठाऊँ । तुम नहीं जानती...!”

केसर के नयन खुल गये । स्वप्न टूट गया । दंभे फूटकार कर उठा । गोवन रख पड़ा ।

“छोड़ दो मुझे !” वह बग्यन भुक्त होकर सड़ी हो गई । धिल्लाकर वह बोली, “मुझे नहीं चाहिए तुम्हारी ये रत्नबद्धित धेगूठियाँ, मोने के हार, धन लास और मुल । मुझे चाहिए—पीरपमय पति । एक सम्पूर्ण पुरुष !” कहकर वह बाहर चली । अनूपसिंह उसे पकड़ने के लिए सपटा, पर वह पलंग के किनारे गिर गया । नैना जोर से धिल्लाई । दाम आये और अनूपसिंह को वापस ठामा । उसने तुरन्त अन्तःपुर में जाने की इच्छा प्रकट की । दाम उसे ले ले । अपनी माँ मूरज कुँवर के ममल अनूपसिंह ने केसर की उद्दण्डता का जेन किया ।

मूरज खूँखार स्वभाव की थी । कूटनोतिज्ञ और चतुर थी । तुरन्त केसर : पास आकर बोली, “पहली गुस्ताखी है, इसलिए माफ करती हूँ, यहाँ कोड़े खान लिबवा दूँगी । हमारे कुटुम्ब में पत्नियाँ सर्वेश्वर बलिदान करती हैं, न कि लूले-लैंगड़े या कुरूप पति की उपेक्षा ।”

दूसरे दिन से ही चार गुताम हिजड़े केसर के कमरे के आगे पहरेदार के रूप में आ गये । अब केसर उसकी आज्ञा के बिना बाहर-भीतर भी नहीं जा सकती थी ।

इसके साथ ही मूरज ने तुरन्त अपने बेटे के लिए दूसरे कमरे में एक अन्य आसबान का प्रवन्ध कर दिया । अब वह केसर की ओर देखता भी नहीं था । केसर महल में कैद रह कर तड़प उठी । उसके स्वभाव में विचित्र चिड़चिड़ापन आ गया । वह बात-बात में अपनी दासियों को मार-पीट देती थी । भोजन नहीं करती थी । पानी नहीं पीती थी ।

नैना बेचारी परेशान थी । जब कभी वह केसर से बातचीत करती तो उसे केसर इतना ही कहती थी, “मैं मरना चाहती हूँ । मुझे मौत क्यों नहीं आती ?”

नैना उसे निरन्तर समझाती रहती । जब केसर अत्यन्त उत्तेजित हो जाती तब वह शिव का नाम लेती । कहती, “शिव, तुम्हारे लिए बहुत दुःख करता है ।

कहता है, भाग्य बड़ा सबल होता है। आदमी को हर चाहत कभी भी पूरी होती।"

केसर उससे मिलने के लिए इच्छा प्रकट करती।

नैना फिर कहती, "शिव तुमसे मिलना नहीं चाहता।"

"क्यों?"

"वह कहता है कि यहाँ का हर व्यक्ति तुम्हें अपमानित करने की कोशिश है। फिर मैं खुद एक गोला हूँ। मेरे जीवन का यहाँ कोई मूल्य नहीं है। कहीं समय आने पर हम जरूर मिलेंगे।"

शिव की बात से केसर को सन्तोष मिलता। वह महल के एकान्त को उपेक्षितता की तरह पढ़ी रहती। इसके विपरीत अनूपसिंह जीवन के हल्के और विलास के चारों ओर लिपटता रहता।

नैना आकर उसके वीभत्स जीवन की धिनीनी घटनाएँ सुनाती—वह कल अपने हवा महल में पातुरों का नृत्य कराता है। उसके खास नौकर बड़े मित्र उन युवतियों के साथ व्यवहार करते हैं और वह देव-देव का विचित्र तरह से प्रसन्न होता है। उसकी मुद्रा इतने विकृत उल्लास से दीप्त हो जाती जिसे देखकर हृदय बाँप जाता है।

केसर धृणा से इन सब बातों पर झुक देती।

दिन बीतते रहे।

×

×

×

सूरज कुँवर और ठाकुर केसरीसिंह में शब्द हो गई।

बात साधारण थी, पर वह सूरज के लिए पीड़ादायक थी और कुछ हद तक अपमानसूचक भी।

राजधानी में एक सेठ था। परधून का व्यापारी। साधारण और निर्दोष ही फूहड़। उसकी बीबी चन्द्रा की कल किसी ने ठाकुर से भेट करा दी। वह एक चतुर एवं व्यापारिक बुद्धि की तेज स्त्री थी। नैतिक आदर्शों के पक्ष में जीवन के भौतिक सुख-साधनों की उपलब्धि में अधिक सजग थी। उतने स्त्री रूप का जादू इतने जोर से चलाया कि ठाकुर सूरज की महत्ता को भी मिटाने पर बंटे। सूरज यह सहन न कर सकी। जब ठाकुर ने अपने प्रभाव से बल

भाई को राज्य का सजाञ्ची बनाया और उसकी वहू को राजाजी से मिलाकर
 तब मे सोने का महना दिलवाया तो वह चिढ़ गई।

स्वयं राजाजी चन्द्रा पर आसक्त हो गये। उसके रूप-जाल में इस तरह फँसे
 कि धीरे-धीरे वह स्त्री राज्य-संचालन में भाग लेने लगी। एक दिन उसने महा-
 राजा से कहकर सूरज कुंवर के भाई को, जो राज्य की रेलवे का जनरल मने-
 जर था, पद के हठवा दिया। मूरख जैसी खूँखार स्त्री यह नहीं सह सकी। उसने
 अपने पति को कहा। पति ने उसकी प्रार्थना को अनसुना कर दिया। तब वह
 गुस्से में पति की आलोचना करने लगी। ताचार केसरीसह ने उसे जोर से
 डाँट दिया और उसे हिदायत दी कि वह अपनी ओकात को समझे।

सूरज कुंवर ने आवेश में ठाकुर के प्रति अपमानसूचक शब्द निकालते हुए
 चन्द्रा के बारे में कहा, "उस साली रंडी ने आप दोनों को मूख बना रखा है।"

ठाकुर तैश में आ गया। उसने सूरज कुंवर के गाल पर चाँटा मार दिया
 और कड़क कर कहा, "मैं ठाकुर हूँ और तुम मेरे पाँव की जूती। जूती को बद-
 लते चन्द पल लगते हैं।"

सूरज को ईर्ष्या बढ़ गई।

उसने मन ही मन प्रण किया कि वह अपने इस अपमान का बदला लेगी।
 जब ठाकुर ने उसके चाँटा मारा था, तब एक दासी ने यह सब देख-सुन लिया
 था। उसने यह बात तमाम महल में फैला दी। फलस्वरूप सभी दासियाँ सूरज
 की व्यंग भरी दृष्टि से देखने लगी। सूरज यह सब नहीं सह सकी। उसका दर्प
 भड़क उठा। उसके अंग-अंग में घृणा की ज्वालाएँ सलक उठी। अपमान की
 अग्नि-शिखाएँ उसे विद्रोह करने पर विवश करने लगी।

रात की नीरवता में सूरज विक्षिप्त-सी खड़ी है।

चाँद उल गया है। विपरीत दिशा में तिमिर बढ़ कर वहाँ की समस्त कृतियों
 को अपने में आत्मसात् कर रहा है। ठाकुर के महल से किसी पातुर का हल्का-
 हल्का भीठा स्वर आ रहा है। यह स्वर ज़हर की मर्मन्ति व्यथा को जन्म देकर
 उसके अंग-प्रत्यंग में सहरे मार रहा है। उसकी घृणा और द्वेष पर गहरा रंग
 चढ़ा रहा है। वह सोच रही है कि इतनी बड़ी घटना के बाद भी ठाकुर निर्वि-
 कार प्राणी की तरह जीवन के साधारण उपक्रम में तन्मय है। उस पर उसकी

व्यग्रता का किंचित् भी प्रभाव नहीं है। वही आमोद-प्रमोद और बहो विलास !

सभी उसकी विशेष दागी ने आकर कहा, "ठकुराणी सा ठकुराणी सा ! सूरज सावधान हो गई ।

"ठकुराणी सा, ठाकुर सा ने आपके मोतियों के हार को पातुर में दिया है ।"

"मेरे !"

"हूँ, जो आपने ठाकुर सा को उनके जन्म-दिन पर दिया था ।"

सूरज आहत सापिन-मी भड़क उठी ।

यह भाग कर ठाकुर के पास गई । कड़क कर यत्नी, "मेरे हार से आपने इस रंछी को क्या दिया ?"

"मेरी मर्जी !"

"ठाकुर सा, आप यह भूल रहे हैं कि मैं कौन हूँ ! कौन से कुटुम्ब से मेरा सम्बन्ध है ! वही ऐसा न हो कि मेरा और आपका संवर्ष इस घर को बना दे !"

ठाकुर का पौरुष यह चुनौती सहन नहीं कर सका । वह कड़क कर बोला, "मैं आग से नहीं डरता । किन्तु वह आग तुम्हें ही जला कर रस देगी !"

सूरज ने कोई उत्तर नहीं दिया ।

दोपहर को ठाकुर चन्दा को लेकर महल में आये । चन्दा की शान और उसकी शोहरत देख कर सूरज जल उठी । ठाकुर उसके आगे-आगे थे । राज के कई उच्चधिकारियों के साथ राज्य के दीवान भी थे ।

वे सब बैठक-खाने में बैठ गये । सूरज कुँवर ने सुना कि चन्दा आनन्द राज्य-व्यवस्था में भाग लेती है । उसने महाराजा को बहुत मोह लिया है । यदि वह उनसे कोई प्रार्थना कर दे तो वह तुरन्त स्वीकार हो जाती है । वह बहो जिसे बना सकती है और चाहे जिसे मिटा सकती है । और तो और, उनके पति को भी उसकी जो हुजुरी करनी पड़ती है । उसने अपने पति को उसके सामने पिंपियाते देखा । उसके मुख पर चापलूसी की रेखाएँ देखी । और तो और जब चन्दा को ठाकुर को यह कहते हुए सुना कि 'आप में इतनी योग्यता नहीं है कि आप राज्य के किसी ऊँचे पद पर आसीन हों' तो ठकुराणी

से में लाल-पीली हो गई। उसने चाहा कि वह जाकर उस छिनाल को मारे।

साँझ तक चन्दा उन बड़े-बड़े अधिकारियों, उमरावों व सामन्तों के बीच सम्मान प्राप्त करती रही। सूरज जालियोंदार खिड़की से जामूस की तरह झूती रही। जब वे सब चले गये, तब उसने प्रतिहिंसा से अपनी गर्दन को टका दिया।

रात को शराब पीकर ठाकुर लौटा।

सूरज ने व्यंग्य से कहा, "आ गये उस छिनाल के तलवे सहला कर?"

ठाकुर ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह शयनकक्ष की ओर बढ़ गया। शिव तीपक के प्रकाश में अपनी कोठरी में लोकमान्य तिलक का गीता-दर्शन पढ़ रहा था। तभी एक गोले ने आकर कहा, "ठाकुर सा, तुझे याद कर रहे हैं।"

शिव उठा। चला। ठाकुर को अभिवादन किया।

'शिव मैंने सुना है कि तुम पढ़े-लिखे हो। मोटी-मोटी किताबें पढ़ते हो। क्या यह सच है?"

"हाँ ठाकुर सा!"

ठाकुर ने इधर-उधर ताक-झाँक की और वह बोला, "क्या तुम मुझे पढ़ा सकते हो?" तुम नहीं जानते कि आज मुझे कितने अपमान का घूँट पीना पड़ा है। मैं थोड़ा भी पढ़ा-लिखा होता तो आज राज्य का दीवान बन जाता। चन्दा, मेरे भाई सा को कह कर मुझे क्या से क्या नहीं बना देती!"

"मैं मह गुस्ताखी कैसे कर सकता हूँ? आप मेरे मालिक हैं। मैं आपको विद्यादान कैसे दे सकता हूँ?"

"तुम समझते क्यों नहीं? क्या मैं किसी बाहरी आदमी से पढ़ूँ? नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता! ऐसा होने से हमारे मान-सम्मान को ठेस लगती है। हमें बहुत पीड़ा होगी!"

"गुरु के बिना ज्ञान नहीं मिलता ठाकुर सा!"

"मैं जानता हूँ। क्या तुम मेरे गुरु नहीं बन सकते?"

"क्या कहते हैं आप? जहर आज आपने अधिक पी ली है।"

"इतनी पी है जैसी जीवन में कभी नहीं पी।... देखो, वह बोरल मुझे दे दो। मैं थोड़ी और पीऊँगा। तुम आज से मेरे गुरु हो गये। मैं तुम्हारे नित्य सधेरे धरण-स्पर्श करूँगा शिव, तुम आज से मेरे गुरु हो गये।" कह कर

ठाकुर गिर पड़ा। शिव थोड़ी देर तक करुणाभरी दृष्टि से ठाकुर को
रहा, उसकी भगिमा उस महात्मा की तरह थी जो किसी पतित को
हो। उसने ठाकुर के पांवों को ठीक से किया। तभी ठाकुर की आंखें खुलीं।

“बोतल कहाँ है?”

“ठाकुर सा! अधिक शराब पीना हानिकारक है।”

शिव आत्म-चिंतन में यह भूल गया था कि वह गुलाम है। वह
ठाकुर का चाकर है जहाँ हुक्म की केवल तामील की जाती है।

“तू गोला होकर मुझे उपदेश देता है? माव.....के.....में निर्व-
दूंगा। जा उसलू के पट्टे—मेरी बोतल ला!”

शिव का गुरुत्व हवा हो गया। उसकी आत्मा का महामानव जो गुलों
परिस्थिति द्वारा दबा हुआ था, वापस सो गया और उसका वही गुलाम
जाग्रत हो उठा जो केवल हुक्म बजाना जानता था। उसने तुरन्त शराब
बोतल खोली और एक गिलास भर कर ठाकुर को थमा दिया।

ठाकुर पूरा का पूरा गिलास पी गया।

नीचे अनूपसिंह अब भी पातुरों के नृत्य में निमग्न था।

होलक की तेज आवाज आ रही थी।

शिव अब भी खड़ा था।

कैसर अपने कमरे में खम्भे का सम्बल लिये खड़ी थी।

शिव उसे देखता रहा। आज उसे आये चार-पाँच माह हो गये हैं, इस
बीच में उसकी कैसर में यदा-वदा भेद हो जाती थी। कभी भी निश्चित
से या बँटकर सुख-दुख की बातें नहीं हुईं। शिव की इच्छा हुई कि नीला
नृत्य की चिरकती तन्मय दुनिया में वह उसके पास चला जाय क्योंकि उसे
मीका है।

ठाकुर बहकता-बहकता सो गया था। शिव भी वहाँ से उठा। बीरे-बीरे
अनूपसिंह के महल की ओर बढ़ा। बड़े महल में अनूपसिंह का अपना ब्रह्म
महल था। आजकल इस महल में अनूपसिंह अपने मित्रों के साथ शराब की
विलास के सागर में डूबा रहता था। शहर से अच्छी से अच्छी पातुरें बुलाई
जाती थीं। कुछ बदमाश गाँवों में छोकड़ियों को बहला कर साते में और
परिन्दों के हाथ में सोंप देते थे।

शिव ने अनूपसिंह के महल में प्रवेश किया।

दीवार अन्धकार में लुप्त-सी थी। वह चुपचाप उसी दीवार के सहारे की ओर बढ़ता गया। उसने देखा—एक नग्न नारी पड़ी है और उसे एंसिंह दरिन्दे की तरह देख रहा है। उसका एक मित्र उसके जिस्म से खेल रहा है और वह राक्षस की तरह अपने ऊपर के हिस्से को हिला रहा है। व उसकी वहशियत चरम सीमा पर पहुँच गई, तब अनूपसिंह पागल की तरह उछल कर उस नारी को पीटने लगा। पीटते-पीटते वह इतने जोर से जा कि शिव काँप उठा।

हँसने के साथ ही उसने अपने मित्र से दाँत किटकिटा कर पूछा, “क्यों, कैसा आनन्द रहा?”

“कुँवर सा, आनन्द सारा आपको ही आया।”

अनूपसिंह ने उसे दर्प से देखा। वह बहुत ही भूख लग रहा था।

शिव ऐसा वहशियाना दृश्य अधिक देर तक नहीं देख सका, वह उठकर चला गया। महल के आगे एक घोड़ा आकर रुका। उसमें से एक सवार उतरा।

पहरेदार ने उससे पूछा, “कहाँ से आ रहे हैं आप?”

“सेठानीजी के यहाँ से।”

“सेठानी चन्दाबाई के यहाँ से?”

“हाँ, जी?”

पहरेदार तुरन्त ठाकुर के पास गया। ठाकुर मा बेहोशी में बड़बड़ा रहे थे। पहरेदार ने उसके कंधे हिलाकर कहा, “सेठानीजी का आदमी आया है।”

ठाकुर ने नहीं सुना।

“ठाकुर सा, सेठानी चन्दाबाई का आदमी……!”

“चन्दा, कहाँ है चन्दा?” ठाकुर एकदम सावधान होकर बोला।

“अन्नदाता, चन्दाबाई का आदमी आया है। गढ़ के बाहर खड़ा है।” पहरेदार ने गर्दन झुका दी।

“उसे भीतर ले आओ।”

तब तक यह खबर सूरज को मालूम हो गई थी। सूरज आगन्तुक के पास गई। उससे आने का कारण पूछा। उसने विनम्रता से गर्दन झुकाकर कहा, “मैं बताने में असमर्थ हूँ।”

सूरज जल उठी । उसने जलती दृष्टि से आगन्तुक को देखा और कहा,
“फिर आप ठाकुर सा से भी नहीं मिल सकते ।”

“जो हूँ !” कहकर आगन्तुक चलने लगा ।

“ठहरो !” नाटकीयता से ठाकुर ने प्रवेश किया ।

आगन्तुक रुक गया । सूरज वही खड़ी हो गई ।

आगन्तुक ने उतर कर ठाकुर को सलाम किया । वे दोनों वक्ष की ओर
चले । सूरज ने उन दोनों का साथ दिया । आगन्तुक ने ठाकुर को रास्ते में
ही कहा, “बात गुप्त है ठाकुर सा !”

“ठाकुराणी तुम जाओ ।”

“मैं नहीं जाऊँगी”

ठाकुर ताव में आ गया, “जवान सहाती हो ? मैं कहता हूँ जाओ”
“जाओ ।”

ठाकुराणी चली गई । लेकिन उसने जामूसी करनी नहीं छोड़ी ।

वह खड़ी हो गई—छिपकर ।

आगन्तुक ने कहा, “सेठानीजी ने यह पर्चा भेजा है । उन्होंने अभी-अभी
रपये मँगवाये हैं ?”

“कितने रपये मँगवाये हैं ?”

“बीस हजार ।”

“क्यों ?”

“यह सब पच्चे में लिखा है ।”

“तुम पढ़ो ।”

“जो हूँ !” कह कर आगन्तुक ने पर्चा पढ़ना शुरू किया—

“श्रीजी ठाकुर सा,

“अज्ञ है कि मुझे इसी समय बीस हजार रपयों की जरूरत है, आप मेरे
आदमी के साथ भिजवा दें । आपने यदि नहीं भिजवाये तो मैं समझूँगी कि
आप मुझे प्यार नहीं करते हैं । यह आपकी परीक्षा है ।

—चन्दा”

आगन्तुक सिर झुका कर सड़ा हो गया ।

ठाकुर कुछ देर तक विचारता रहा। इसके बाद उसने अपने दास को बुलाया। दास आकर खड़ा हो गया।

ठाकुर ने कहा, "जा, ठकुराणी सा को बुला ला।"

दास बाहर जाता, इसके पहले ही ठकुराणी ने वक्ष में प्रवेश कर लिया। वह रोप की प्रतिमा बन खड़ी हो गई। उसकी भूकुटियाँ तनी हुई थीं।

ठाकुर ने आते ही उसे कहा, "बीस हजार रुपये चाहिए।"

"क्यों?"

"जरूरत है!"

"उस छिनाल के लिए?"

"ठकुराणी!" ठाकुर क्रोध से तड़प उठा।

"मैं एक पाई भी नहीं दूंगी!" ठकुराणी के स्वर में दृढ़ता थी।

"तुम हृद से आगे बढ़ रही हो!"

"और आप सिर के बल चलने की क्यों चेष्टा कर रहे हैं? बीस हजार रुपये उस गईबीती के लिए मैं नहीं दे सकती।"

ठाकुर ने आवेश में कहा, "मैं कहता हूँ कि चुपचाप रुपये लाकर दे दो।"

"नहीं दूंगी!"

"ठकुराणी!" ठाकुर ठकुराणी की ओर बढ़े। ठकुराणी ने चिल्लाकर कहा, "मेरे हाथ मत लगाना। देखिए, ठीक नहीं रहेगा।"

उसने तुरन्त दो दासों को बुलाया और हुक्म दिया, "इस हरामजादी को कोठरी में बन्द कर दो!" "सुनते हो, जाओ!" ठकुराणी ने चिल्लाना चाहा। ठाकुर ने उसका मुँह एक कपड़े से बन्द कर दिया। दासों ने उसे एक कोठरी में बन्द कर दिया। आगन्तुक बीस हजार रुपये लेकर चला गया।

लेकिन यह घटना तुरन्त ही सारे महल में फैल गई। केसर ने भी सुनी। उसने तुरन्त अनूपसिंह को बहलवाया। अनूपसिंह ने उससे मिलने से एकदम इन्कार कर दिया। तब उसने शिव को बुलाया। सारी स्थिति उसे समझाई। शिव ने एक कूटनीतिज्ञ की तरह सोचकर बताया कि सूरज कुँवर को मुक्त कर दिया जाय। वह खुद सूरज कुँवर के पास गई। उसने उसे अंधेरी कोठरी से निकाला, तब वह अनूपसिंह के पास गई। उसे डाँटा और उसकी गैरत को ललकारा। केसर वापस अपने कक्ष में आ गई।

सूरज कुँवर ने बन्दूक हाथ में ली और अपने विश्वासपात्र आदमियों को लेकर वह ठाकुर के कक्ष में जा पहुँची।

ठाकुर गहरी निद्रा में सोया हुआ था।

ठकुराणी ने बन्दूक को भरा और उसे खत्म करने के लिए ज्योंही निशाना बाँधा त्योंही उसके विवेक ने उसे रोक दिया। किन्तु घूँन उसके सिर पर गवार था। उसने कुछ देर तक कटा की निर्जीव दीवारों एवं अपने विश्वासी आदमियों की देखा। तब उसने उसे युक्ति से समाप्त करना चाहा। उसने ठाकुर को आहिस्ते से उठाया और महल की सिड़की से फेंक दिया।

ठाकुर नीचे गिरते ही मर गया। नशे में उसके मुँह से चीख भी नहीं निकली। इसके बाद सूरज ने अपने आदमियों को कई गुप्त आदेश दिये और खुद वापस अँधेरी कोठरी में चली गई। बाहर से उसने उसे बन्द कर लिया।

सूरज के कोठरी में जाते ही सारे महल में ठाकुर की मौत का सतसनी-खेज समाचार फैल गया। उस दुःखान्त समाचार के साथ एक घात सभी गढ़वालों ने सुनी कि ठाकुर सा नशे में चूर होकर सिड़की से कूद पड़े। ठाकुर के पुराने चाकर इस समाचार से शोकातुर हो उठे। देखते-देखते अनूपसिंह भी घटना-स्थल पर हाजिर हो गया। केसर ने सिड़की के शरोखे से उम भीड़ को देखा। ठाकुर का सिर फट गया था। एक दाम ने कोठरी में जाकर सूरज को खबर दी, किन्तु सूरज ने आने से इनकार कर दिया।

लाश को भीतर लाया गया।

दूसरे दिन घूमघाम से ठाकुर की लाश जला दी गई।

सूरज कुँवर ने काले वस्त्र पहन लिये, चूड़ियाँ तोड़ ली और उसने ठाकुर के गम के मारे तीन-चार दिन भोजन नहीं किया। वह रहस्य उस भयानक चहारदीवारी में रहस्य बन कर ही रह गया।

अपंग पुत्र की स्वामिनी बनी सूरज।

केसर के प्रति उसके मन में आन्तरिक घृणा थी ही। फिर केसर अनूपसिंह की निरन्तर उपेक्षा करती रहती थी। कई बार सूरज ने केसर को समझाया भी। उसके परिव्रत धर्म और मानवीय भावनाओं की दुहाई भी दी, किन्तु केसर ने उसकी एक भी नहीं मानी। उसने सास के धरण छू कर कहा, “स्त्री को प्रत्येक दुर्बलता का वास्ता देकर उसके भाव-लोक को छूआ जाता है। नैतिक

आदर्शों, सामाजिक बन्धनों व धर्मिक घोषणाओं द्वारा उसके जीवन को उस चरम सत्य व परम आनन्द से वंचित रखा जाता है जिसका सम्बन्ध इहलोक से है।”

सूरज को वहू का यह उपदेश रुचिकर नहीं लगा। उसने विनम्रतापूर्वक आज्ञा दी, “तुम इस कुटुम्ब की बहू हो, इस घर और कुटुम्ब पर तुम्हारा अधिकार भी है, किन्तु इसके साथ इस बात का भी ध्यान रहे कि यहाँ केवल मेरी चलती है। मैं जा चाहूँगी, वही तुम्हें करना पड़ेगा। जोर-जबरदस्ती कहीं इसके पहले ही तुम्हें मेरे बेटे से क्षमा माँग लेनी चाहिए।”

“क्षमा और अक्षमा का प्रश्न ही नहीं उठता। प्रश्न उठता है कि दोष किसका है? मेरा या आपके पुत्र का?”

“दोष प्रभु का है। उसने ही मेरे बेटे को यह भयानक बीमारी दी।”

मैं इसे मानती हूँ। प्रभु ने आपके बेटे को बीमारी दी। आप यह जानती थी कि आपका बेटा उस पौरुष से वंचित है जो विवाह के उपरान्त निहायत ही जरूरी है। फिर आपने उसका विवाह क्यों किया? फिर आपने एक नङ्की के जीवन से खेला क्यों?”

सूरज कुँवर की आँखों से आग बरस पड़ी। समीप पड़ी पत्थर की मूर्ति को मजबूती से पकड़ कर उसने कहा, “लाछन लगाने से पहले अपने बाप से पूछ लिया होता, जो हाथ जोड़कर मेरे सामने गिड़गिड़ाया था। मेरे बेटे के लिए, एक नहीं, तीन सौ छप्पन लड़की वाले घूमते थे। दस-बीस अभी भी आते हैं। मेरा बेटा मामूली ठिकाने का मालिक नहीं है।”

“फिर दो-चार को इस कैद में और ले आइए।” केसर ने भड़क कर कहा, “कर दीजिए न तबाह उन्हें भी!”

सूरज कुँवर ने उसे कोई उत्तर नहीं दिया।

वह सीधी अनूपसिंह के कमरे में पहुँची। उसे केसर के बारे में कह कर अपने मन का विचार सुनाया कि वह उसका दूसरा विवाह करने वाली है। दूसरे विवाह की घोषणा सूरज ने अपनी दासियों के सामने की। बात सारे महल में फैल गई।

उसके चौथे दिन महाराजा खेतसिंह का जन्म दिन था।

अनूपसिंह व अन्य बड़े अधिकारी शहर चले गये।

केसर ने बीमारी का बहाना बना लिया । शिव को चलने लिए कहा ही नहीं गया ।

महीनों के उपरान्त शिव और केसर मिले ।

शिव ने कहा, "तुम्हारी सास तुम्हारे पति का दूसरा विवाह कर रही हैं ।"

"मैं जानती हूँ ।"

"तुम्हें इसका विरोध करना चाहिए ।"

"मैं इसका विरोध नहीं करूँगी ।

"क्यों ?" विस्मय के साथ पूछा शिव ने ।

"इसलिए कि मैं चाहती हूँ कि वह मेरा स्पर्श भी न करे ।"

"लेकिन तुम ठाकुराणी को जानती नहीं हो । वह बड़ी खूंखार है ।"

"कैसे ?"

"एक रहस्य बताता हूँ । ठाकुर सा नशे में खिड़की से कूदे नहीं । उसे तुम्हारी सास ने गिरा दिया था । यह औरत अत्यन्त घृणामयी है । मुझे डर लगता है कि कहीं यह तुम्हें ही जहर न दे दे ।"

"जहर दे दे ! मुझे दुःख नहीं । ऐसे जीवन से मृत्यु भली है ।"

शिव ने दुःख से कहा, "मुझे देखो न, केवल तुम्हारे लिए इस नरक में हूँ, नहीं तो मैं कभी का भाग जाता । जीवन में इस तरह आदमी दो घड़ी भी साँस नहीं ले सकता । तुम अच्छी तरह यहाँ की यातनाओं से परिचित हो । इन धूप और हवाहीन कोठरियों में रहना, दिन-रात परिश्रम करना ! कल मुझे दिन भर भार डोना पड़ा । परसों धूप में खेत से धान लाना पड़ा और रात के समय नये ठाकुर ने जूते से पिटवाया और....।"

"मारा क्यों ?"

"मारा इसलिए कि उसके मन में किसी को पीटने की आ गई । उसने अपने साले भोपालसिंह से कह रखा था कि जो कोई मेरे कक्ष के आगे से सबसे पहले गुजरे, उसे दस जूते मेरे सामने लगा दो । यह बड़े आदमियों की सनक है । फिर भी सहता हूँ, सिर्फ तुम्हारे सामीप्य-दुःख के लिए । केसर, मुझे विश्वास है कि तुम मेरी हो !"

केसर ने शिव के कंधे पर अपना सिर रख दिया । वह फफक कर रो पड़ी, "मेरा भाग्य बहुत खराब है । मैं जीते जी मर गई । मैं यहाँ से भागना

चाहती हूँ । मैं यहाँ से भागना चाहती हूँ ।”

“यह असम्भव है । ऐसा नहीं हो सकता ।”

“फिर हम दोनों रामू-चनणा की तरह कुएँ में कूद मरें ।”

“नहीं ! मरने से क्या होगा ? रामू-चनणा की कहानी अमर है और हम दोनों की मौत का यहाँ पता ही नहीं चरेगा । फिर इस मृत्यु से हमें एक दूसरे की प्राप्ति भी नहीं हो सकती ।”

“प्राप्ति इस जन्म में सम्भव नहीं है ।”

“है !” शिव ने आत्मविश्वास के साथ कहा, “कांग्रेस की शक्ति बढ़ रही है । मैं पाहर गया था । महात्मा गाँधी कहते हैं, हम जल्दी ही देश को गुलामी से छुटकारा दिला देंगे । हम आजाद हो जायेंगे ।”

“सच ?”

“हाँ केसर, हम आजाद हो जायेंगे । तब इस भूमि पर कोई किसी का गुलाम नहीं रहेगा । इस बहारदीवारी में सड़ती जिन्दगियाँ खुली हवा में साँस लेंगी । न तुम्हें अवाहिज पति के पीछे मरना पड़ेगा और न मुझे हजारों अरमान सिये तड़पना होगा ।”

“बहु दिन जल्दी क्यों नहीं आता ?”

“आयेगा, जरूर आयेगा । कांग्रेस की शक्ति बढ़ रही है ।”

अप्रत्याशित केसर का ध्यान ठाकुर की मृत्यु पर चला गया । वह शिव का हाथ पकड़ कर बोली, “तुम्हें कैसे पता कि ठाकुर सा की हत्या ठकुराणी जी ने की है ?”

“मैंने यह सब अपनी आँखों से देखा था ।”

“फिर तुम चित्लाये क्यों नहीं ?”

“बिल्लाने से मेरी जान थोड़े ही बचती ।”

“मैं इसकी शिकायत राजाजी से करूँगी ।”

“ऐसा मत करना केसर !”

“क्यों ?”

“क्योंकि ठकुराणी का इस महल में राज्य है । उसके हुक्म के बिना यहाँ का पता भी नहीं हिलता है । तब वह तुम्हें इस राज के खुलने पर कैसे जिन्दा छोड़ सकती है ?”

“फिर ?”

“हम बड़े साधार हैं । हम तमाशा देखने वालों की तरह हैं । वे हँसे तो हम भी हँस दिये और वे रोये तो हम भी रो दिये ।”

केसर ने शिव की आँखों में आँखें गड़ाते हुए कहा, “मैं एक तरह से माध्य-माली भी हूँ । मैं अपना सब कुछ तुम्हारे लिए ही रख छोड़ूँगी ।”

और वह शिव की बांहों में लिपट गई ।

×

×

×

२१

....

मैना की तबीयत तीन दिनों से खराब थी । खरब आ गया था । शिव वैद्य के पास गया था । उसने दवा भी दी थी, पर कोई असर नहीं हुआ । शिव इससे चिन्तातुर हो उठा । वह अनूपसिंह के पास गया । प्रार्थना की, “मैं अपनी माँ को राजधानी के बड़े अस्पताल ले जाना चाहता हूँ । मुझे कुछ खपया चाहिए ।”

अनूपसिंह उसकी यह बात सुनकर हँस पड़ा । उसकी हँसी दुष्टता से भरी हुई थी । उसकी आकृति खल-नायक की तरह भाव-शून्य थी ।

“आप हमारे अन्नदाता हैं । हमारे जीवन की....!”

बीच में ही अनूपसिंह बोला, “मैं तुम्हारी जान की रक्षा कर सकता हूँ । उसके लिए कुछ खर्च भी हो जाय तो चिन्ता नहीं, पर उस बुद्धिया के लिए एक कौड़ी भी खर्च नहीं कर सकता ।”

शिव ऐसा निर्दयी उत्तर सुनकर तड़प उठा । उसकी इच्छा हुई कि वह इस दुष्ट को पटक कर लातों से कुचल दे । उसने क्रोध से अनूपसिंह को घूरा । अनूपसिंह उसकी आँखों के भावों को भाँप गया । उसकी दृष्टि की प्रतिहिंसा को समझ गया । काँपता हुआ वह बोला, “तुम इस तरह चुप क्यों हो ? क्या चाहते हो ? अरे कोई है !”

“अन्नदाता ! प्राण कभी छोटा और बड़ा नहीं होता । बड़ी और छोटी तो काया होती है । इसलिए आपसे प्रार्थना है कि मेरी माँ के प्राणों की रक्षा की जाय ।”

अनूपसिंह कुछ बोलना चाहता था, उभी समय अनूपसिंह का सेवक भीपालसिंह आ गया । वह तिर झुका कर बोला, “हुबभ अन्नदाता !”

“इस साले को बाहर निकालो ।”

“क्यों ?”

“अस, इसे मेरी आँखों से दूर कर दो ।”

“लेकिन इसने गुस्ताखी क्या की है ?”

“गुस्ताखी, बहुत बड़ी गुस्ताखी की है । मैं चाहता हूँ कि इसे कह दो कि यह हमारे सामने से हट जाय ।”

शिव खला गया ।

अनूपसिंह ने तुरन्त अपने सेवक को कहा, “भीपालसिंह ! यह गोला बड़ा खतरनाक है । पता नहीं, इससे मेरी आत्मा क्यों डरती है ।”

“आप आज्ञा दे दें तो मैं अभी इसे ठीक कर देता हूँ ।”

“जरूर, जरूर, इसे ठीक कर दो ।”

भीपालसिंह उसी समय चार कारिन्दों को लेकर गया ।

शिव अपनी कराहती हुई माँ के पास बैठा था । माँ अपने जलते हुए हाथों से शिव को सहला रही थी । उसकी आँखों में आँसू भरे थे । वह हक-लासी हुई कह रही थी, “मैं अब जिन्दा नहीं रहूँगी । मुझे जीने की इच्छा भी नहीं है, किन्तु मेरी मृत्यु के बाद तुम यहाँ एक पल भी मत ठहरना । बेटे ! तुम्हारी माँ का जीवन इन जनानी द्योदियो में ही बीता है । मैंने जीवन में चन्द ही क्षण सुख के बिताये हैं, शेष रेंगते हुए कीड़ों की तरह मेरे सारे क्षण बीते हैं । शुष्क और पीड़ित ! कठोर श्रम और इन जालिमों की गुलामी ! ये सत्ता के पोपक और अधिकारों के घनी आदमी को आदमी नहीं समझते हैं । ये लोलुप और खूनी भेड़िए हैं जो इन्सानियत को खुरच-खुरच कर खा जाते हैं । यहाँ आदमी कभी भी मुक्त साँस नहीं ले सकता है । बेचारा वह महल की चहारदीवारी में सिसकता-तड़पता समाप्त हो जाता है । और हाँ, ये न तो ईश्वर के अवतार होते हैं और न उसके अंश । ईश्वर अपनी शक्ति का एक

अंश भी इन दुष्टों को नहीं दे सकता, इसलिए मैं तुमसे प्रार्थना करती हूँ कि तुम इनका घोर विरोध करना और प्रयत्न करना कि इनके चंगुल में सिसकती मानवी का उद्धार हो। बेटा! तुम्हारी माँ ने इनके खूब अत्याचार सहे हैं, और तुम उसका प्रतिशोध अवश्य लेना।" देखो बेटा, वह आये तो उसे उस पेटी में रखा हार जरूर दे देना, क्योंकि यह मैंने तुम्हारी वजू के लिए ही ठकुराणी सा से माँगा है।"

शिव ने व्यग्रता से कहा, "तुम व्यर्थ परेशान होती हो। मैं तुम्हें कहता हूँ कि तुम्हें मुझसे कोई जुदा नहीं कर सकता। माँ! मैं तुम्हें नहीं मरने दूँगा।"

"मृत्यु पर किसी का जोर नहीं है। जरा प्यास लगी है, पानी दे दे।" शिव उठा और उसने अपनी माँ को पानी पिनाया। नैना को जमना याद हो आयी। दुःख में उसे अक्सर जमना याद आती थी। सारे जीवन उसे उसका अभाव सताता रहा। मरने से पहले भी उसने ईश्वर से उसे अगले जन्म में पति के रूप में माँगा। जमना जैसा उसे पति मिले! इस भावना से उसकी आँखें भर आयी।

भोपालसिंह विचारमग्न खड़ा रहा। परिस्थिति इतनी गम्भीर थी कि उससे कुछ भी नहीं हो पाया। वह वापस उन्हीं पाँवों लौट गया। शिव ने माँ के सिर पर हाथ रख कर कहा, "मैं बँधजी को मुक्ता कर लाता हूँ। माँ, तू हिम्मत न हार।"

"न बेटा न, तुम बँधजी के पास मत जाओ। अब मुझे दवा की जरूरत नहीं है। तुम मुझे गीता सुनाओ। रामायण सुनाओ।"

शिव की आँखें भर आईं। वह संतुष्ट उठा। उसने गीता उठाई और पढ़ने लगा।

माँ ने फव प्राण त्यागे, इसका गीता में निमग्न शिव को पता नहीं चला। जब उसने बीच में देखा, तब माँ की दोनों आँखें फटी हुई थीं और सारा शरीर बरफ-सा ठण्डा था। वह कुछ देर तक देखता रहा और अन्त में चीख कर रो पड़ा। उसकी आवाज सुन कर आग-पास के कई मुलाय आ गये। कुछ गोतियाँ सहानुभूति प्रदर्शित करने लगी। शिव ने माँ को उठाया और कोठड़ी के आगे पनार दिया। चन्द्र घड़ी में वे सब नैना को श्मशान घाट ले गये।

आग की लपटें धू-धू कर जल उठीं ।

शिव चित्ता के सम्मुख बैठा था । घुसचाप और बिह्वल । उसकी सिसकियों ने सबकी झकझोरित कर दिया । लोगों ने उसे सान्त्वना दी और समझाया कि होनों की कोन रोक सकता है ।

माँ को जला कर वह कोठरी में निस्पन्द-सा पड़ गया । यह अपने और अपने जीवन के बारे में विश्लेषण करने लगा । उसकी माँ के उत्पन्न होने का क्या उद्देश्य और कैसी सायंकता थी ? कठोर श्रम और दूसरों के जुलम ! लेकिन वह इसका विरोध करेगा । वह अपनी माँ पर किये गये अत्याचारों का बदला लेगा ।

वह सिसक-सिमक कर रो पड़ा ।

सभी केसर आईं । बड़े स्नेह से उसने शिव के सलाट पर हाथ फेरा । शिव की डबडवाई आँखें खुल गईं ।

केसर ने बिह्वल स्वर में कहा, “हिम्मत रखो शिव, जो मनुष्य जन्म लेता है, उसे मरना ही पड़ता है ।”

“मृत्यु का मुझे कोई पश्चात्ताप नहीं है । पश्चात्ताप इस बात का है कि उस जीवन को क्यों सम्भाल कर रखा जाय, जो मृत्यु के बराबर है । जिसमें कुछ भी आकर्षण नहीं, कुछ भी चाहत और प्रेम नहीं । एक अभिशाप !”

“नहीं शिव, यद्यपि तुम्हारा जीवन किसी शाप से अधिक अच्छा नहीं है, फिर भी तुम्हें इतना हताश नहीं होना चाहिए । जीवन इन सभी शापों, अमावों, सुखों और अत्याचारों के बीच साँस लेता है, क्योंकि जीवन शाश्वत है और ये सब क्षणिक । क्षणिकता से आकुल होकर पश्चात्तन कर देना मानव-कर्त्तव्य नहीं ।”

शिव ने एक बार अभिप्राय भरी दृष्टि से उसे देखा । केसर की आँखों में प्यार की अजल धारा थी । शिव को देखते-देखते उसकी भी आँखें भर आईं । वह आँसू भरी आँखों से देख कर बोली, “हर आदमी आशा पर जीवित रहता है । वह इस लम्बे अभिशप्त जीवन में उस एक क्षण की खोज करता है जो उसे सम्पूर्ण सुख प्रदान कर सके । क्या हमारे जीवन में वह सुख का पल नहीं आयेगा ?”

“आयेगा ।”

“फिर तुम्हें धराना नहीं चाहिए । अरे, मुझे क्यों नहीं देखते ! तुमसे अधिक पीड़ित हूँ । अन्तरास में दुर्द्धप संधर्ष छिपाये हुए हूँ । मेरा मोन हाहाकार कोई नहीं सुन सकता । फिर भी जीवित हूँ क्यों कि मुझे भी तुम्हारी तरह एक विश्वास है, वह दिन आयेगा, जरूर आयेगा, जब मैं इस पशु के बन्धनों से मुक्त होऊँगी ।”

एक दासी तभी भागती-भगती आई ।

“राणी सा, राणी सा !”

“क्या है ?”

“ठकुराणी सा आ रही हैं । जल्दी से चलिए !”

“क्यों ?”

“बस चलिए । देर न कीजिए !”

“मैं नहीं चलती !”

दासी का चेहरा उदास हो गया । करुणा भरे स्वरों में उसने कहा,
“आप नहीं जानती हैं कि यहाँ के नियम क्या हैं ?”

सूरज आ गई थी । उसके साथ चार हिजड़े थे । दो-तीन दासियाँ थीं । केसर ने उन सबको देखा । अपने आपको एकदम बठोर कर वह बिना किसी की ओर देखे महल की ओर चली ।

“बहू ! तुम्हें शायद हमारी मान-भर्यादा का पता नहीं है । इस तरह गोले के घर जाना यहाँ के राजपूत सहन नहीं करते ।” उसने स्वर बदल कर कहा, “पति का अर्पण होना कोई बहुत बड़ी बात नहीं । सती नारियाँ मन से न बरे हुए पति पर भी अपना सर्वस्व निछावर कर देती हैं और तुमने तो उसे बरा है ।”

सूरज का उपदेश केसर को असह्य लगा । उसने कड़कते हुए कहा,
“प्राचीन युग में राजपूत नारियाँ पति की स्मृति में अपना जीवन और जीवन शिखा की तरह रह-रह कर जला देती थी । उनमें किसी तरह की प्रति-स्पर्धा और कुद्वन्द्व नहीं होती थी और जब उनका पति मृत्यु का आलिगन करता था, तब वह उसके साथ सहर्ष सती हो जाती थी ।” लेकिन आज जमाना बदल गया है । विचार और मानदण्ड दूसरे बन गये हैं । आज की सन्नाहियाँ गोलों के साथ रंगेलियाँ मानती हैं, पतन की चरम सीमा तक पहुँच कर वह पतियों

को महल से फिकवा कर वैधव्य का ढोंग करती हैं। शोक में वह कई दिन तक अन्न-जल ग्रहण नहीं करती हैं। क्यों ठकुराणी सा, वक्त बदल गया न ?”

सूरज इस तरह चिहूँकी जैसे किसी ने बदन पर जलता हुआ लोहा चिपका दिया हो। वह आगे बढ़ी। उसका अंग-अंग कांप रहा था। उसने केसर के मुँह पर थप्पड़ मार कर कहा, “इस कुलटा को अंधेरी कोठरी में बन्द कर दो। यह कलंकिनी है, छिनाल है, यह मोनों के साथ रंगेलियाँ मनाती है। इसे अंधेरी कोठरी में बन्द कर दो, ले जाओ इसे !”

उन चारो हिजड़ों ने उसे धेर लिया।

केसर बिजली की तरह तड़प कर बोली, “मैं कुलटा और छिनाल हूँ या न हूँ, पर तुम्हारी तरह पति-घातक और हत्यारिण नहीं !”

“खामोश !”

“मैं खामोश हूँ लेकिन तुम्हारे अत्याचार नहीं सह सकती। मैं तुम्हारे उस पुत्र को अपना पति नहीं मान सकती जो पुरुष कहलाने लायक नहीं है।” “तुम्हें क्या पता कि मेरे मन में कौसी आग जल रही है ! मैं नारी हूँ, नारी की प्यास को तुम क्या जानो ! जरूर जानती हो, तुम भी नारी हो। हो न !”

“सुनी इस बदजात की बातें ? जाओ, इसकी हंटरों से चमड़ी उधेड़ दो !”

अन्तस् की अशान्ति और उद्वेग के तूफान को शान्ति से रोकती हुई केसर पुनः बोली, “मार-पीट से कोई हल नहीं निकलेगा। मैं—”

तभी शिव आ गया। उसने सूरज के पाँव पड़ कर कहा, “आप इन पर गलत आरोप मत लगाइए। यह नादान है। आवेश में झूठी बातें भी कह सकती है। मैंने अपनी आँखों से देखा था कि ठाकुर स्वयं शराब में मदहोश हुए खिड़की से कूदे थे।” “माँ सा ! जीवन जटिल है, उसमें शीघ्रता और व्यग्रता अत्यन्त हानिप्रद सिद्ध हो सकती है।” “आप इतनी अधीर होकर कार्य करेंगी, फिर परिणाम क्या होगा ?”

सूरज को शिव की इस बात से काफी सन्तोष मिला। चलो, लोगों का सन्देह दूर हो गया। नहीं तो, न जाने वे केसर की बातों का क्या-क्या अर्थ लगाते। बात का जरा भी सुराग भविष्य में इस बात को तूल देने के लिए काफी था। इसलिए उसने धीरज से काम लेना ठीक समझा। उसने अपने शरीर को विचित्र तरह का झटका दिया। अपने बिखरे बालों को हाथ से ठीक

किया। आँधल को कमर की ओर लपेट कर उसे लहेंगे में दबाया और अत्यन्त गम्भीर स्वर में बोली, "इसे छोड़ दो, लेकिन इस बात का ख्याल रहे कि यह महल में किसी तरह की गड़बड़ न करे और शिव, तू अनूपसिंह के पास रहना। आज से तू उसे एक घड़ी भर के लिए भी मत छोड़ना।"

सूरज चल गई। शिव दबे पाँव चला। केसर आहत साँपिनी-सी भारी कदम रखती हुई चली। वह बार-बार अपनी गर्दन को झटका देती थी।

अपने कमरे में जाकर केसर ने कपड़े बदले। पता नहीं, उसके दिमाग में एकाएक कौन-सा विचार आया जिससे उसके चेहरे पर उत्साह झील पड़ा, जिससे उसके होठों पर खल-नायिका वाली कुटिल व अर्थ भरी मुस्कान खेल गई।

क्षण दो क्षण बीते होंगे कि उसने एक बड़ा सन्दूक खोला। उस सन्दूक में से उसने एक सुन्दर लहंगा और ओढ़नी निकाली। तब उसने अपना हाथ-मुँह धोया और सज कर अपने कमरे से निकली।

अनूपसिंह और भोपालसिंह दोनों बैठक में बैठे बात-चीत कर रहे थे। दासी ने अनूपसिंह को केसर के आने की सूचना दी। अप्रत्याशित आगमन के कारण उसके दिमाग में सन्देह के बादल उमड़ आये। भोपालसिंह उठकर पिछले दरवाजे से चला गया। उसके चेहरे पर सन्देह के भाव थे। अनूपसिंह अपनी कुर्सी पर बैठा था। उसके शरीर का ऊपरी हिस्सा हिल रहा था जो उसकी मानसिक असन्तुष्टि का सूचक था।

केसर ने आते ही चरण-स्पर्श किये। बोली, "आप मुझे क्षमा कर दीजिए, मैंने आपका अपमान किया है।"

अनूपसिंह अप्रत्याशित परिवर्तन के मर्म को नहीं समझा। वह दृढ़ता-दृढ़ता बोला, "मैं तुम्हें माफ नहीं कर सकता। तुम यहाँ से इसी समय चली जाओ।"

"मैं यहाँ से नहीं जाऊँगी। जब तक आप मुझे माफ नहीं करेंगे, तब तक मैं इस कमरे के बाहर कदम भी नहीं रखूँगी।" केसर के स्वर में दृढ़ता थी।

अनूपसिंह ने उसके कन्धों को अपने दोनों हाथों से पकड़ा। उसने चाहा कि वह उसे जोर का धक्का मारे, किन्तु एकाएक उसकी दृष्टि केसर के चेहरे पर जम गई। वासना जाग उठी। वह केसर के अपूर्व रूप को देखता रहा, देखता रहा।

“मैं आपसे माफी चाहती हूँ, सच्चे मन से माफी चाहती हूँ। आप विश्वास करें, भविष्य में मैं आपकी आज्ञा के बिना कुछ भी नहीं करूँगी। आपके बिना मेरा जीवन कुछ नहीं ?”

अनूपसिंह ने मड़क कर कहा, “क्यों, क्या मैं मरने वाला हूँ ?”

केसर ने तुरन्त कहा, “आप शायद यह नहीं जानते कि ठकुराणी सा ने ही आपके पिता की हत्या की है। मैं आपकी सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि उनकी आज्ञा से ही गोलों ने ऐसा काम दिया था।.....और मुझे डर है कि कहीं वे आपको भी खत्म न कर डालें।”

अनूपसिंह के चेहरे पर पसीना आ गया। वह घबराया हुआ बोला, “यह सम्भव नहीं। ऐसा नहीं हो सकता ! मेरी माँ मेरे साथ अम्पाय नहीं कर सकती !”

“नाथ ! यह लिप्सा बड़ी भयानक होती है। यह बाप से बेटे, भाई से भाई, और मित्र से मित्र को लड़ा देती है।”

अनूपसिंह गम्भीर हो गया।

केसर ने उठते हुए कहा, “मैंने एक पत्नी का कर्तव्य निभाया है। अब यह आप पर है कि आप इस पर विश्वास करें या न करें।” केसर बाहर निकल गई। द्वार पर शिव उसे मिल गया। शिव को देखते ही उसका प्रणय जाग उठा। वह शिव के उदास और सूखे चेहरे को देखती रही।

बोली, “कैसे हो ?”

शिव ने सूखी मुस्कान के साथ कहा, “चेहरा नहीं कह रहा है ? केसर ! अब मैं जल्दी से जल्दी यहाँ से भाग जाना चाहता हूँ। अब मेरा इस चहार-दीवारी में कोई भी लगाव और दिलचस्पी नहीं।”

“क्यों ?”

“क्योंकि अन्धी भावुकता और अतृप्तियों की भयंकर प्रतिक्रियावश मैं तुम्हें अपना समझ रहा था। लेकिन आज इन कानों ने जो सुना है, उससे लगता है कि दो विभिन्न वर्गों के युवक-युवती में हार्दिक प्यार नहीं हो सकता। किसी तरह की स्थायी समता और समझौता नहीं हो सकता।”

केसर जड़वत् हो गई। उसने आगे बढ़ कर शिव को पकड़ लिया, “नहीं-

नहीं, तुम्हारा सोचने का तरीका गलत है। मैं तुम्हारे सिवाय किसी को प्यार नहीं कर सकती।”

“फिर तुमने ऐसा क्यों कहा?”

“यह चाल है। तुम नहीं समझ सकते कि यहाँ जीवन कितना विकृत और उलझनों से भरा है। हर व्यक्ति दाँव पर दाँव फेंक रहा है। किसी को किसी के सुख-दुःख से सरोकार नहीं। सिर्फ निज का स्वार्थ और निज का आधिपत्य। तब मैं ऐसे घातावरण में अपने आपको कैसे बचा सकती हूँ? मैंने भी सोचा कि क्यों नहीं, मैं भी एक चाल चलूँ।”

“तुम्हारी चाल यहाँ असफल होगी। ठकुराणी तुम से बहुत चतुर, बहुत कूटनीतिज्ञ और बहुत ही सजग है। वह तुम्हारी इन साधारण चालों को सफल नहीं होने देगी।”

“क्यों नहीं होने देगी?”

“इसलिए कि तुमने प्रारम्भ में जो-जो गलतियाँ और धोपणाएँ की हैं, उसके बाद अनूपसिंह को तुम अपने साथ नहीं मिला सकती। क्या तुम समझती हो कि ठकुराणी तुम्हारी हरकतों से अनजान है? कदापि नहीं। सुनो, उसका हर आदमी तुम्हारे पीछे लगा हुआ है।”

केसर का मुँह पीला पड़ गया।

वह पराजित-सी जल्दी-जल्दी कदम उठाती हुई चली गई।

शिव अनूपसिंह के पास आ गया।

अनूपसिंह कुर्सी पर बैठा-बैठा कुछ विचार रहा था।

उसने शिव को देखा। गर्दन ऊँची की ओर वह घृणा से बोला, “शिव, तू यह बता सकता है कि तेरी बाईं सा मुझसे सचमुच प्यार करती हैं या नहीं? यदि हाँ, फिर उन्होंने आज तक मुझ से घृणा क्यों की? मेरी आत्मा को क्यों दुखाया? मुझे नपुंसक क्यों कहा? मुझे छोड़ कर वह तेरे पास क्यों गई?”

शिव अपने आपको सँभालता हुआ बोला, “वह आपको प्यार करती हैं अथवा नहीं करती हैं, यह मैं नहीं जानता। सिर्फ मैं इतना जानता हूँ कि वह मेरे पास माँ की मृत्यु पर ही आई थी। आखिर मैं उनके पीहर का हूँ।”

“लेकिन अभी वह कुछ और कह रही थी।”

“यह आपका घरेलू मामला है, मैं इसमें किसी तरह की दखलन्दगी नहीं कर सकता। ऐसा करना मेरे लिए ठीक नहीं रहेगा।”

“लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि कुंवराणी मुझे प्यार करती हैं। वह छिनाल और कुलटा नहीं हो सकतीं।”

उसका इतना कहना था कि सूरज ने कमरे में प्रवेश किया। वह काले वस्त्रों में विचित्र आकर्षण लिये हुए थी। रंग उसका गोरा था ही, इसलिए उसे काले वस्त्र बड़े फत्र रहे थे।

उसने समीप में पड़ी कुर्सी को ठोकर मार कर कहा, “तू मेरे बेटे को मेरे विरुद्ध भर रहा है? नीच, कुत्ते, हरामी, मैं तेरी जयान कटवा डालूंगी। “...भोपालसिंह! इस हरामखोर को अंधेरी कोठरी में बन्द कर दो। यह बड़ा खतरनाक मालूम होता है।”

चार-पाँच व्यक्तियों ने शिव को पकड़ लिया। शिव ने कुछ भी नहीं कहा। वह चुपचाप अंधेरी कोठरी की ओर चला गया।

सूरज ने अनूपसिंह के कन्धों को पकड़ लिया। दाँतों को किटकिटा कर यह बोली, “तुम इतने गये गुजरे हो? उस छिनाल की दो-चार झूठी-मीठी बातों को सुन कर पिघल गये? अपनी माँ के अरमानों का खून करने लगे?”

“लेकिन मैंने ऐसी कोई भी बात नहीं कही।”

माँ का क्रोध भड़क उठा। वह क्रोध में अपने सारे शरीर को हिलाकर बोली, “तुम झूठ बोलते हो! ओह! तुम्हें मेरा बेटा नहीं होना चाहिए था। तुम्हें मेरी कोख से पैदा भी नहीं होना चाहिए था।” “मैं तुम्हारा दूसरा विवाह करने जा रही हूँ एक अद्वितीय सुन्दरी से, और तुम उस कुलटा से मिल कर मेरे बारे में पड़पड़ करते हो? छिः!”

अनूपसिंह भयभीत हो गया। डरता हुआ बोला, “मैं उससे नहीं मिला, वह खुद मुझसे मिलने आई थी।”

“लेकिन तुमने उसे अपने कमरे में दाखिल क्यों होने दिया? क्या तुम उसे अपमानित करके नहीं निकाल सकते थे? लेकिन तुमने उससे बातचीत की। उसकी विनती और उसके प्यार के निवेदन को सुना। सचमुच तुम राजपूत और मेरे बेटे कहलाने लायक नहीं हो। और मैं तुम्हें खूब समझने लगी हूँ कि तुमने आखिर ऐसा क्यों किया, क्योंकि तुम बहुत कमजोर इस्तान हो।

वासना के कीड़े हो। तुमने जैसे ही उसके रूप को देखा, वैसे ही तुम्हारा दिल मोम की तरह पिघल गया और तुम अपनी माँ पर सन्देह करने लगे। उम माँ पर, जिसने सिर्फ तुम्हारे जैसे दया के पात्र को बहुत बड़ा आदमी बनाने के लिए हर एक से क्षमता मोल लिया। अगर मैं तुम्हारे पीछे साया बन कर नहीं लगती तो यह तुम्हारी पूगलगड़ की पत्नी तुम्हें कभी का जहर देकर खत्म कर देती।”

सूरज का अंग-अंग काँप रहा था। उसका चेहरा क्रोध से विकृत हो गया था। वह अनूपसिंह की ओर पीठ करके बोली, “तुम आगे भी ऐसी ही हरकत करोगे और वह तुम्हें खत्म कर देगी।”

वह कुछ देर तक सामोश रही। अनूपसिंह इन निरन्तर आघातों को नहीं सह सका। उसकी आँखों में आँसू छलछला आये। सूरज ने उसे देखा तो वह कोमल स्वर में बोली, “तुम्हें इतना सोचना चाहिए कि मैं तुम्हारी माँ हूँ और एक माँ अपने बेटे को कभी भी नहीं मरवा सकती। तुम्हें तुम्हारी यह धरगला रही थी। क्या तुम्हें विश्वास है कि मेरी जैसी एक क्षत्राणी अपने हाथों अपने सुहाग को मिटा सकती है? फिर जब उसने मुझ पर यह आरोप लगाया, तब तुमने उसे पीटा क्यों नहीं? देखो बेटे, तुम एक राजकुमार की तरह अपने जीवन को व्यतीत करो। मैं तुम्हारा विवाह शीघ्र ही एक ठाकुर की बेटी जीत कुँवर से करने वाली हूँ। मुझे उम्मीद है कि तुम इससे कभी नहीं मिलाओगे।”

सूरज कुँवर हवा की गति से बाहर हो गई।

×

×

×

शिव को अँधेरी कोठरी में गये काफी दिन हो गये। उसे दोनों समय भूँग की दाल और चार सूखी रोटियाँ मिलती थी। उसका शरीर बहुत दुर्बल हो गया था। सूरज कुँवर ने केसर के चारों ओर पहरा बिठा दिया था। एक तरह से वह कमरा उसके लिए जेल के बराबर हो गया था। शिव की क्या-क्या मंत्रणाएँ दी जा रही हैं, यह वह नहीं जान सकी। इसका एक

कारण यह भी था कि उसने दो दासियों को इस काम के लिए तैयार किया था। वे बेचारी सारे महल की खबर लगाकर उसे देती थी। लेकिन सूरज के गुप्तचरों से वे भी दोनों नहीं बच सकीं। निदान एक की टांग तोड़ दी गई और दूसरी को धोरी का इल्जाम लगा कर जेल भेज दिया गया। इसके बाद किसी भी गुलाम का साहस नहीं हुआ कि वह केसर से मिसता और उसे महलों के गुप्त समाचारों से अवगत कराता।

अनूपसिंह का दूसरा विवाह तय हो चुका था। शीघ्र ही शादी होना निश्चित हो गया था। सूरज कुँवर अब उस पर विशेष खर्च कर रही थी। फलस्वरूप उसकी विकृतियाँ साकार रूप लेने लगीं। वह हर रात शराब में डूबकर नाच-गाने कराता था। उसके कमरे में भानवी के साथ हुए अमानुषिक अत्याचार देखकर मानवीयता रो उठती थी। कभी-कभी उसकी राक्षस-वृत्ति इतनी भयकर होती थी कि लड़की येहोश तक हो जाती थी।

लेकिन सूरज चाहती थी कि अनूपसिंह इनमें सम्मिलित रहे, ताकि साधूपुर का सारा शासन उसके हाथ में रहे। लेकिन इधर कांग्रेस की जागृति के कारण कुछ निम्नवर्ग के राजपूतों में जागरण हुआ और उन्होंने समस्त सामन्तों की परवाह किये बिना इन प्रथाओं का विरोध किया। उसकी लहर सब जगह पहुँची। वपों की गुलामी में सिमकते उन प्राणियों में मुक्ति की ओर अप्रसर होने की चेतना जागी। महलों, गढ़ों, डेरो में वस्तु की तरह उपयोग होने वाले उन इन्सानों को ऐसा लगा जैसे वे भी अन्य प्राणियों की तरह जीने का हक हासिल कर लेंगे। सूरज को अपने गढ़ में सबसे अधिक खतरा था शिव से। हालाँकि शिव इन दिनों अँधेरी कोठरी में था। उसे बहुत यातनाएँ दी जा रही थी, फिर भी उसका गहरा मोन और उसके प्रति वहाँ के गुलामों की सहानुभूति आगामी खतरे की सूचक थी क्योंकि गुलाम लोग हर समय उसकी चर्चा करते थे। उसके बारे में उनमें बड़ी सहानुभूति थी।

कांग्रेस के कुछ सदस्य भी निरन्तर इस प्रथा के विरुद्ध बोल रहे थे।

सूरज कुँवर ने अपने गुलामों को एक दिन आकर समझाया, “यह सब असम्भव बातें हैं। वपों से चली आ रही परम्परा को कोई नहीं तोड़ सकता।”

गुलामों ने कोई जवाब नहीं दिया।

तब वह शिव के पास गई ।

अंधेरी ओर सोलन मरी कोठरी । हवा के लिए ऊपर एक छोटा-सा सूराल । नीचे सुरदरा फश । मच्छर और गन्दगी ।

शिव बहुत दुबला हो गया था । उसके चेहरे पर पीलापन झलकने लग गया था । मुँह सूख गया था, जिससे गालों की हड्डियाँ उभर आई थीं । वक्ष की पसलियाँ भी सहज गिनी जा सकती थी । लेकिन उसके मुख पर प्रशान्त सागर की तरह शान्ति विराज रही थी ।

उसने जैसे ही सूरज को देखा, प्रणाम किया ।

सूरज ने उसे बाहर निकालते हुए कहा, "मैं तुझे एक शत पर यहाँ से निकाल रही हूँ कि तू इसी समय यहाँ से कहीं बहुत दूर चला जा । याद रहे, अगर भविष्य में मैंने तुझे कभी यहाँ देखा तो तेरी दशा वही होगी जो मैं सदा दूसरों की करती आई हूँ ।"

शिव ने गहरी-तीव्र दृष्टि से सूरज को देखा । इस दृष्टि के सत्य को सूरज नहीं सह सकी । वह काँप-सी गई । शिव मुसकरा पड़ा ।

सूरज कुँवर ने रास्ते में उसे कई आदेश दिये, पर शिव ने अपना मौन नहीं तोड़ा । इस मौन से सूरज का पारा गरम हो गया और इस गर्मी में उसने शिव को वेदजह दो-चार ओछे बोल कह दिये ।

शिव ने अपने सामान और पुस्तकों की गठरी बाँधी और उस नारकीय यातना में सड़ने वाले इन्सानों से विदा लेकर वह उनसे बोला, "मेरे जाने का आप लोगो को बड़ा कष्ट है । आपकी आँखों के आँसू मेरे लिए मोतियों से कम नहीं, लेकिन आप इतना विश्वास रखें कि मैं आप से, आपकी इस धरती से दूर जाकर भी दूर नहीं रहूँगा । मैं यहाँ से बहुत दूर रह कर भी आपकी मुक्ति की कामना करूँगा । और उस समय तक चैन की साँस नहीं लूँगा, जब तक यह कानून न बन जाय कि इस देश में कोई भी इन्सान इन्सान को गुलाम नहीं रख सकता ।".....इन गढ़, महल और हवेलियों के स्वामियों; इन ऊँचे महलों के राजे-महाराजों की दशा भी सदा एक-सी नहीं रहेगी । इनमें भी परिवर्तन आयेगा । पता नहीं क्रान्ति का कौन-सा कदम इनके महलों और हवेलियों को धूल में मिला दे । भाइयो ! कोई आदमी जन्म से न छोटा होता है और न बड़ा । जीने का हक सबको बराबर है, किन्तु ये जो

हमारे अन्नदाता हैं, ये हमसे जीने का हक छीनते हैं और हमें कुत्ते की तरह मरने के लिए मजबूर करते हैं। हमसे जानवरों की तरह काम कराते हैं, पर हमें जानवरों की तरह पेट भर भोजन नहीं देते। ये महान् हैं, हमारे प्रभु हैं, लेकिन ऐसे प्रभुओं का जीवन शाश्वत नहीं है। ऐसे प्रभुओं को अन्धे होकर पूजना हितकर नहीं है। इनसे मुक्त होना ही पड़ेगा। इनसे एक दिन लड़ना ही पड़ेगा।”

शिव चल पड़ा।

सूरज अपने अन्तस् के आन्दोलन को दबा कर खड़ी रही। बीच में उसके मन में यह विचार आया था कि वह बन्दूक से इस तरह की भयानक आग उगलने वाले शैतान को सदा-सदा के लिए सुला दे, पर उसके विवेक ने ऐसा नहीं होने दिया। वह शान्त-गम्भीर खड़ी रही।

शिव चला जा रहा था।

महल के बाहर कदम रखते ही उसे केसर का ख्याल आया। उसके कदम दक गये। मन में वेदना का ज्वार उमड़ पड़ा। आँखों के कोण भीग गये। उसने घूम कर उसके कमरे की ओर देखा। वह अपने झरोखे में खड़ी थी। हाथ का संकेत कर रही थी।

शिव ने सोचा, ‘इन शैतानों के बीच इस बेचारी का कौन है? वह कैसे सुख की साँस लेगी और वह कैसे अपने मन की बात किसी ओर को कहगी, लेकिन वह भी यहाँ रह कर कर कुछ भी नहीं कर पायेगा। यहाँ रहने का मतलब है कि उम्र भर पशु की तरह काम करके, अन्धेरी कोठरी सड़ना।’

वह अपने हृदय पर पत्थर रखकर चल पड़ा।

बाहर उसे चिमन मिल गया। चिमन राजधानी से आया था। शिव को जाते देखकर वह बोला, “कहाँ जा रहे हो?”

“पता नहीं।”

“क्या तुम्हें अन्धेरी कोठरी से निकाल दिया? भई, मुझे अभी भी यकीन नहीं होता है।” उसने शिव को छू कर कहा।

“संयोग बड़ी चीज होती है। देख चिमना, केसर का ख्याल रखना। उसका जीवन यहाँ खतरे से खाली नहीं है।”

“तुम चिन्ता न करो !”

“और सुन, मैं राजधानी में ही रहूँगा ।...गली में समझे । जब कभी उधर आओ, मुझ से जरूर मिलना । केसर की मदद करना ।”

“अच्छा भैया, तुम्हारा तो इस नरक से पिण्ड छूटा ।”

शिव चला । धीरे-धीरे उसकी आँखों से सब कुछ दूर हो गया—गाँव, केसर और अपने ही जैसे सैकड़ों गुलाम ।

×

×

×

२२

....

शिव रियासत की राजधानी में रहने लगा । राजधानी की एक तंग और गन्दी गली में, जहाँ गन्दगी की निरन्तर दुर्गन्ध से आदमी का माथा भ्रमा जाता है । गन्दी नालियाँ और उसमें किलबिलाते कीड़े घृणास्पद चित्र प्रस्तुत करते रहते हैं । शिव जिस मकान में रहता है, वह मकान कच्चा है । उसके एक परिचित कांग्रेसी मित्र आत्माराम का । उन्होंने ही यह मकान शिव को रहने के लिए दिलवाया था । किराया कुछ नहीं । शिव को इस मकान में एक बात का हर समय खतरा रहता है कि कहीं थारिश या सूफान से यह मकान घराशाही न हो जाय ।

कभी-कभी रात के गहरे अँधेरे में वह विचारों में तीन तारों की गिनता हुआ सोचा करता है कि कही धीरे वृष्टि की बजह से यह मकान गिर न जाय । इन दुष्कल्पना मात्र से उसके रोंगटे खड़े हो जाते हैं और उसके हृदय में विचित्र भय की अनुभूति होती है । तब उसकी रग-रग काँप जाती है और उसके शरीर में मृत व्यक्ति की सी जड़ता आ जाती है । तब वह कभी-कभी तक शून्य आकाश को अनिमेव निहारता रहता है और उसकी पुतलियों के नीचे विपाद के हल्के वादन मँडरा उठते हैं ।

परसों की बात है ।

शिव दोपहर को बाजार की ओर गया हुआ था। सड़क धूप से भरी थी। आवागमन भी विशेष नहीं था। सेठानी चन्दा की घोड़ा-गाड़ी जा रही थी। घोड़ा-गाड़ी के पीछे एक गाड़ी और थी, उसमें शहर के कई प्रतिष्ठित महानुभाव बैठे थे। गाड़ी के साथ राज्य के सिपाही भी थे।

गाड़ी को देखकर लोगों ने फवतिर्पा कर्सी। चन्दा के चारे में कई तरह की अफवाहें फैली हुई थी। उनका पति निर्विरोध भाव से अपनी पत्नी का खेल देख रहा था। राजाओं की सर्वेसर्वा बन कर चन्दा समस्त शासन को अपने काबू में करना चाहती थी। यही धजह थी कि उसका सम्बन्ध जिस दिन खेतसिंह से हुआ, उसी दिन से खेतसिंह की वासना बढ़ने लगी और उसकी जनानी ड्योड़ी में नई लड़कियों की संख्या भी उतनी ही तेजी से बढ़ने लगी।

शिव एक बार नहीं, सैकड़ा बार सेठानी की घोड़ा-गाड़ी को देख चुका था। जब कभी वह देखता था, उसके मन में दयाल उठता था कि वह राज्य की सबसे बड़ी शक्ति से गुलाम-प्रथा के विरुद्ध कदम उठाने के लिए प्रार्थना करे, लेकिन जब-जब वह यह विचार कर उसकी हवेली पर गया, तब-तब उसने चन्दा की बड़े-बड़े राज्याधिकारियों व प्रतिष्ठित नागरिकों से घिरा हुआ पाया। वह अपने मन के भाव मन में लेकर वापिस आ जाता।

आज उसने फिर देखा। सदा की तरह उसके मन में यह भाव जाग्रत हुआ। उसने तुरन्त निश्चय किया और वह गाड़ी के पीछे-पीछे चल पड़ा।

वह उसकी हवेली में थोच गलियों के रास्तों से जल्दी पहुँच गया। वह ड्यूटी पर तैनात सिपाही की तरह खड़ा हो गया। चन्दा जब गाड़ी से उतरी, तब उसने प्रणाम किया। प्रत्युत्तर कुछ भी नहीं मिला। वह तुरन्त अपनी हवेली में घुस गई। उसने अपने पति पर भी अनुराग भरी दृष्टि नहीं डाली। वह वेचारा स्वागत के लिए खड़ा था और चन्दा आँचल को समेटती हुई भीतर चली गई। उसके पीछे दीवान जो व अन्य सज्जन। थोड़ी देर के बाद सारे महानुभाव भीतर से वापिस आते हुए दिखाई पड़े। शिव ने दरवान से सेठानी से मिलने के लिए कहा। उसने जवाब दिया कि सेठानी जी अभी नहीं मिल सकतीं। उन्हें नौद आ रही है।

पता नहीं शिव को क्या सूझा कि वही बैठ गया। उसने दरवान से

अनुरोध किया, “मैं सेठानी जो की प्रतीक्षा करूँगा, जब वह जग जायें तब तुम उनसे दुबारा अनुरोध कर देना।”

लगभग चार बजे शिव की भेट पहली बार उस स्त्री से हुई जिसकी मुट्ठी में राजाजी थे, जिसने राजाजी के जीवन की घारा ही बदल दी थी। शिव ने देखा—अप्रतिम सौन्दर्य-सम्पन्न है सेठानी। मिष्ठभाषी इतनी कि आदमी का मन मोह ले। प्रभावशाली व्यक्तित्व उसके आकर्षण का एक बड़ा केन्द्र था।

वह एक आलीशान गद्दे पर घँटी थी। उसका कमरा कीमती साजो-सामान से सज्जित था। बड़े-बड़े झाड़ू-फानूस और बड़ी-बड़ी आलमारियाँ। चारों ओर आदमकद शोशे, जिनमें गद्दी पर बैठे व्यक्तियों की प्रतिच्छवि साफ तौर पर दीखे।

सेठानी ने पूछा, “क्या बात है?”

शिव ने हिम्मत के साथ कहा, “आप से माफी पहले माँग लेता हूँ। कोई बेअदबी हो जाय तो बुरा मत मानिएगा।”

सेठानी के अधरों पर हल्की मुस्कान दोड़ पड़ी। उस मुस्कान ने उसके सौन्दर्य को और भी खिला दिया। अधिकार की भावना सहित वह बोली, “मैं तुम्हारी हर बात सुनूँगी। तुम्हारे मन में जो भी है, निस्संकोच और निर्भय होकर कहो और विश्वास रखो, उसके लिए मुझसे जो बन पड़ेगा, वह मैं करूँगी।”

शिव के चेहरे पर सहसा कई प्रश्न उठे। धीरे-धीरे ये प्रश्न उसकी आँखों की छाया में गम्भीरता लाने लगे। उसने एक बार समस्त कमरे की वस्तुओं पर अपनी दृष्टि दोढ़ाई। सेठानी से नज़र न मिला कर वह बोला, “मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप राजाजी को कह कर जनानी झ्योड़ी समाप्त करा दें।”

सेठानी के मस्तिष्क में हलचल उत्पन्न हो गई हो, ऐसा उसकी विस्फारित आँखों से विदित हुआ। वह कुछ क्षण तक बोल नहीं सकी।

शिव ने उसकी ओर न देखते हुए कहा, “यह राजाजी जैसे महान् आदमी पर कलंक है। हजारों युवतियों को अपनी हविस की शक्ति के लिए पहारदीवारी में बन्द करके उन्हें नारकीय यंत्रणाओं से पूर्ण जीवन-यापन करने के लिए विवश करना अन्याय ही नहीं, अत्याचार है।” और आप यह अच्छी

तरह जानती ही है कि उन्हें वहाँ किस तरह तड़प-तड़प कर, घुट-घुट कर साँसें लेनी पड़ती है।”

शिव चुप हो गया। उसने चन्दा से उत्तर की आशा की, पर चन्दा एक-दम मौन रही, किन्तु उसकी आकृति पर कुछ तनाव दीखने लगा।

शिव ने फिर कहा, “आप स्वयं नारी है। नारी जीवन के कष्टों से भलीभाँति परिचित हैं। क्या इस तरह के अत्याचार आप किसी नारी पर होते देख सकती हैं? आप ऐसी घृणित प्रथा को बन्द कराके उन हजारों युवतियों की दुआएँ लें, मैं यही चाहता हूँ।”

चन्दा ने गहरी साँस ली। बोली, “मैं तुम्हारी सिफारिश कर सकती हूँ, मानना और न मानना राजाजी के हाथ है, लेकिन मैं तुम्हें व्यक्तिगत रूप से एक सलाह दूँगी कि यह सम्भव नहीं है।”

“आपके लिए कुछ असम्भव नहीं है।” शिव ने हठात् कहा। चन्दा चौंक पड़ी। कुछ रुष्ट होकर बोली “तुम्हारे कहने का क्या मतलब है? क्या मैं कोई राजा हूँ या हाकिम?”

शिव ने बात को सम्भासा, “राजा नहीं हूँ पर महान् विदुषी हैं आप। आपकी सलाह राजा क्या, यहाँ के बड़े-बड़े राज्याधिकारी मानते हैं।”

लेकिन सेठानी का मन शिव की बात से बाचाल हो गया। वह तड़प कर बोली, “मैं केवल सिफारिश कर सकती हूँ, बस! और हाँ, तुम्हीं वही युवक हो जिसने राजाजी की जनानी द्यौड़ी के खिलाफ भयानक पर्वे निकाले हैं? जनता में उनके विरुद्ध प्रचार किया है?...देखो, सत्ता से टकराना ठीक नहीं है। इसका परिणाम बहुत भयानक हो सकता है।”

“मैं भयानक से भयानक परिणाम से टकराने को तैयार हूँ।”

“कहना आसान होता है और भोगना कठिन।” सेठानी ने विनम्र होकर बात के रख को बदला, “फिर अकेले तुमने इस बात का क्यों ठेका ले रखा है? मेरी बात मान कर तुम कोई दूसरा काल कर लो। यह सब मिटने-मिटाने की नहीं।”

शिव ने कुछ कहना चाहा। वेदना ने उसकी आँखों में धुमड़ कर उसके मुख को करुणाप्लावित कर दिया, लेकिन चन्दा ने उसे तुरन्त परामर्श देते हुए पुनः कहा, “यदि तुम मेरा कहना मान लो तो मैं तुम्हें किसी अच्छी जगह

नौकरी दिलवा सकती हूँ। कहो तो रेलवे में और कहो तो किमी दूसरे दफ्तर में। तनखा भी अच्छी मिल जायगी और जीवन भर सुख-सन्तोष से रहोगे।”

शिव धीरे से हँस पड़ा। व्यथा भरे स्वर में वह रुक-रुक कर कहने लगा, “नौकरी-चाकरी की मुझे कोई भी चिन्ता नहीं है। भगवान पेट भरने के लिए रूखी-सूखी कही से भी दे देता है।”

“रूखी-सूखी की मैं बात नहीं करती। मैं बात करती हूँ आनन्द की। देखो शिव, जीवन केवल असम्भव के पीछे भागना नहीं है। असम्भव के पीछे विवेकहीन भागा करते हैं।”

“किसी को असम्भव मान कर साहस को छोड़ना भी उचित नहीं।” सेठानी जी! आप सब कुछ करा सकती है। आप चाहें तो एक-एक नारी को वापस उसका सुखी-ससारा दे सकती हैं।”

चन्दा का मन परित्याप से जल उठा। उसके अन्तर में स्पष्ट ध्वनियाँ बोल उठी कि शिव उसका और राजाजी के बीच का अनुचित सम्बन्ध जानता है और इस विचार मात्र से उसका मन व्यथा और खिन्ता से भर आया। इस पर भी वह आवेश में नहीं आई और उसने बड़ी विनम्रता से शिव को समझा दिया कि वह उसकी इस कार्य में कोई भी मदद नहीं कर सकती है।

शिव वहाँ से चला आया।

रास्ते में आत्मारामजी मिल गये। उन्होंने उसे मायूस देखकर पूछा, “क्या बात है? तुम इतने उदास क्यों हो?”

शिव ने उत्तर दिया, “मैं सेठानी जी के पास गया था। उनसे प्रार्थना की कि राजाजी की बढ़ती हुई ज्यादतियों को रोका जाय और जनानी इमोड़ी में सिसकती हुई नारी-जाति को मुक्त किया जाय, पर उन्होंने उस मुक्ति की असम्भव बातला दिया।”

आत्मारामजी ने उसके कन्धों को मजबूती से पकड़ कर कहा, “तुम चिन्ता न करो। समय प्रतीक्षा कर रहा है। तुम्हारी कामना जरूर पूरी होगी।”

आत्मारामजी चलने लगे। तभी शिव ने उनसे पूछा, “क्यों गाँव से कोई समाचार आया?”

“चिंमन आया हुआ है। वह तुम्हारा इन्तजार कर रहा है। मैं उसे दस ... देकर आया हूँ। जरा अपने मेहमान का अच्छा स्वागत कर देना।”

“जरूर !” वह कर शिव जल्दी-जल्दी घर की आगे चला ।

चिमन उसकी घाट जोह रहा था ।

दोपहर का सूरज राजधानी की पहाड़ियों के पीछे छुप गया था । पहाड़ियों के पीछे ऐसा लग रहा था मानो वहाँ भयानक आग लगी हुई हो ।

शिव और चिमन बैठे-बैठे बातें कर रहे थे ।

चिमन ने कहा, “महलों की आग बढ़ रही है । सूरज कुँवर ने बेचारी केसर की भाँति-भाँति से सत्ताना शुरू कर दिया है ।”

“मैं क्या करूँ ?”

“हम सिवाय उन्हें धीरज देने के कुछ नहीं कर सकते । और उस अनूप-सिंह की बात ही मत पूछी । वह केसर के नाम से चिढ़ता है । दिन भर शराब के नशे में खूर वह हमारी बहू-बेटियों की इज्जत से खेलता रहता है । कल एक मासूम लड़की खरीद कर साईं गई, तेरह वर्ष की नाजुक ! मैंने उसे देखा । सब भैया, मेरी आत्मा चीख पड़ी । वह मोली-भासी, गुड़िया-सी अबोध । उसकी प्यारी-प्यारी सुन्दर आँखों में प्रण भर आ भोनापन ! मैं उसे देखता रहा । वह मुझे देखती रही । फिर वह मेरे पास आई । बोली, “मुझे यहाँ क्यों लाया गया है ?”

मैं चुप रहा ।

“तुम बोलते क्यों नहीं, मुझे यहाँ क्यों लाया गया है ?”

“मैं नहीं जानता ।”

“लेकिन एक औरत कहती थी कि मुझे यहाँ प्यार करने के लिए लाया गया है । आज रात मुझे बहुत से जेवर पहनाये जायेंगे । अच्छे-अच्छे कपड़े पहनाये जायेंगे । फिर मुझे ठाकुर सा के पास भेजेंगे । तुम मुझे बताओ न कि यहाँ मुझे क्यों भेजेंगे ? यह उस औरत ने भी नहीं बताया । आखिर यह प्यार है क्या ?”

मैं क्या उत्तर देता ! मन में वेदना का तूफान उठा । कुछ कहते नहीं बना ! उसे अपने पास बुलाया और सीने से चिपका कर कहा, “तुम्हें यह सब नहीं पूछना चाहिए, ऐसा पूछने से ठाकुर सा नाराज हो जाते हैं ।....”

“क्यों ?”

“मुझे लगा कि उस लड़की को प्रश्न करने की आदत है ! हर उत्तर पर वह एक नया प्रश्न कर देती थी और जब वह प्रश्न करती थी तब उसकी पुतलियों में व्यथा भरा विस्मय तैर उठता था और उसके मुख पर एक ऐसा अबोध भोलापन टपकता था जिसके कारण मेरा मन बरबस अज्ञात दुःखभरी अनुभूति से भर आता ।

“मैं उसे सात्वना नहीं दे सका—एक ऐसा उत्तर जो उसके दिल को सन्तुष्ट कर सके । तभी उसको बुलावा आ गया और वह चली गई । उसकी कसक आज भी मेरे हृदय में है । सवेरे मालूम हुआ वह लड़की मर गई, कारण अज्ञात । फिर उसकी लाश को भी शीघ्रातिशीघ्र जला दिया गया ।

“अनूपसिंह राक्षस है । मैं कहता हूँ कि इसके पापों का गिन-गिन कर बदला लिया जाय ।”

शिव ने कहा, “मैं एक पर्चा निकालूँगा । मैं इस अनूपसिंह की नींद हराम कर दूँगा ।”

चिमन की आँखों में भय नाच उठा । शिव के मुख पर जो उत्तेजना थी, वह बड़ी भयावह थी ।

चिमन ने कहा, “नहीं भैया नहीं ! अब तुम उधर मत जाना, तुम्हें मालूम होना चाहिए कि सूरज कुँवर तुम्हें देखते ही गोली से उड़वा देगी ।”

शिव ने कुछ नहीं कहा । वह दीवार के सहारे खड़ा हो गया । चिमन उठते हुए बोला, “मुझे जल्दी वापस सीटना है । लो देखो, मैं तुम्हें केसर का पत्र देना तो भूल ही गया ।”

चिमन ने केसर का पत्र निकाल कर शिव को दिया ।

शिव ने चिमन से अनुरोध किया, “रोटी खाकर जाना, ऐसी भी क्या जल्दी है ?”

“नहीं भैया, मैं रोटी नहीं खा सकूँगा । मुझे अभी, इसी घड़ी जाना है !”

“लेकिन.....?”

“लेकिन-वेकिन कुछ नहीं । मैं जा रहा हूँ । जल्द ही काम है । ठकुराणी सा मेरा इन्तजार कर रही हूँगी । मैं तो राणी सा के पास आया था—कोई सन्देश लेकर । तुम्हारा पत्र देने मुझे यहाँ तक आना पड़ा ।”

विमन चला गया ।

×

×

×

२३

....

शिव अपनी बिछी चादर पर लेट गया । लिफाफे में बन्द पत्र उसके पास पड़ा है । हल्के पीले रंग का लिफाफा जिस पर मोतियों जैसे साफ अक्षरों में लिखा था 'शिव को' । ऊपर लिखा—'दूसरा कोई भी न खोले ।'

शिव ने अन्यमनस्क भाव से एक बार पड़े हुए लिफाफे को दुबारा देखा, देखता रहा । खिड़की की राह कोई कागज का टुकड़ा उड़कर आ गया था । उसकी खड़खड़ाहट ने उसे चौंका दिया था । उसके जड़बट् शरीर में किंचित खंचलता दौड़ गई ।

उसने तुरन्त उस लिफाफे को फाड़ कर पढा—

प्रिय शिव,

पत्र तुम्हे उस समय लिख रही हूँ कि जब रात का सन्नाटा सारे महल पर छाया हुआ है । यह सन्नाटा रात के अन्धकार के कारण और भयानक हो गया है । खिड़की के पास जलता हुआ दीपक हवा से रह-रह कर इस तरह कौपता है जैसे मेरे मन में अस्थिर विचार-सहरे हों ।

एकान्त है ।

एक दासी दरवाजे के पास खड़ी-खड़ी ऊँघ रही है । ऊँघते-ऊँघते जब वह चौंकती है तब उसकी आँखों में भय नाच उठता है और वह दाग भर के लिए ऐसा महसूस करती है कि वह अत्यन्त सजग है लेकिन दूसरे ही क्षण वह पुनः ऊँघने लगती है ।

अब रात का सन्नाटा भंग हो गया ।

मेरे पति के कमरे से गीत का स्वर आने लगा है और गीत के साथ नृत्य की छुन-छुन ! कोई तवायफ गा रही होगी ।

पत्र में उसका मधुर और दर्दिली स्वर बाधा पहुँचा रहा है। बार-बार उसका प्रभावशाली स्वर मेरे मस्तिष्क के तारतम्य को मंग कर रहा है। वह गा रही थी कोई गजन। कदाचित् वह स्वयं प्रेम की गताई हुई होगी, वनाँ ऐसी कसक बाजारू गायिकाओं में कैसे आ सकती है, जब कि गाना उसका पेशा है।

दो हिजड़े बाहर लड़े हैं। पता नहीं, ये किंग प्रसंग को लेकर ऊटपटांग बातचीत कर रहे हैं, लेकिन उनकी बातचीत में अश्लीलता और विकृत प्यार की चर्चा है। वे दोनों किसी लड़के की खूबसूरती का वर्णन कर रहे हैं और दोनों चाहते हैं कि वह उन दोनों में से किसी एक को चुन ले।

ऐसे समय में मेरा यह पत्र, जिसकी एकरूपता बाहरी कारणों से मंग होती जान पड़ेगी, लिखा जा रहा है। तुम जानते हो कि मैं सम्पूर्ण नारीत्व और सतीत्व से तुम्हें प्यार करती हूँ। अपने पति से मुझे घृणा है, उसकी दयनीय दशा के कारण मेरे मन में उसके प्रति जो कटुता थी, उसकी विकृत और राक्षसी मनोवृत्ति के कारण वह समाप्त हो चुकी है। वह दिन भर शराब पीता है। पीरूप-हीन होकर भी छोकरीयों के साथ भौंटा प्रेमाभिनय करता है। उसके इर्द-गिर्द रहने वाले जीहजूरिए और चापलूस उसके नाम पर बेचारी नादान लड़कियों को भ्रष्ट करते हैं। अनूपसिंह उसमें आनन्द लेता है, सन्तोष पाता है। कितना विकृत है यह पुरुष!

ठकुराणी सा नहीं चाहती कि उसका बेटा भोग-विलास से अलग हो। उसकी भी यही इच्छा है कि वह छोकरीयों, शराब और भोग के अतिरिक्त कुछ सोचे ही नहीं। क्योंकि वे चाहती हैं कि सामान गाँवों का शासन उनके हाथ में रहे, केवल उनके हाथ में। ठकुराणी सा में शासन करने की बड़ी लालसा है। उनकी चाल, ढाल, व्यवहार, वर्तव किसी सिंहासन पर बैठी महाराणी से कम नहीं है। किसी को दण्ड देने में या ठाँटने में उन्हें गौरव लगता है। उन्हें एक अनिवर्चनीय सन्तोष मिलता है।

वह रात-दिन एक ही काम में लगी रहती है, वह काम है चन्दा को पराजय देना। उसके लिए वे महाराणी सा से साँठ-गाँठ कर रही हैं। मुझे ऐसा लगता है कि कोई भयंकर दुर्घटना होने वाली है।

कल ठकुराणी सा मेरे पास आई थीं।

मैं दोपहर का खाना खाकर पलंग लेटी थी। उनीदी आँखों से झाड़-फानूसों को देख रही थी। हिनते हुए झाड़-फानूस की छायाएँ प्रेतात्माओं सी लग रही थी। तभी दासी ने आकर कहा, "कुंवराणी सा, कुंवराणी सा !"

मैंने करवट बदल कर कहा, "क्या बात है ?"

दासी ने कहा, "ठकुराणी सा आ रही हैं।"

"यहाँ ?"

"हाँ।"

नहीं री !"

"नहीं सा वे आ रही हैं। मैंने अपनी आँखों से देखा है।"

मैं तुरन्त अदब से बैठ गई। अपने वस्त्रों को ठीक किया। जल्दी से सिर पर कंधी की ओर थोड़ा-सा घूँघट खींच कर खड़ी हो गई। हालाँकि आज कल हम दोनों परस्पर एक दूसरे की बड़ी दुश्मन हैं, फिर भी मुझे उनकी अग-वानी के लिए कमरे के दरवाजे तक जाना पड़ा। मैंने मौन रहकर उनकी अग-वानी का सकेत किया और किसी आन्तरिक प्रेरणा से अभिभूत होकर मैं विवश-सी उनके चरणों में झुक गई।"

उन्होंने मुझे आशीर्ष नहीं दी। वे पलंग पर बैठती हुई बोलीं, "बहू ! मैं चाहती हूँ कि तुम अपना हठ छोड़ दो।"

"कौन सा हठ ?" मैंने भोलेपन से पूछा।

"जान कर अनजान बनने में क्या लाभ हो सकता है ? मैं चाहती हूँ कि तुम अनूपसिंह के चरणों में पड़ कर क्षमा माँग लो।"

"किस बात की ?"

"अपनी गलतियों की। कह दो, भविष्य में मैं तुम्हारे इशारे पर चलूँगी। बहू ! अगर मेरे बेटे ने गुस्से में कोई कदम उठा लिया तो अनुचित ही होगा।"

"मैंने कोई कसूर नहीं किया।"

"अगर तुमने मेरा कहना नहीं माना तो मैं उसका दूसरा विवाह कर दूँगी।"

"कर दीजिए। आप हमेशा क्यों मुझे ऐसी घमकी देती हैं ?"

मेरा उत्तर स्पष्ट था। इस उत्तर से उनकी आँखों में अंगारे बरस पड़े। वे अपने मन का गुस्सा दबा कर बोली, "तुम्हारी इन्ही बातों ने तुम्हारे व."

को दीवान बनाने से रुकवा दिया। अनूपसिंह ने तुम्हारी सारी बातें महाराज-कुमार सा के सामने रख दी थीं।”

“मैंने कह दिया न, मुझे जान देना मंजूर है।”

सूरज चली गई।

जाते-जाते उन्होंने दरवाजों को बड़े जोर से खुले होने पर भी खोला और मुझे धमकी दी कि तुम्हें तड़पा-तड़पा कर न मारूँ तो मैं अपने बाप की असली बेटी नहीं।

बाद में मुझे मालूम हुआ कि वे मेरे द्वारा भी वही काम करवाना चाहती हैं जो वे खुद कर रही हैं। मतलब यह है कि मैं अपने पति को व्यस्त रखूँ और वह राजधानी जानकर चन्दा का पतन करा दें लेकिन मुझे यह सब मंजूर नहीं है। मुझे प्राण देने में किसी तरह का भय नहीं है, पर मैं इन सबसे समझौता नहीं कर सकूँगी।

इसके थोड़ी देर बाद सारे महल में चर्चा चल पड़ी कि ठाकुर सा का विवाह होने वाला है। जो चर्चा बीच में ठण्डी पड़ गई थी, वह फिर चल पड़ी।

शिव, मुझे इसकी कोई चिन्ता नहीं है। विवाह एक नहीं वह दो-चार कर ले, पर उसका परिणाम इतना भयानक होगा, जिसका अनुमान हम नहीं लगा सकते।

तुम्हारा शरीर ठीक होगा।

सच शिव, मुझे तुम्हारी बहुत याद आती है। रात-दिन और हर घड़ी। मैं भी यहाँ अन्य स्त्रियों की तरह सब कुछ प्रबन्ध कर सकती हूँ। तुम यह भी जानते हो कि यहाँ गोले निर्जीव और अनुभूतिहीन इन्सान होते हैं और अपने स्वामी और स्वामिनी के एक-एक संकेत पर अपने आपको बलिदान कर देते हैं, लेकिन मैं अपने चरित्र को ऊँचा रखना चाहती हूँ। जिन लोगों में ठकुराणियों के अनैतिक भोग-विलास के किस्से प्रचलित हैं, उन्हें मैं अपने प्रेम के द्वारा एक नये सत्य की जानकारी देना चाहती हूँ। मैं चाहती हूँ, हजारों कष्ट भोग कर भी मैं तुमसे एकनिष्ठ प्रेम करूँ।

पत्र का उत्तर जल्दी दोगे।

तुम्हारी—
केसर

शिव ने पत्र बन्द कर दिया। वह पूर्ववत् गम्भीर बना बैठा रहा। घर सुना और मन में सहस्रों तूफान !

×

×

×

२४

....

चन्दा ने दूसरे ही दिन शिव को दीवानजी के सामने पेश किया। दीवानजी ने उसे गालियाँ देते हुए कहा, “साला तुम्हें जिन्दा रहना है या मरना है ? अगर भविष्य में तुमने इस तरह की बात मुँह से निकाली तो मुझसे बुरा कोई न होगा। मा.....के मिर्चे भरवा दूँगा समझे !”

शिव गर्दन नीची करके खड़ा रहा। उसके मुँह से एक भी शब्द न निकला। वह अपने विचारों के द्वन्द्व को अपने हृदय में बड़ी कठिनता से दबा खड़ा रहा। अचल और स्थिर !

दीवानजी अपनी कुर्सी पर ही उछल-कूद रहे थे। उनका उछलना जोकर जैसा नहीं था बल्कि वे इस बात को बता रहे थे कि उन्हें बड़ा गुस्सा आ रहा है। उन्होंने अपनी मूँछों पर ताव देकर कहा, “ओ बे, तू साला मेरी बात को जवाब देगा या मैं मा.....के दो-चार जूते दूँ ? भैरुसिंह को बुलाकर ला, साले की.....में मिर्चे भर ही दे।”

शिव के चेहरे पर क्रोध भरी परेशानी थी, लेकिन उसके मुँह पर किंचित् भी भय नहीं था। निरन्तर जीवन में अत्याचार सहते-सहते जैसे वह अत्याचार का आदी हो गया है। वह निःशंक भाव से बोला, “मेरा कोई कसूर है अन्नदाता ?”

“कसूर, इससे बड़ा कसूर क्या हो सकता है कि तू हमारे मामलों में हस्तक्षेप करे और हमारी आन और बान को अत्याचार कहे। देख शिवड़ा, मैं तेरी खाल उबेड़ कर रख दूँगा, या तू सीधे-सीधे ढंग से रास्ते पर आजा।”

“मैंने कोई कसूर नहीं किया। मेरा कोई भी ग़लत रास्ता नहीं है। मैं सिर्फ न्याय चाहता हूँ। क्षत्रियों की मान-भर्यादा और तपस्या के महान् प्रतीक

आपसे न्याय मांगता हूँ कि क्या किसी मजदूर की बहु-वेटी को उठा कर जनानी झ्योढ़ी में लाना गुनाह नहीं ? किसी गरीब बाप की वेटी को खरीद कर अपने ऐश की चीज बनाना अन्याय नहीं ? दहेज में निर्जीव चीजों की तरह गोले-गोलियों को देना अत्याचार नहीं ? अन्नदाता ! हर इन्सान में प्राण होते हैं, उन प्राणों में गुस पाने की लालसा होती है, किन्तु आपके यहाँ हजारों इन्सान कीडो से बदतर और पशुओं से बाहि्यात जीवन गुजार रहे हैं ।”

भैरुसिंह आगे बढ़ा । उसने शिव का गला पकड़कर जोर से धक्का दिया । सामने पत्थर की दीवार थी । दीवार पर बकरी को दबोचते हुए शेर का भित्ति-चित्र था । उस भित्ति-चित्र के उभरे हुए शेर से शिव का सिर टकरा गया । खून की पतली लकीर उससे गालों को छूती हुई वह गई और सीने पर आकर बीभत्स रूप में चमक उठी ।

भैरुसिंह के चेहरे पर उन खून के दागों की कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई । उसने फिर पीछे से शिव की गर्दन पकड़ी और वह ढोल की तरह अभ्रियन्वर में बोला, “साला, जवान चलाता है । मा.....की पसली-पसली तोड़कर दूँगा । माँग माफी, माँग !”

भैरुसिंह ने उसे एक बार फिर धक्का दिया । इस बार शिव चैता हुआ था । वह सँभल गया । हालाँकि भैरुसिंह के जोरदार धक्के को वह सहन नहीं कर सका और अगर वह अपने दोनों हाथ आगे नहीं बढ़ाता तो उसका सिर अवश्य फूट जाता, कदाचित् खून की पतली लकीर की चौड़ाई बढ़ जाती और बीभत्स दाग और अधिक भयानक हो जाते ।

शिव ने अपने जवान खोलनी चाही । उसके होंठ फड़कने के लिए आतुर हुए, तभी भैरुसिंह ने उसकी गर्दन को मरोड़ते हुए, “पहले दीवानजी के चरणों में पकड़कर माफी माँग ।” और उसने जबरदस्ती धक्का देकर शिव को दीवानजी के चरणों में गिरा दिया ।

दीवानजी अहम् से बोले, “इस पर कोई इल्जाम लगाकर फाँसी पर लटका दो ।”

तभी चन्दा ने प्रवेश किया । उसके मुख पर स्थिरता थी और आँखों में शिकायत की हल्की छाया ।

दीवानजी को नमस्कार करके चन्दा बोली, “इस मूर्ख को ऐसा कड़ा दण्ड न

दोजिए। यह नासमझ है और हठी भी लेकिन इन्साफ़ के घनी अगर ऐसा करेंगे तो ठीक नहीं रहेगा।”

“आप इस बदजात को नहीं जानती !”

“मैं क्षमा चाहती हूँ, अगर दीवानजी को बुरा न लगे तो मैं कुछ अर्ज करना चाहती हूँ।”

“कहिए !”

“इसे इतना कड़ा दण्ड मत दोजिए। मैं इसे समझा दूंगी। इस पर भी अगर यह नहीं माना तो आप इसे जो चाहे दण्ड दे सकते हैं।”

“समझा कर आप भी देख लें, पर मुझे यह समझा-बूझता नहीं लगता है। देख नहीं रही, इसकी आँखों के पाजीपन को। लगता है कि यह छटा हुआ बदमाश है।”

“बदमाश नहीं होता तो ठकुराणी जी साधूपुर इसे अपने यहाँ से नहीं निकालती।”

“अच्छा, फिर इसे राज्य से निकल जाने की आज्ञा दिला दी जाय।”

“लेकिन....?” चन्दा ने कुछ कहना चाहा।

“लेकिन-वेकिन मैं कुछ नहीं समझता, बस इसे हमारे राज्य से चले जाने की अभी आज्ञा दिला दी जाय। ऐसे साँपों के बेटों की मैं अपने यहाँ पलते नहीं देख सकता। आजादी का दीया जलायेगे ! प्रजा में जागृति पैदा करेंगे !”

चन्दा ने तेज स्वर में कहा, “आप कुछ समझते भी हैं ?”

दीवानजी शान्त हो गये। टुकुर-टुकुर चन्दा की बदली भीलों की देखने लगे।

चन्दा ने शिव को अपने साथ लिया और अपनी हवेली में आई। चन्दा के घर के आगे कई सेठ खड़े थे। चन्दा ने किसी को नमस्कार नहीं किया। वह उन्हें बैठने के लिए कह कर भीतर गई। उसके साथ शिव था।

शिव को इत्मीनान से बिठाते हुए उसने कहा, “देख शिव, तू योग्य आदमी है। मैं जैसा कहती हूँ वैसा कर ले, इसमें ही तेरा भला है।”

शिव तड़प कर बोला, “मैं कुछ भी करना नहीं चाहता। मुझे इस राज्य में नहीं रहना है। मैं यहाँ से चला जाना चाहता हूँ।”

चन्दा ने उसकी तरह घेरे नहीं खोया। वह अत्यन्त संयत स्वर में बोली, “इस तरह की उतावली से क्या होगा ? इस तरह तुम अपना और उन हजारों

अबलाओं का कुछ भी भला नहीं कर सकोगे ? मेरी बात मानो और राजाजी व दीवानजी से माफ़ी माँगकर कोई अच्छी नौकरी कर लो ।.....अरे तुम तो पढ़े-लिखे हो, चाहो तो मैं तुम्हें कोई अफसर बनवा सकती हूँ ।”

शिव का आक्रोश ज्वालामुखी-सा फूट पड़ा । वह सेठानी के चेहरे पर दृष्टि जमाकर बोला, “आप बहुत बड़ी हैं सेठानीजी, आप ग्याय और हुक्म को भी बदल सकती है । चाहें तो मुझे बहुत बड़ा आदमी भी बना सकती हैं, किन्तु मैं इतना बड़ा आदमी नहीं बनना चाहता हूँ ।” “मैं आज ही इस राज्य को छोड़कर चला जाऊँगा । मुझे यहाँ की हर वस्तु में खून की बू आती है, आहों का असर जान पड़ता है । मैं इस अग्याय, इस अत्याचार को मिटाऊँगा ।”

चन्दा ने नौकर को आवाज दी । नौकर अदब से आकर खड़ा हो गया । चन्दा ने उसे शवंत लाने को कहा ।

शिव ने असमर्थता प्रकट करते हुए कहा, “मैं शवंत नहीं पीऊँगा, आप कहें तो मैं यहाँ से चला जाऊँ ?”

“वयों, मेरे यहाँ का शवंत पीना भी तुम्हें गवारा नहीं ?”

“ऐसी बात नहीं है । पर सेठानीजी, आप एक अबला होकर जब हजारों अबलाओं का दर्द नहीं समझ सकती तो फिर दूसरों से कुछ उम्मीद रखने का प्रश्न ही नहीं उठता । आप कभी क्षण भर के लिए भी गोली बनती तो मासूम होता कि पीड़ा क्या होती है ! खैर, मैं भी आपको ही दर्द सुनाने लगा ।” “अच्छा मैं खूँ !”

“जाओ, लेकिन तुम यह काम अच्छा नहीं कर रहे हो ।”

“मैं अपना भला-बुरा खूब ममझता हूँ ।” कहकर शिव चला आया । वह सीधा आत्मारामजी के पास गया । आत्मारामजी लोकमान्य तिलक का ‘कर्मयोग’ पढ़ रहे थे । शिव को उदास और उद्विग्न देखकर उन्होंने ग्रन्थ को बन्द किया और उसकी ओर गम्भीरता से देखा । फिर उसके घावों पर गरहम-पट्टी करते हुए बोले, “क्या बात है ? यह गव कैसे हुआ ? इतने उदास क्यों हो ?”

“मैं यह राज्य छोड़कर जा रहा हूँ ।”

“कहाँ ?”

“दूसरे राज्य में ।”

“क्यों ?”

“ऐसा सरकारी हुक्म मिलने वाला है।”

“किस अपराध में?”

“अपराध यह है कि मेरे विचार उनके बुरे कामों की मुखालफत करते हैं। मैं सत्य का उद्घोष करता हूँ। मैं डंके की चोट कहता हूँ कि जनानी ह्योदियों में सिसकती नारियों की मुक्त करो। दास प्रथा को मिटाओ।...”

आत्मारामजी के चेहरे पर कर्णार्जनित गम्भीरता नाच उठी। बोले, “क्या कहूँ, कानून और अधिकार सारे के सारे इनके पास हैं। जब इनके मन में आती है, ये कोई न कोई नया जुल्म करने लगते हैं। लेकिन मैं इस घटना से शान्त नहीं बैठने का। मैं आज ही खबर बनाकर देश के अखबारों में भेजता हूँ ताकि जनता कम से कम इनकी बुराइयों और अत्याचारों से परिचित तो होती रहे।”

शिव ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। वह समीप पड़े किसी अखबार के पृष्ठ का एक कोना जरा-सा तोड़ कर उसे दाँतों के बीच दबाकर उसके टुकड़े-टुकड़े करने लगा।

“कहाँ जाओगे?”

“कुछ तय नहीं है।”

“मैं बताऊँ, अजमेर चले जाओ।”

“कहीं भी चला जाऊँगा,” कागज का अन्तिम टुकड़ा उसके निचले होठों से चिपक गया था।

“बस चला जाऊँगा, लेकिन इस द्वार जीवन में एक नया कदम उठाऊँगा,” उसने दीवार पर दृष्टि जमा कर कहा। दीवार पर किसी अधिकचरे चित्रकार द्वारा पेन्सिल का बनाया हुआ हाथी का एक भौड़ा सा चित्र था।

“वह कदम कौन-सा होगा?” आत्मारामजी की दृष्टि उम पर टिक गई। जिज्ञासा के स्पष्ट भाव उनकी दृष्टि में तैर उठे।

“मैं जीवन में विचारों की अकर्मण्यता छोड़ देना चाहता हूँ। यह बौद्धिक-विलासिता मनुष्य को विद्रोह के प्रति उदासीन बनाती है। मैं इस राज्य से निर्वासित होकर भी इसी राज्य में रहूँगा और गुप्त भेप में राजाजी और अंग्रेजों की हकूमत का विरोध करूँगा। आप ठीक कहते हैं कि जब तक देश में न्याय और अधिकार सर्वसाधारण के लिए नहीं बनेंगे, तब तक हम किसी भी जुल्म को नहीं मिटा सकते।”

आत्मारामजी को इसकी बातों से सन्तोष हुआ और उन्होंने शिव की पीठ को थपथपाते हुए कहा, “तुम कुछ जरूर करोगे, पर मैं तुम्हें अपने से दूर रखना नहीं चाहता हूँ। देखो शिव, मैं अभी सेठानीजी के पास जाता हूँ और उनसे कह कर तुम्हारे देश-निकाले के होने वाले आदेश को रद्द करवाता हूँ।
 “...तुम घर पहुँचो।”

“लेकिन मैं यह नहीं चाहता।”

“तुम यह नहीं चाहते, यही तुम्हारी सबसे बड़ी भूलतया है। अखिर यह हठ धर्मी क्यों? कुछ बातों में समझौता करो। समझौते के साथ कुछ अभिनय करना सीखो। अभिनय के साथ यह जानो कि वक्त के साथ हर अभिनय नया रूप और नयी प्रतिक्रिया के साथ होता है। मैं सेठानी को समझा दूँगा। वह तुम्हारी बड़ी मदद करेंगी। तुम यहाँ रहकर उन हजारों गुनामों में चेतना का मंत्र फूँको।”

शिव को उनकी यह बात पसन्द नहीं आई, पर स्पष्ट रूप से उसे अस्वीकार भी नहीं कर सका।

आत्मारामजी सीधे चन्दा के पास गये।

उसे समझाया। आत्मारामजी कांग्रेस और नगर के अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्ति थे। चन्दा ने जब उन्हें अपने पास आया देखा तो वह दम्भ से अकड़ गई। उसने आत्मारामजी के अश्वसन पर कि शिव भविष्य में महाराजा के विरोध में जरा भी अपमानसूचक रवैया अख्तियार नहीं करेगा, उसके निर्वासन के आज्ञा-पत्र को रद्द कराने का वचन दिया।

शिव का निर्वासन रुक गया।

लेकिन उसे वहाँ रहना अच्छा नहीं लग रहा था।

×

×

×

शिव उस दिन उन्मन-सा बैठा था। उसका मन किसी भी कार्य में न लग रहा था। रह-रह कर उसे आज अपने माँ-बाप की याद आ रही थी। उन दोनों का संघर्षमय जीवन, उनका अभावों में जीना और एक दिन पीडा-मय मृत्यु को पा जाना, उनके मन-मस्तिष्क में दृढ़ को उत्पन्न कर रहा था। ऐसे समय उसे केसर का पत्र मिला। पत्र काफी लम्बा था। गत दिनों की छोटी-मोटी सभी घटनाओं के वर्णन के अतिरिक्त शिव ने उस पत्र की अन्तिम पंक्तियाँ पढ़ी—

तुम्हारे पत्र में काफी संयम और धैर्य था। उसने मुझे सांत्वना दी। तुमने लिखा है कि परिस्थिति ऐसी है कि आज का यह अधिकारीवर्ग सत्य को झूठ और झूठ को सत्य बना सकता है। ऐसी परिस्थिति में जीवन के प्रति उठाने गये किसी भी गलत कदम का परिणाम बहुत बुरा हो सकता है।

तुमने लिखा कि मेरी सास सामन्तवाद की विकृतियों की प्रतीक है। उससे समझौता न करने का परिणाम यही हो सकता है कि वह मुझे समाप्त कर दे और बदले में मैं उसका कुछ भी बुरा न कर सकूँ, क्योंकि वह मुझसे शक्तिवान और चतुर है।

तुमने लिखा है कि मेरी सास मेरे पति को भी समाप्त कर सकती है क्योंकि तुम्हें ऐसा लग रहा है कि वह यहाँ अपना थोड़ा भी विरोध सहन नहीं कर सकती।

ठीक है, लेकिन शिव मैं भी तुम्हें यकीन दिलाती हूँ कि यदि कभी भी ऐसा मौका आया तो मैं अपनी जान पर खेल जाऊँगी। मुझे मृत्यु का कोई भी भय नहीं। मैं उस आशा को भी छोड़ दूँगी जिसके कारण मैंने इतने अनुचित अत्याचार सहे हैं। तुम यह अच्छी तरह जानते हो कि मैं तुम्हें प्यार करती हूँ और जीवन भर करूँगी। पर कभी-कभी मुझे ऐसा लगता है कि हमारे प्यार से भी एक बड़ी चीज है, वह है—कर्तव्य। कर्तव्य का पद ऊँचा होता है। क्या हम लोग अपने प्यार के लिए उन अमानवीय कृत्यों के पोषक तत्वों को भी सहते रहे जो सर्वथा सबके लिए घातक हो सकते हैं?

मेरी सास राजधानी गई हुई है। कुछ दिन पहले उसके पीहर वालों ने आकर उसका शोक तुड़वा दिया है। वह किसी भी तरह चन्दा को समाप्त कराने की तरकीबें सोच रही है। पता नहीं, उसमें कौन सी ऐसी कुंठा है

जिसके कारण वह खामखा किसी दूसरे को अपना दुश्मन समझने लगती है। चन्दा सेठानी का उससे कोई और किसी तरह का सम्बन्ध नहीं है, और ठाकुर सा की मृत्यु के बाद किसी तरह का भी सम्बन्ध शेष नहीं रहा है। फिर भी, वस, उसने यह दृढ़ निश्चय कर लिया है कि वह उसका खात्मा करके रहेगी अन्यथा यह उसकी बहुत बड़ी हार समझी जायगी।

आज उसे गये तीन दिन हो गये हैं। पीछे से विवाह की तैयारियाँ जोर-शोर से हो रही हैं। सुनती हूँ कि इस वार की दुल्हन मुझसे भी अधिक सुन्दर और सलोनी है। अच्छे ठाकुर की बेटी है, पर उस ठाकुर की आर्थिक दशा अच्छी न होने की वजह से वह अपनी बेटी का बोझ अपने सिर से उतारना चाहता है।

मैं समझती हूँ कि तुम प्रसन्न होओगे। पत्र अल्सी देना।

मुम्हारी
केसर

२६

....

ठाकुराणी सा राजमहल पधारी। महारानी ने सूरज का भव्य स्वागत किया। उसको एक सुन्दर कमरे में ठहराया गया जो जनानखाने में ही था। चार दासियाँ उसकी सेवा में रखी गईं। उसके पास ही एक शीश-महल पड़ता था। वह शीश-महल इतना सुन्दर और आकर्षक नहीं था जितना आमेर का शीश-महल है। पर उसमें भी अगर आप एक दिया जला दें तो कई दिने जले हुए नजर आयेंगे। महारानी ने कहा, “रात को हम इसी शीश-महल में बातचीत करेंगी।”

दोपहर को सूरज आई थी।

सारा दिन वह विभिन्न कार्यों में व्यस्त रही।

सबसे पहले वह महारानी द्वारा आयोजित सम्मान में सम्मिलित हुई। रसोड़े में अनुपम भोजन बना था। उस स्वादिष्ट भोजन में “रस” ने कई

ठाकुरों की बोटियों को भी सम्मिलित किया। जब वे मखमली आसनों पर खाना खाने बैठे, तब उनकी परस्पर चुहल-बाजियाँ चल पड़ी।

महारानी ने मुस्कराकर कहा, “क्यों सूरजबाई सा, आपको तबियत ठीक है न ?”

सूरज महारानी के रिश्ते में बहिन लगती थी। उन दोनों का परस्पर बहुत अधिक स्नेह था। जब कभी दोनों पर कोई विपत्ति पड़ती तो वे दोनों इस तरह मिल जाती थीं, जैसे नदी की दो विपरीत धाराएँ मिल जाती हैं, जैसे एक नदी के बीच किसी ने दीवार खड़ी कर दी थी जो अब हट चुकी हो।

महारानी द्वारा यह प्रश्न पूछे जाने पर उसने हड़बड़ा कर अपनी दृष्टि को ओर तेज करके कहा, “क्यों, क्या बात है, ऐसी ?”

“देखो न, हड्डियाँ निकल आई हैं !” उसका स्वर मजाक भरा था, जिसे सुनकर सब खिलखिला पड़ी।

हँसी के रुकते ही ठाकुर भणिसिंह की पत्नी बोली, “अरे आप उस विचित्रसिंहजी की बहू तेज कुँवर को क्यों नहीं देखती ?”

“क्यों, उसमें कौन सी नई बात पैदा हो गई है ?”

“बात पुरानी है, पर है मजेदार ?”

“कैसे ?”

“इनके फिर बच्चा होने वाला है। सोलहवाँ बच्चा !”

“क्या कहती हैं ?” महारानी ने विस्मय से पूछा।

“ठीक कहती हूँ जैसा नाम, वैसा काम। तेज कुँवरजी कुटुम्ब बढ़ाने में बड़ी तेज हैं।”

जोर की हँसी।

हँसी के साथ ही महारा सन्नाटा छा गया। सन्नाटा था क्षण भर का, पर उस अप्रत्याशित क्षणिक सन्नाटे ने सबकी आँखों में विस्मय उत्पन्न कर दिया।

आखिर महारानी ने ही मौन तोड़ा “अरे, एक बात मैं कहना हो भूल गई।”

“वह क्या ?” कई स्वर एक साथ सुनाई पड़े।

“बात यह है कि क्षत्राणी का क्षत्रियपन जाता रहा।”

“कैसे ?”

“अरे भई, किसी को कहिएगा मत,” महारानी ने तर्जनी उँगली से सबको हिदायत दी। उनकी आँखों की पुतलियों की छाया में विस्मय नाचा और भंगिमा में ऐमा लग रहा था जैसे वह कोई रहस्यभरी बात कहने जा रही हैं। सागी उपस्थित स्त्रियों के कान राड़े हो गये। वे ग्रांस रोक कर महारानी की बात की प्रतीक्षा करने लगी।

महारानी ने जल्दी-जल्दी अपनी पलकें नचा कर कहा, “ठाकुर जोतसिंह हैं न, अरे वही महेन्द्रगढ़ के ठाकुर, उनकी बहू के बच्चा होने वाला है!” यह कह महारानी ने अपनी बात को बन्द कर दिया। उसने सोचा कि उनकी अपूरी बात पर सबकी जिज्ञासा जायेगी, पर किसी ने कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई। क्योंकि बिस्मिल्लाह मजेदार नहीं हुई थी।

एक ने तनिक नाफ-भों सिकोड़ कर कहा, “बात बनी नहीं।”

“क्यों?” महारानी ने कहा।

“बच्चा तो हर स्त्री के ही होता है।”

“लेकिन मैंने यह सुना है कि मामला गड़बड़ है।”

“कैसे?”

“कैसे क्या?” महारानी ने कहा, “सुनने में आया है कि ठाकुराणी पीहर से ही पेट में बच्चा लेकर आई थी।”

“नया कहती हैं?.....” सूरज की आँखें विस्मय से विस्फारित हो गईं। दोनों हाथ यंत्रवत् गालों पर चले गये।

“मैं ठीक कहती हूँ, पर आप किसी से कहना मत। देखिए बात बाहर घसी गई तो हमारी बदनामी होगी, आखिर जोतसिंह अपने रिश्तेदार ही होते हैं। क्यों बैना (बहिन), क्या मैं अनुचित कह रही हूँ?”

“नहीं!” मणिसिंह की बहू बोली।

“फिर सुनो, देखो एक बार फिर आप सबसे हाथ जोड़कर कहती हूँ कि आप यह बात बाहर न निकालिएगा। इसमें जोतसिंह की बड़ी बेइज्जती होगी।”

सबने आश्वासन दिया कि वे इस बात को बिलकुल पचा कर रखेंगी।

तब महारानी ने कहना शुरू किया, “हुआ यह कि ठाकुर जोतसिंह के बुढ़ापे को देखकर उसके समुराल वालों ने अपनी बेटी उन्हें दे दी। अब आप सब यह पूछेंगी कि अपनी बेटी बूढ़े को क्यों दे दी..... मैं बताती हूँ। ठाकुर

सा का समुर ठहरा गरीब, शराबी और कबायी । बेटी के लिए सोने की एक मेख भी नहीं रखी । फिर क्या करता ? बूढ़ा हो या जवान, लड़की का कुंवारा-पन तो उतारना ही था !” पर लड़की पहले से ही अपने दूर के रिश्ते के काका के बेटे से प्यार करती थी । लड़की शूत्रमूरत और आकर्षक है । पड़ी-लिखी और रंग-रंग को समझने वाली है । उसने कोई विरोध नहीं किया और ठाकुर से विवाह कर लिया । ठाकुर की बात न पूछो । बूढ़े बैल को सुन्दर गाय ! अफीम खा-न्ता कर पड़ा रहता था और वह लड़की अपने भाई के साथ—“राम, कलियुग आ गया है, बहिन कलियुग !” इसके बाद महारानी चुप हो गई ।

सूरज ने पूछा, “ठाकुर को शायद इस बात का पता नहीं होगा !”

“जरा भी नहीं । वह समझता है कि बच्चा मेरा ही है ।”

“त्रिया-चरित्र जाने ना कोय, पति मार कर सती होय,” सूरज ने हठात् कहा, और न जाने क्यों उसके चेहरे पर वेदना के काले साये मँडरा गये । उसकी दृष्टि नीचे झुक गई । उसके चेहरे के इस परिवर्तन पर सभी का ध्यान खला गया, पर कोई उसके अन्तस् के मर्म को किंचित् भी नहीं जान पाया । सब की सब एक प्रश्न लेकर चुप बैठी रही । पर महारानी ने इस गम्भीर वातावरण को फिर हल्का कर दिया । वह बोली, “एक दिन ठाकुर उसके आगमन पर शंकित हो गया । उसने जासूस की तरह उन दोनों का पीछा किया । लेकिन पढ़े-लिखे चोर भी खूब होते हैं । खरगोश के तीसरे पाँव की तरह उनके काम होते हैं और उनकी खोज-खबर करने वाला पहले से अधिक सतर्क हो जाता है ।

उसका भाई राखी पूणिमा को आया था ।

बहाना था—राखी बँधाने का ।

बहिन जो पिछले कई दिनों से उदास थी और वह ठाकुर की बात-बात पर उपेक्षा और अवज्ञा करती थी, एकाएक वह अपने स्वामी की सेवा करने लगी । बूढ़ा बैल गाय को चट्टार से ही मगन हो गया । वह बस खिल-खिल गया ।

उसने शंकित होकर पूछा, “क्यों, क्या बात है, ठाकुराणी ? आज तुम बहुत खुश हो ?”

“खुश इसलिए हूँ कि कई दिनों से मेरे सिर में दर्द था जो अचानक मिट गया !”

“दर्द अचानक कैसे मिट गया ?”

“मैं क्या जानूँ ? शायद....!”

“शायद क्या ?”

“यह पुरानी हवेली हनुमान बाबा का चमत्कार ही है। परमों रात को मैंने उनके नाम की मनोती बोली थी कि हे बाबा अगर मेरे सिर का यह भयानक दर्द मिट गया तो मैं तुम्हारे पर चाँदी का छत्र चढ़वाऊँगी। सो शायद!”

ठाकुर प्रसन्न हो गया। उसके होठों पर मुस्कान दौड़ गई। अपनी सफेद मूँछों पर हाथ फेर कर वह बोला, “मैं भी यही सोच रहा था !”

“आप क्या सोच रहे थे ?” ठकुराणी ने पास आकर पूछा।

“मैं यह सोच रहा था कि अवश्य मुझे भी तुम्हें यही बात कहनी चाहिए थी कि तुम्हें दवा-दारू से दूर रह कर, ईश्वर की ओर शुकना चाहिए। दवा से जो रोग दूर नहीं होता है, वह ईश्वर की कृपा से तुरन्त ठीक हो जाता है।”

ठकुराणी उनके पास आई। उनके कंधे पर अपना मुँह लटका कर बोली, “आपने मुझे पहले ही क्यों नहीं बताया ? फिर मुझे पहले इतने दिन क्यों कष्ट भोगने पड़ते !”

“मैं बस बताने ही वाला था।”

“खैर, कोई बात नहीं।”

महारानी ने कहना एकदम बन्द किया और बोली—“वह बेचारा बूढ़ा क्या जानता, देव-देव का चमत्कार ? यह चमत्कार उसके प्रेमी के आगमन का था।.....”

बौद्धों की रात ठकुराणी ने बूढ़े से खूब प्यार किया। पूणिमा की उसका भाई आ धमका।....ठाकुर ने कोई वहम नहीं किया। वह अपने काम में लगा रहा और ये सब अपने काम में व्यस्त रहे।

दोपहर को ही वे दोनों रंगरेलियाँ बनाने लगे।

ठाकुर चाहें अपने आपको कितना ही समझाये, पर ये दुष्कर्म मनुष्य के हृदय को सचेत-सजग करते ही हैं। उसको एकाएक वहम हो गया। वह घीरे-घीरे पत्नी के कमरे की ओर गया और उसने देखा—ठकुराणी अपने भाई की गोद में सोई पड़ी है।

ठाकुर को गुस्सा आ गया। उसने तलवार खींच कर कहा, “राई की गर्दन घड़ से अलग कर दूंगा।”

वे भीतर घुसे।

चतुर प्रेमी और कुत्तटा ने मामला समझ लिया और वह खिलाड़ी राई चीख मार कर भाई की पीटने लगी। ठाकुर हैरान और उसका भाई परेशान। तभी उसने आँख बचा कर अपने भाई को संकेत किया। भाई समझ गया कि यह कोई नाटक है।

अब वह छिनाल उछलने-कूदने लगी।

दोनों जनों ने उसे पकड़ा। वह बड़ी कठिनाता से कायू में आई। जब कायू में आ गई, सब सगभग आघ घण्टे के बाद उसे होश आया। ठाकुर की तलवार उसके पास पड़ी थी। मारने का इरादा वहीं गायब हो गया।

बेचारा घबड़ाये स्वर में बोला, “तुम्हें यह एकाएक क्या हो गया?”

“ओह! मैं मर जाऊँगी, ठाकुर सा मैं मर जाऊँगी!”

“पर क्यों?”

“वह, वह, बड़ी डरावनी है उसकी सूरत!” कह कर ठकुराणी ने बड़ी नाटकीयता से अपना मुँह छुपा लिया। उसने एक बार नीचे किये हुए ठाकुर के उदास मुल्ल को उँगलियों को चौड़ी करके देखा और अत्यन्त भय-सूचक संकेत करके बोली, “मैं पागल हो जाऊँगी ठाकुर सा, पागल!”

ठाकुर ने जान लिया कि मेरी बहू को भूतनी लग गई होगी, अतः उसने ओक्षा के पास अपने एक दास को भेजा। कहने का मतलब यह है कि ठाकुर की शान्ति से विचारने का समय ही नहीं मिला। वह बेचारा परेशान सा इधर-उधर भागता रहा। जब ओक्षा झाड़-फूँक कर चला गया तो वह इतना थक चुका था कि उसने सदा की अपेक्षा अधिक ‘अपल’ (अफीम) खाया और नशे में देहोश होकर पड़ गया। “तब उस छिनाल ने अपने प्रेमी के गले में हाथ डाल कर कहा कि इसे कहते हैं—निया-चरित्र! उसने भी उसका लोहा मान लिया। एक सप्ताह तक वह रंगरेलियाँ मना कर चला गया, बेचारा ठाकुर उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सका।” महारानी थोड़ी देर चुप रही और फिर वह रुक-रुक कर बोली, “मुझे उसकी डावड़ी बता रही थी कि मेरी ठकुराणी सा को पाँचवाँ नहीं, छठा महीना है। लेकिन वह सबको

यही कह रही है कि मुझे पाँचवाँ हो है । अन्यथा उसके पाप का भाँडा फूट जाने की सम्भावना है । क्यों, है न नयी बात ?”

महारानी के चुप होते ही एक अन्य ठकुराणो ने और बोलना चाहा, पर सूरज ने उसे नहीं बोलने दिया । बात वही पर समाप्त हो गई ।

धीरे-धीरे इधर-उधर की निराधार चर्चा चलती रही ।

संध्या के आगमन की सूचना मंदिरों के घड़ियालों व शंखों की पावन ध्वनियों ने दी ।

महारानी और सूरज जनाने महल की खिड़की में बैठ गई । खिड़की में पत्थर की जालियाँ बनो हुई थी जिनके कारण वे सबको देख सकती थी, पर उन्हें कोई नहीं देख सकता था । दो-चार दासियाँ इधर-उधर दौड़ रही थी ।

तभी महल के भीतर सेठानी की घोड़ा-भाड़ी ने प्रवेश किया । दो नौकरों ने भाग कर उसका स्वागत किया । सेठानी बड़े अन्दाज से नीचे उतरी । उसने जरी की साड़ी और ग्लाउज पहन रखा था । ललाट पर लाल बिन्दी लगा रखी थी तथा उसके कानों में चमकते झुमके उसकी रूप श्री को बढ़ा रहे थे ।

सेठानी ने लापरवाही से अपना पल्ला झटककर और सामने लड़े दीवान पर सरसरी नजर फेंक कर वह ऊपर की ओर चली । सन्ध्या के समय प्रायः राजाजी रूप महल में बैठते थे । यह उनके किसी पुरखे का बनाया अत्यन्त सुन्दर वक्ष था । इसमें अनेक चित्र बने हुए थे । ये चित्र उनके समकालीन श्रेष्ठ चित्रकारों द्वारा निमित्त थे ।

इस महल में शीशे भी बड़े-बड़े थे ।

महारानी ने उसे देखकर कहा, “बैन ! मुझे ऐसा लगता है कि महाराणी में नहीं यह राँड है ।”

सूरज ने दाँत किटकिटा कर कहा, “आप कैसी औरत हैं, अगर मैं आपकी जगह होती तो इसने दिनों में जमीन-आसमान एक कर देती ।”

“मैं क्या कर सकती हूँ ?”

“आप वह कर सकती हैं जो कोई नहीं कर सकता ।”

“मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझी ।”

“वह भी समझ में आ जायगा ।”

महारानी ने सूरज की कठोर मुद्रा को प्रश्न भरी दृष्टि से देखा ।

सूरज एकटक उन सीढ़ियों की ओर देख रही थी ।

“इस रांड ने आकर महाराजा के धर्म-कर्म को अष्ट कर डाला । उन्हें अब रात-दिन शराब ही शराब दिखलाई पड़ती है । वे हर रोज नयी-नयी छोरियों को जनानी ड्योढी में साते हैं ।... वैन ! मैं बहुत दुःखी हूँ, क्योंकि इनके दुष्कर्मों का प्रभाव मेरे बेटे पर भी पड़ रहा है ।”

“तुम यह सब सहन कर सकती हो । मैं नहीं सह सकती । मैं इस हराम-जादी का नाश का करके ही छोड़ूंगी । इसने ही मेरे घर में आग लगाई थी और इसकी लगाई आग ने मेरे सुहाग को भस्मसे छीन लिया था ।”

“तो....?”

“इसको समाप्त हम कैसे करें, यही सोचना है । इसके लिए हमें बड़ी शक्ति की जरूरत है ।”

“मैं चाहती हूँ कि रांड का यहाँ आना-जाना जल्द से जल्द बन्द हो जाय, वरना यह राज्य ही तबाह हो जायगा ।”

सूरज ने उसे आश्वासन दिया, “आप चिन्ता न करें, जो आदमी जितना जल्दी ऊँचा चढ़ता है, वह उतना ही जल्दी नीचे गिरता है । यह प्रकृति का नियम है । इसे कोई नहीं तोड़ सकता ।”

दासी ने हाथ जोड़कर कहा, “महाराजकुमार सा आपको याद कर रहे हैं । उनके सिर में दर्द है ।”

“सिर में दर्द है ?” अपने आप से प्रश्न किया महारानी ने, “तुम्हें किसने कहा ?”

“अभी-अभी वे बाहर से लौटे हैं । उनका चेहरा परेशान है । मुँह लाल-लाल-सा दीख रहा है ।”

“अच्छा !” कह कर महारानी द्वार की ओर लपकी ।

“सूरज तुम भी मेरे साथ चलो ।”

“इसमें कहने की क्या जरूरत है ?”

महल के भीतर ही भीतर रास्ते बने हुए थे । दो बड़े-बड़े धुमावदार रास्तों को पार करके एक भव्य कक्ष था, उसमें कुमार लेटा था । महारानी ने उसे देखते ही पूछा, “क्या है बेटा ?”

“सिर में अचानक जोर का दर्द उठ आया ।”

“फिर डाक्टर को...?”

थोड़ी देर में एक साथ तीन डाक्टरों ने उस कक्ष में प्रवेश करने की आज्ञा चाही।

महारानी और सूरज दोनों पदों की ओट हो गईं।

तीनों डाक्टरों ने बारी-बारी से कुमार की परीक्षा ली और फिर गम्भीर होकर विचार-विमर्श करने लगे।

महारानी ईश्वर से प्रार्थना कर रही थी, “मेरे बेटे का दुख जल्दी हर ले प्रभु !”

×

×

×

२७

....

शीश-महल में महारानी और सूरज की गुप्त मंत्रणा का गम्भीर आयोजन हुआ। शीश-महल प्रकाश से जगमगा रहा था। दीपक छोटे-छोटे सहस्रों खण्डों में दमक रहा था।

दो मखमली पलंगों पर दोनों बैठी थीं। पास में ही पीकदान रखा था, क्योंकि महारानी को भोजनोपरान्त पान खाने की आदत थी। वह हर पाँच-सात मिनटों के बाद दासी को पान के लिए पुकारती थी।

जब उन दोनों की बात शुरू हुई, तब उसने एक साथ दो-तीन पान रख लिये। सूरज ने उससे पूछा, “आप पान बहुत खाती हैं?”

“नहीं तो !”

“अभी-अभी आपने पाँच-छः पान खा लिये।”

“रात के भोजन के उपरान्त मैं पाँच-दम पान खाती हूँ। पेट में कुछ गड़बड़ी है। ऐसा लगता है कि जो कुछ खाया है, वह कै के साथ वापस बाहर आ जायगा। हजार बार इलाज कराया, पर कोई फायदा नजर नहीं आया। अब बस यही उपाय है कि थोड़ी देर तक पान चबाती रहूँ।”

हवा का तीव्र झोंका आया।

शोष-महल में लगे झाड़ू-फानूस हिल उठे । उनकी लम्बी छोटी छायाएँ उन दोनों पर फैल गईं । वे छायाएँ जब उनके चेहरों पर से गुजरती थीं तो उनके भावों का प्रभाव बदला-बदला-सा नज़र आता था ।

थोड़ी देर के बाद ही उनकी बातों का सितसिला पुनः आरम्भ हुआ ।

महारानी निचने हीठ पर तर्जनी रखकर बोली, “इसे कहते हैं भाग्य के खेल, अच्छा-भला कुमार था कि यकायक पेट में दर्द उठा और सबके मन में चिन्ता को खड़ा कर गया ।”

“लेकिन दर्द मिट भी बहुत जल्दी गया ।”

“हाँ, डाक्टरों का कहना है कि कोई विशेष बात नहीं है, किन्तु फिर भी बड़े लोगो को जरा भी असावधानी नहीं बरतनी चाहिए । तुम यह अच्छी तरह जानती हो वैन, कि बड़े आदमियों की मौत भी बड़े विचित्र ढंग से होती है । जरा-सा सिर दुखा, मृत्यु । जरा-सी खाँसी आई कि क्षय । वस भगवान उन्हें रोगों से बचाये !”

सूरज ने तुरन्त कहा, “राणी बाई सा, ये बातें हम किसी भी समय कर सकती हैं ।”

पान की पीक धूक कर महारानी बोलीं, “हाँ-हाँ, क्यों नहीं कर सकती ?” और उसने लँछारा । जोर से खाँसी, क्योंकि उसके गले में पान का टुकड़ा अड़ गया था । बड़ी कठिनता से पान का फँसा हुआ टुकड़ा निकला ।

“हाँ-हाँ से काम नहीं चलेगा, अबसर के बाद आपको कोई नहीं पूछेगा, आपका जरा भी महत्व नहीं रहेगा ।”

“मतलब ?”

“मतलब साफ है । यह चगुर और सुन्दर सेठानी अपने प्रभाव व तिकड़म द्वारा सारे राज्य पर छा रही है । उसके भाई-भतीजे और सगे-सम्बन्धी सबके सब अच्छे-अच्छे पदों पर नियुक्त हो रहे हैं । सेठानी के हाथ में राज्य की व्यवस्था और कानून जा रहा है । मुझे उम्मीद है कि एक दिन राज्य की सेवा भी उसके हाथ में चली जायगी और तब !”

सूरज चुप हो गई । महारानी अधिक क्या, थोड़ी-बहुत भी पढ़ी हुई नहीं थी । सूरज की बातें सुनकर उसका मुँह खुना का खुना रह गया । उसके चेहरे पर भय की रेखाएँ नाच उठीं । बड़ी मुश्किल से वह बोली, “क्या कह रही हो, वैन ?”

“ठीक कह रही हूँ । मुझे अभी-अभी यह सूचना मिली है कि उसने राजाजी को यह कहा है कि आप दूसरा विवाह कर सें ।”

“क्या कहती हो ?”

“कहिएगा भत, अगर आपने हमारे बीच की एक भी बात कह दी तो दोनों की जान की खैर नहीं । राजाजी, इसे भयानक पड़्यन्त समझेंगे और हमें-तुम्हें शेर के पिंजरे में फँकवा देंगे ।”

“मैं किसी को कुछ भी नहीं कहूँगी, तुम विश्वास रखो । मुझे सारी की सारी बातें अच्छी तरह से समझा दो,” महारानी का चेहरा मुरझा गया । चेहरे की लालिमा सफेदी में बदल गई । उसने पलंग के सिरहाने के कलात्मक पांये का सम्बल ले लिया । वह कुछ देर तक कुछ भी नहीं बोली । घुपचाप निर्जीव-सी पड़ी रही ।

सूरज सोच रही थी—मेरी बातों का राजाजी पर बहुत प्रभाव हो रहा है । अपने तीर को निशाने पर लगा जान वह उदास स्वर में धीमे-धीमे पुनः बोली, “आपको घबराना नहीं चाहिए । मैं आपकी छोटी बहिन हूँ, मेरे होते हुए आपसे आपका यह प्रतिष्ठित पद कोई नहीं छीन सकता । मैं अपनी जान पर खेल जाऊँगी, अपना सर्वनाश कर लूँगी, पर आपके सम्मान को जरा भी अँध नहीं आने दूँगी !”

महारानी ने सूरज के दोनों हाथ पकड़ लिये । सूरज को लगा कि महारानी बेदम हुई जा रही है । उसके तमाम शरीर की शक्ति ही निकल गई है । अन्तस् की अत्यक्त भावना उसकी आँखों में तैर उठी । उसकी इस बात से वह जख्मत से ज्यादा घबरा गई थी ।

महारानी ने अत्यन्त धुटे-रबर में कहा, “मुझे सारी बात चोखी तरह समझा दो । मैं सावधान होना चाहती हूँ ।”

सूरज ने कहा, “मेरा एक गोला (दास) और गोली (दासी) आपके महल में हैं । नाम से दोनों का आपको नहीं बताऊँगी, पर रहते हैं वे दोनों आपके आस-पास ही । वे दोनों सूरत के इतने भले हैं कि कोई यह अनुमान ही नहीं लगा सकता कि वे दोनों भोले-भाले प्राणी भी जासूसी जैसा खतरनाक काम कर सकते हैं ! लेकिन मैं आपको बताती हूँ कि वे इतनी ईमानदारी और हुशियारी से काम करते हैं जितना कोई नहीं कर सकता । हमारे यहाँ अँगरेजों

को बहुत ही सफल जासूस मानते हैं, पर इन दोनों ने उन्हें भी मात कर दिया। "मैं उन्हीं दोनों की बताया हुई बातें आपको बता रही हूँ।

"चन्दा राजाजी पर पूर्णतया हावी है और राजाजी भी उस पर बुरी तरह से फिदा हैं। चन्दा के कारण ही राजाजी बुरे रास्ते पर गये और अब उनका नैतिक पतन इतना हो चुका है कि वे नगर की बहू-बेटियों को भी अपनी वासना का शिकार बनाते जा रहे हैं।" आप यह भी जानती हैं कि आजकल जनानी झ्योड़ी में हजारों लड़कियाँ हैं। "ऐसा होना ठीक नहीं। जब यह वैभव-विलास मनुष्य का विषेक हरने लगता है तब यह गृह-दाह को जन्म देता है और फिर आदमी विनाश की ओर बढ़ जाता है।" सेठानी अब राजाजी की बुद्धि निकासने लगी है। जब उसने सोचा कि राजाजी को और कमजोर किया जाय तो उसने तुरन्त राजाजी की दुर्बलता पर चोट की। उसने कहा कि बिहार के एक राजा आपके साथ अपनी लड़की का विवाह करना चाहते हैं। वह लड़की अठारह वर्ष की है और वह अपने साथ कई ताख की सम्पत्ति भी लाएगी। शर्त यह है कि पटरानी वहीं बस कर रहेगी। "राजाजी, अठारह वर्ष की लड़की का नाम सुन कर खिल उठे।" जब मुझे यह समाचार मिला, तब मुझे नहीं रहा गया। हालाँकि विधवा होने के बाद कोई भी राजा या सामन्त की बहू इतनी जल्दी घर से बाहर नहीं निकलती, पर मुझे आपके कारण यहाँ आना पड़ा। मैं सारी मान-मर्यादा और धर्म-कर्म छोड़ कर अपनी बँन को बचाने के लिए आ गई।"

"क्या यह सच है?"

"झूठ बोलने से मुझे क्या मिलेगा?"

"तभी इधर राजाजी मुझ से सीधे मुँह बात नहीं करते हैं।"

"सीधे क्या, चन्द ही दिनों में यह बदजात सेठानी आपको उल्टे मुँह बात करने का भी मौका नहीं देगी," सूरज ने उसे भड़काया।

"भासार ऐसे ही नजर आ रहे हैं।"

"फिर एक काम कीजिए?"

"क्या?"

"किसी को कह कर सेठानी का खात्मा करा दीजिए।"

"क्या कहती हो?" रानी की आँखें विस्फारित हो गईं।

“ठीक कहती हूँ। अगर आप ऐसा नहीं करेंगे तो आपके साथ इस राज्य पर भी सफ़ट आ पड़ेगा। आप नहीं जानती कि इन जनानी ड्योड़ी और गोर्वा में फैले अत्याचार अपना कैसा रंग सायेंगे! सुना है—इधर फिर बरसा नहीं हो रही है। किसान बीज-बीज चिंत्ता रहे हैं। थोड़े दिनों में आप चारों ओर से त्राहिमा-त्राहिमा सुनेंगे। लोग भूख से तड़प उठेंगे और प्यास से बिलबिला कर कीड़े-मकोड़ों की तरह प्राण देंगे। लेकिन एक ओर बात भी हो सकती है। वह बात यह है कि कभी-कभी भूख और प्यास के मारे इंसान विद्रोह भी कर उठते हैं। उनका विद्रोह इतना सफल और भीषण होता है कि उसे कोई नहीं दबा सकता। तब विद्रोही जनता खूँखार भेड़ियों की तरह अपने दुश्मनों पर टूटती है और उनका सबनाश कर देती है। मुझे ऐसा भी मासूम हुमा है कि सेठानी अपने चन्द गुणों व बड़े-बड़े अफ़सरों के साथ मिलकर इस नाजुक परिस्थिति में लाखों रुपया बनाने की सोच रही है।”

“लेकिन...?” महारानी कहती-कहती चुप हो गई। उसका सिर चकराने लगा। वह दोनों हाथों से सिर पकड़ कर बैठ गई। कुछ देर तक उसने अपनी दोनों आँखें बन्द रखी और वाद में वह बोली, “बदन टूट रहा है। हिम्मत खत्म हुई जा रही है।” उसने अपना मुँह मुख्य द्वार की ओर करके कहा, “बदना, ओ बदना!”

बदना दासी आकर अदब से खड़ी हो गई।

“जा, दो गिलासों में शराब डाल ला। सुन, वही अंग्रेजी शराब लाना, वेशी मुझे अच्छी नहीं लगती है।”

बदना खली गई।

महारानी ने ने पुनः कहा, “शराब पीने से आदमी में बड़ी हिम्मत आती है। कभी-कभी मैं बहुत ज्यादा पी लेती हूँ।”

“मुझे शराब पीने की आदत नहीं है।” सूरज ने स्पष्ट शब्दों में कहा, “हाँ, कभी-कभी वे (उसके पति) बहुत आग्रह करते थे तो मैं थोड़ी पी लिया करती थी। वैसे यह शराब मुझे अच्छी भी नहीं लगती।”

बदना ने शराब के दो छोटे खूँसूरत गिलास रख दिये और कुछ खाने को भी ले आई। भुने हुए पापड़ और पकोड़े थे। महारानी ने गिलास टकरा कर सूरज से कहा, “सेठानी का खात्मा मैं नहीं करा सकती। तुम भी कभी-कभी

कच्ची बात मुँह से निकाल देती हो। सेठानी का जाल सब ओर फैला हुआ है। राजाजी उस पर बुरी तरह से आसक्त हैं। उन्हें उसके सिवा कुछ अच्छा भी नहीं लगता, ऐसी दशा में उसको जरा भी हानि पहुँचने का मतलब है कि अपने प्राणों को खतरे में डालना। कही सेठानी को भी हमारे पद्वयंत्र का पता लग गया तो खैर नहीं। हम लोग जब तक उसे मरवाने की सोचते रहेंगे, तब तक वह हमारा काम तमाम करा देगी क्योंकि उसके साथ प्रायः सभी बड़े-बड़े शक्तिवान लोग हैं।”

सूरज चुपचाप महारानी की बातें सुनती रही।

उसे एकदम शान्त देखकर महारानी फिर बोली, “तुम कुछ बोलती क्यों नहीं? मैं तुमसे राय लेना चाहती हूँ।”

सूरज ने शराब का घूंट लेकर कहा, “मैं क्या बोलूँ? आपने मेरी योजना को ही खत्म कर दिया। मैं सेठानी को मरवाना चाहती थी।”

“यह सम्भव नहीं है।”

“फिर मैं कोई नया उपाय सोचूंगी।”

कह कर वे दोनों कुछ देर तक शान्त रही।

यकामक सूरज बोली, “मैं अपने बेटे का दूसरा विवाह कर रही हूँ।”

“क्यों?”

“यह बहू बड़ी मुँहफट और घुईल है। उसे लंगड़ा-खुला पति पसन्द नहीं। मैंने उसे कैद दे रखी है।”

“आज की लड़कियों को क्या हो गया है? धर्म-कर्म सभी को छोड़ कर वे अधर्म के रास्ते चलने लगी है।”

“चलती हूँ तो चलें, मैं शीघ्र ही अपने बेटे को दुबारा विवाह लाऊँगी।”

महारानी ने सूरज का हाथ शिथोड़ कर कहा, “पर तुमने मेरे रोग की दवा नहीं बताई। आखिर मैं क्या करूँ?”

“क्या करूँ? यह मैं आपको जल्दी ही बताऊँगी।”

शराब खत्म हो चुकी थी। धीरे-धीरे महारानी बेकाबू होती गई। उसने विह्वल होकर सूरज को अपनी बांहों में भर लिया और उसे अपने से लिपटा कर बह सो गई।

सूरज उसकी दशा पर हँस पड़ी। उसकी मोन हँसी में तीव्र व्यंग्य था। रात बस रही थी।

और सूरज सोच रही थी कि जब तक मैं इस सेठानी का सर्वनाश नहीं करूँगी तब तक चैन से नहीं बैठूँगी।

धीरे-धीरे वह भी प्रगाढ़ निद्रा में निमग्न हो गई।

× × ×

प्रभात हुआ।

दूर मन्दिरों की पवित्र घण्टा ध्वनियों ने आकाश को गुँजा दिया। महल के मंदिर में राजपुरोहित ऊँचे-ऊँचे स्वर में आरती के वाद मंत्रोच्चारण कर रहा था। मन्दिर के बाहर कई दास-दासियाँ एवं राज्य के अधिकारी खड़े थे।

रानी और सूरज की नींद अभी तक नहीं टूटी थी।

वे दोनों आराम से सोई थी। अचानक महारानी ने आँखें खोल कर कहा, “अरे आरती का समय हो गया है और हम दोनों अभी तक चादर तान कर पड़ी हैं। उठ, बैठा उठ!”

सूरज भी उठ खड़ी हुई।

दैनिक-कार्य से निवृत्त होकर सूरज माता जपने लगी। माता जप कर वह जैसे ही उठी, जैसे ही चिमन ने आकर कहा, “गाँव में किसानों ने लगान देने से इन्कार कर दिया है। वे कह रहे हैं कि हमारे पास रुपये नहीं हैं, बिना रुपये हम कहाँ से लगान दें?”

सूरज का चेहरा तुरन्त कठोर हो गया। रोप से उसका शरीर काँप उठा उसने अपने हाथ की माला को तोड़ते हुए चिमन से कहा, “अपने ठाकुर सा से कहो कि शान्ति में काम लें। मैं कल ही साधूपुर पहुँच रही हूँ।”

चिमन चला गया।

वह सीधा शिव के पास आया और केसर का पत्र उसे दिया। शिव ने चिमन को एक पर्चा दिया। राज्य में अकाल की स्थिति का उसमें सांगोपांग वर्णन था। अकाल के कारण उत्पन्न हुई दुर्दशा और ठाकुरों व जागीरदारों के जुल्म-दमन का उसमें जोरदार वर्णन था। चिमन उसे देखता रहा। देखता-देखता वह बोला, “क्या यह पर्चा तुमने निकाला है?”

अपनी गर्दन को बड़ी शान्ति से हिलाकर उसने होने से होठों पर भेदभरी मुस्कान लाकर कहा, “नहीं।”

“फिर किसने लिखा?”

“यहाँ के कांग्रेस के नेताओं ने।”

“ऐसा कौन है? भई खूब पचा लिखा है।” चिमन ने एक बार थड़ा भरी नजर से शिव को देखा और भयभीत स्वर में बोला, “मैं समझता हूँ कि राजाजी इसे जिन्दा नहीं छोड़ेंगे। फाँसी देकर ही दम लेंगे।”

शिव उठ खड़ा हुआ। उसने एक दृष्टी हुई शीवार के आले में हाथ डाला। आला बहुत बड़ा था। चिमन देखता रहा और थोड़ी देर में ही शिव ने उन पचों की एक गड़ड़ी चिमन के हाथों में दे दी। चिमन ने यन्त्रवत् उसे अपने हाथ में ले लिया। जब वह ले रहा था तब उसके तमाम शरीर में एक अजीब सी स्थिरता आ गई थी।

“मैं तुम्हें यह सौंप रहा हूँ। इन्हें साधूपुर में बाँटना है। इन पचों का प्रचार घर-घर और दर-दर होना चाहिए। हालाँकि गाँव के लोग अनपढ़ हैं फिर भी मुझे यकीन है कि जितने भी लोग पढ़े-लिखे हैं, वे इन पचों से पूरा-पूरा लाभ उठावेंगे। जैसे ही दस आदमियों में इस पच की बातों का प्रचार हुआ, वैसे ही सारे किसान जान जावेंगे। क्योंकि गाँव के लोगों में हर नयी बात अफवाह की तरह बहुत जल्द फैल जाती है। अनपढ़ों में प्रचार का सबसे बड़ा साधन जवान होती है। जब जनता की जवान चसने लगती है, तब कोई भी शक्ति ऐसी नहीं होती है जो उनकी गति को रोक दे।”

चिमन ने भय से पूछा, “पर मैं इन्हें से जाऊँगा कैसे?”

“ले जाओगे कैसे?” वह कुछ देर सोचकर बोला, “तुम पैदल आये हो या ऊँट पर?”

“ऊँट पर?”

“ऊँट के ‘पलाण’ होता है, उसके नीचे या ऊँट के खाने के चारे में छिपा देना। पर चिमन इन पचों का साधूपुर में बाँटना अत्यन्त जरूरी है। ये पच नहीं बटि गये तो गाँव वालों को जागीरदारों के जुल्मों, अत्याचारों और लोगों की सही दुर्दशा का पता भी नहीं लगेगा। अकाल साधूपुर में ही नहीं, पूरे राज्य पर अपने भयानक पंख फैला रहा है।” शिव ने चिमन के दोनों हाथों को

मजदूती से पकड़ लिया। उसके स्वर में सौहार्द की भावना थी। तनिक विगलित स्वर में वह बोला, "मैं अपने प्राण देकर भी इन दीन-हीन गरीब लोगों में जागरण फूँकना चाहता हूँ। इस बार मैं केसर को पत्र नहीं लिख रहा हूँ। पत्र क्या लिखूँ? अपने मन में आजकल उसके असावा हजारों दूसरे लोग बसे हुए हैं। सारा दिमाग उन्हीं की बातों में लग जाता है।"

"कोई बात नहीं। मैं ऐसे ही कुशल-खेम के समाचार कह दूँगा।"

"बस-बस, तुम इतना ही कह देना कि वह तुम्हें शीघ्र एक विस्तृत पत्र लिखेगा। तुम्हारे जीवन के प्रति उनके मन में गहरा प्रेम है। पश्चात्ताप भी है कि तुम किसी से किसी तरह का समझौता करने को तैयार नहीं हो। तुम्हें मेरे कारण हार्दिक कष्ट उठाना पड़ता है। तुम्हें एक तुच्छ दासी के बेटे के लिए अपने जीवन के रंगीन सपनों को तोड़ना पड़ता है और पता नहीं कब तक तुम दुर्योग के हाथों कष्ट पाती रहोगी।"

शिव का गला भर आया।

चिमन बाहर चला गया।

×

×

×

दोपहर का समय।

महारानी आज प्रसन्न थी। उसके चेहरे पर जो गत कई महीनों से मुर्दनी छाई हुई थी, वह कम हो गई थी। सूरज ने उसे बड़ा घेरा बँधाय़ा था। उसके हटते हुए साहस को सहारा दिया था। उसे लगा कि वह शीघ्र ही राजाजी पर काबू पा लेगी और उस कुलटा सेठानी को जिन्दा दीवार में चिनवा देगी।

सूरज का मन कल से खराब था।

किसानों के विद्रोह ने उसके मन में हलचल उत्पन्न कर दी थी हलांकि ऊपर से उसने किसी तरह का आभास नहीं होने दिया। अभी वह महारानी को और दूसरी बातों से भरना चाहती थी।

जब महारानी अघलेटी थी तब सूरज ने विस्मय भरे स्वर में कहा, "मैं आपको एक बात कहना तो भूल ही गई!"

"वह क्या?" प्रश्न नाच उठा महारानी के स्वर में।

"कल सेठानी के लिए आठ लाख के जेवरों की खरीदें गये हैं। उसमें एक

ऐसा हार था जो केवल आपकी ही शोभा बढ़ा सकता है। उसके घमकते हुए होरे छोटे-छोटे दोषों की तरह क्षिप्तमिल कर रहे थे।”

महारानी ने विस्मित होकर सूरज की ओर देखा।

सूरज ने मुस्कराकर कहा, “आप अचरज क्यों कर रही हैं?”

“मैं तुम्हें पूछती हूँ कि...?”

बीच में ही सूरज बोली, “आप यह समझती हैं कि मैं चुपचाप बैठी रहती हूँ? इन जीवन में आने के बाद न जाने मैंने अपने आप को कितना बदला है। मैंने झूठा अभिनय, झूठा आचरण और झूठा व्यवहार-यतावत सब कुछ सीखा है। क्योंकि अगर यहाँ रहकर आदमी केवल आदमी बन कर रहे तो उसे सुख की एक भी साँस नसीब नहीं हो सकती है। यहाँ एक-दूसरे में होड़ लगी हुई है। यहाँ का प्राणी दूसरे के अरमानों का शून करके एक अव्यक्त आनन्द पाता है। यहाँ मन-बहलाव के लिए प्राणों से खेला जाता है। ऐसे वातावरण में कौन जिन्दा रह सकता है? कौन अपने आपको सच्चाई पर बलिदान कर सकता है? मैं कतई अपने आपको बलिदान नहीं कर सकती। क्यों करूँ? कर्तव्य की पुकार पर उत्सर्ग होना कोई मतलब रखता है, पर दुराचरण पर आँसू का एक कतरा भी बहाना ठीक नहीं।” महारानी जी ! मृत्यु के बाद की बाह-बाह अर्थात्हीन होती है।”

“मैं क्या करूँ?” महारानी ने झल्ला कर कहा।

“जो सम्भव हो, वह करो।” सूरज ने भारी स्वर में कहा। वह तन कर खड़ी हो गई, जैसे उपदेश देने वाली संग्यासिनी खड़ी होती है। वह आन्तरिक रोष को आँखों में झलकाती हुई बोली, “आप अगर इसी तरह का उपेक्षित व अपमानित जीवन व्यतीत करना चाहती हैं तो मैं कुछ भी नहीं कहूँगी, वहाँ जो भी सम्भव बन सके, उसे कर गुजरिए।”

“मतलब?”

“कुछ चीजें समझने की होती हैं।”

सूरज चुप हो गई। वह कुछ भी नहीं बोली।

दासी ने कमरे में प्रवेश किया। बोली, “साधुपुर से एक दासी आई है। आपसे मिलना चाहती है।”

सूरज बाहर निकल गई।

मैफा ने तुरन्त कहा, "ठकुराणी सा, केसर बाई सा भी किसानों को भड़काने में मदद दे रही है और ठाकुर सा वस रात-दिन शराब पीकर मदहोश पड़े रहते हैं। उन्हें बाहरी दुनिया से कोई मतलब नहीं है।"

सूरज का चेहरा तमतमा आया। वह निचले होठ को दांतों से दबा कर बोली, "उस रांड की यह मजाल ? मैं उसे जिन्दा गाड़ दूंगी !"

वह सीधी महारानी के पास आई। उनसे क्षमा-याचना करके बोली, "मुझे अभी ही जाना पड़ेगा। मैं अब यहाँ एक पल भर भी नहीं रह सकती।"

"क्यों ?"

"इन किसानों को थोड़ी भी छूट दे दीजिए, वे आसमान सिर पर उठा लेंगे। वे अपना 'आपा' भूल जायेंगे।"

सूरज उसी दिन साधूपुर रवाना हो गई।

×

×

×

२८
....

साधूपुर पहुँचते ही उसने अनूपसिंह को डाँटा।

अनूपसिंह नशे में धुत था और उसके दोनों हास चाकर बन्दरों की तरह कमरे में उछल-कूद मचा रहे थे। एक लड़की अपंग बन पड़ी थी। उसकी आँखों में कण्ठा का सागर लहरा रहा था। वह भीतर ही भीतर सिसक रही थी। उसने ज्योंही ठकुराणी को देखा, त्योंही वह भाग कर एक कोने में दुबक गई। उसने अपनी छाती को अपने हाथों से ढकने का प्रयास किया और दीवार की ओर मुँह करके खड़ी हो गई।

अनूपसिंह माँ को अप्रत्याशित आया देखकर चकित रह गया। और उन दोनों पाकरों का तो खून ही सूख गया। उनकी बहकी-बहकी उछल-कूद हवा हो गई और वे इस तरह सावधान होकर सड़े हो गये जैसे उन्होंने कुछ किया ही न हो।

ठकुराणी ने उन दोनों को बहुत डाँटा। उनकी गैरत पर कीचड़ उछाल

और गुस्से में उसने समीप पड़ी बेंत से उन्हें पीट भी दिया। उन्हें आज्ञा दी कि वे अपना काला मुँह लेकर उसके सामने भविष्य में कनो न आयें।

वे दोनों दुम दबा कर भागे।

अब वह अनूपसिंह के सामने तन कर खड़ी हो गई। अनूपसिंह के सामने शराब की बोतल थी। एक जाम ढुल गया था जिससे मेज पर एक चित्र सा बना गया था।

“तुम्हें पीना ही पीना सूझता है या पीने के सिवाय तुम्हें कुछ और भी कम है?”

“काम तो बहुत है माँ सा!”

“माँ सा का अच्छा!”

“वह तो हूँ ही।”

“मैं पूछती हूँ कि गाँव में क्या हो रहा है, इसका भी ध्यान है? चुप क्यों हो?”

“सब ध्यान है। गाँवों में अकाल पड़ गया है। लोग भूखों मर रहे हैं। किसान लोग लगान माफ कराने के लिए कह रहे हैं।”

“और इनके अलावा तुम्हारी बहू भी किसानों को भड़का रही है। सुना है—उसने किसानों में पच्चे बँटवाये हैं।” वह अपने स्वर की ओर गम्भीर करती हुई बोली, “क्या तुम मुझे बता सकते हो कि यह पच्चे किसने बाँटे हैं?”

“मुझे मालूम है।”

“अच्छा, बताओ, किसने बाँटे हैं?”

“अभी बताता हूँ।” कह कर वह क्षण भर चुप रहा। तब उसने अपने दोनों सेवक मित्रों को पुकारा। भोपालसिंह और शार्दूलसिंह आये। उनका नशा अब काफी उतर चुका था। दोनों गर्दन झुका कर खड़े हो गये।

अनूपसिंह ने झूमते हुए कहा, “बताओ, वे पच्चे किसने बँटवाये थे? और तुम दोनों मेरा मुँह क्या ताक रहे हो?”

भोपालसिंह ने शार्दूलसिंह की ओर देखा और शार्दूलसिंह ने भोपालसिंह की ओर। दोनों एक-दूसरे को अर्थ भरी दृष्टि से देखने लगे, मानो वे दोनों एक-दूसरे से पूछ रहे हैं कि यह बात किसने कही थी?

अनूपसिंह ने गरजकर अपने वाक्यों को दोहराया, “खड़े-खड़े मुंह क्या देख रहे हो ? बोलो, किसने पर्चे बँटवाये थे ?”

भोपालसिंह ने गर्दन नीची करके कहा, “खम्मा अन्नदाता, हम नहीं जानते । हमने तो अभी तक उन पर्चों को देखा भी नहीं है ।”

शार्दूलसिंह ने डरते-डरते कहा, “हमने उन पर्चों के बारे में बातचीत भी नहीं की । अन्नदाता को भ्रम हो गया है ।”

अनूपसिंह उत्तेजित हो गया । उसने उठने का प्रयास किया, पर गिर पड़ा । वह सम्भलता हुआ बोला, “तुम दोनों झूठ बोलते हो । मैं तुम दोनों की खाल उधेड़वा दूँगा ।” “अभी-अभी तुम दोनों ने कहा था कि हम दोनों ने वे पर्चे देखे हैं और यह भी अच्छी तरह जानते हैं कि वे पर्चे किसने बाँटे हैं और किसने बँटवाये हैं ?” “और अब कहते हो कि मासूम नहीं ।”

“हमने ऐसा नहीं कहा । माई-बाप, आपको सुनने में भूल हो गई ।” भोपालसिंह ने कहा ।

“मुझे ?” वह कर्कश स्वर में चीख उठा, “ओ नालायक कुत्तो, मुझे बहाना कह रहे हो । माँ सा, माँ सा, इन दोनों को यहाँ से दूर कर दो, मैं इन दोनों को जान से मार दूँगा । अरे चिमना, जा मेरी दुनाली बन्दूक ले आ !” और अनूपसिंह जोर की हिचकी खाकर सुढ़क गया । उसका सिर गद्देदार सोफे पर था ।

उसने धीरे से आँखें खोली, वह कुछ और बोलना चाहता था, किन्तु नौ ने उसके गले को पकड़ लिया और वह केवल बड़बड़ा कर रह गया । उसकी आँखें बन्द हो गयी ।

सूरज समझ गई कि इस कथन में रहस्य क्या है ! उसकी तीव्र बुद्धि के समक्ष एक घुंघला चित्र स्पष्ट होता गया । जब ये तीनों शराब पीकर उन्मत्त हो गये थे, तब इन्होंने शराब के नशे में ही ऐसी बातें की होंगी । उसे विवृण्णा हो आई और वह दोनों को यह याज्ञा देकर चली गई कि वे अनूपसिंह को अब न पीने दें । “उसके जाते ही वे दोनों अनूपसिंह की सेवा में लग गये । एक उनका सिर दवाने लगा, और दूसरा उसके पाँव दवाने लगा । सड़की अभी तक उसी कोने में डुबकी पड़ी थी । गहरी वेदना अब भी उसके चेहरे पर थी । जब सूरज चली गई, तब भोपालसिंह उसके पास गया और हाथ पकड़ कर बोला “ठाकुर सा का सिर दवा ।”

बेचारी लड़की अपने शरीर के कपड़ों को व्यवस्थित करने लगी। वह घुपघाप आकर बैठ गई।

वहाँ से ठकुराणी सूरज केसर के पास गई। वह अपने आप में तन्मय थी। वर्षा के बिना सारा गाँव ब्राहि-ब्राहि कर रहा था। लोग लगान न देने का विरोध कर रहे थे। उनका कहना था कि वे भूखे रहकर पैसे कैसे चुकाएँ ?

केसर गम्भीरतापूर्वक किसानों की दुर्दशा पर विचार रही थी। जब वह विचारती-विचारती थक जाती तो वह बर्बा सम्बन्धी कोई कहावत गुन-गुना देती थी। जब सूरज ने उसके कमरे में पूर्ण सूचना के बिना प्रवेश किया, तब वह गुनगुना रही थी—

सावण चौथ र पंचमी
बीज गाज नहि मेह
निहचै दुरमिख देखियै
पावस ऊई खेह ।^१
धुर सावण की पंचमी
बीज गाज नहि मेह ।
मयूँ हल जोते बावला
निहचै ऊई खेह ।^२
सावण पैली पंचमी
जो बीज घण बाव ।
काल पई चहुँ देस में
मिनख मिनख नै खाव ।^३

-
१. सावन बंदी चौथ और पंचमी को न बिजली हो, न गर्जना हो तो निश्चय अकाल पड़ता है और धूल उड़ती है।
 २. सावन बंदी चौथ और पंचमी को न बिजली हो, न गर्जना हो, तो हे बावले किसलिए हल जोतता है ? केवल धूल ही उड़ेगी।
 ३. सावन बंदी पंचमी को अगर सूख हवा चलती है तो चारों ओर अकाल पड़ जायगा और आदमी-आदमी को खायेगा।

सूरज कुछ देर तक केसर की कहावतें सुनती रही । फिर उसने पुकारा,
“बौनणी सा !”

केसर हड़बड़ा कर उठी । अपने आँचल से तिर ढकती हुई सामने खड़ी हो गई । उसका चेहरा एकदम गम्भीर हो गया और कुछ-कुछ कठोरता उसके मुँह पर परिलक्षित होने लगी ।

“बौनणी !” उसने बहू की ओर से किसी प्रकार का प्रोत्साहन न पाकर दुबारा पुकारा, जैसे पहले बहू ने सुना ही न हो ।

“क्या है सा ?”

“तुमने ये पच्चे बयों बेटवाये ?”

“कौन से पच्चे ?”

“किसानों को उकसाने वाले पच्चे ।”

केसर ने अपनी गर्दन जरा ऊँची की । दीवारों पर सुन्दर भीति-चित्र अंकित थे । व्यर्थ ही उनको देखने का यह ढोंग करती रही । उसकी दृष्टि इतनी तेज थी, जैसे आज उन चित्रों में एकाएक कोई अलौकिकता आ गई हो और वह उसे ढूँढ़ने का प्रयास कर रही हो ।

“तुमने मेरी बात का जवाब नहीं दिया ?”

“मैं आपकी बात का क्या जवाब दूँ !”

“क्यों ?”

“क्योंकि मैं इसके बारे में उतनी ही अपरिचित हूँ जितनी आप ।”

“बहुत भोली बन रही हो ?”

“आपसे अधिक नहीं !” व्यंग से कहा उसने ।

सूरज चौंक पड़ी । वह आवेग से भर उठी । कड़ककर बोली, “बड़ी राणी !
होश में आकर बात करो !”

केसर कठोर हो गई, “मैं बहुत होश में हूँ । मैं इन पच्चों के बारे में कुछ भी नहीं जानती । सुना है—कॉग्रेस के नेता आत्माराम के किसी आदमी की यह करतूत है । अगर आपको मेरा वहम ही पड़ गया है तो मेरे पास कोई उपाय नहीं है ।”

“आत्माराम ?” वह घृणा से भूकुटियाँ तान कर बोली और उसने दरवाजे

की ओर पीठ करके कहा, “आत्माराम को गोली से न उड़वा दूँ तो मेरा नाम ठकुराणी सूरज कुँवर नहीं।”

वह हवा के वेग से चली गई। केसर के चेहरे पर तिरस्कार का भाव नाच उठा।

X

X

X

पच्चे धिमेन ने बाँटे थे। हुक्म दिया था केसर ने। पच्चों के पहुँचते ही गाँवों में हलचल मच गई। साधूपुर के किसान सत्याग्रह करने पर उतारू हो गये। वे चुपचाप रात के अँधेरे में इकट्ठे होते थे और भविष्य के कार्यक्रम का निश्चय करते थे। आत्मारामजी का साथी गणेशदत्त वहाँ आ गया था। सूरज कुँवर की बड़ी चिन्ता हुई और उसने एक खत राजाजी को लिखा कि यहाँ के किसान भयंकर विद्रोह पर उतारू हो रहे हैं। आप हमें तुरन्त सहायता भेजिए। राजाजी ने तुरन्त कुछ पल्टन और सिपाही भेज दिये।

किसानों पर आतक छा गया, पर उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। वे बिलकुल शांति और अहिंसा के साथ एकत्रित होकर राजधानी की ओर चले। पुलिस ने उन्हें रोकने के कई हथकण्डे किये, पर वह असफल रही।

इधर जब साधूपुर के किसानों का जत्था रियासत की राजधानी की ओर चला, तब थड़े-थड़े सभी ठिकानों के किसान भी राजधानी की ओर उमड़ पड़े। देखते-देखते राजधानी में हजारों किसान इकट्ठे हो गये। बलवा होने की नौबत आ गई।

इस समय सेठानी ने उचित कदम उठाया। उसने राजाजी से घोषणा कराई कि वह सारे किसानों का सगान माफ कर दें और कुछ निर्माण कार्य आरम्भ करा दें।

राजाजी ने यह घोषणा कर दी, पर ठिकानेदारों ने इस बात को मानने से इन्कार कर दिया। उन्होंने, विशेषतः ठकुराणी सूरज कुँवर ने, अपने यहाँ कई ठिकानेदारों को बुलाया और उसने अनूपसिंह द्वारा यह घोषणा कराई कि अगर किसानों के इस आन्दोलन की शर्तें मान ली गईं तो ये लोग सदा हमें बात-बात पर तग करते रहेंगे। हमारी आन और शान पर ये कीचड़ उछालने लगेंगे। राजाजी तो उस सेठानी के चक्कर में आकर खुद भी बुद्धि खो बैठे हैं, पर हमें शान्त नहीं बैठना चाहिए। आप तो जानते ही हैं कि एक बार इसी तरह यहाँ के जाटों ने विद्रोह किया था, पर मेरे पूज्य पिताजी ठाकुर

केसरसिंह ने उस विद्रोह को कुचल दिया था। आपको उसके बारे में जानकारी नहीं है, मैं बताती हूँ।

बात लगभग सात-आठ वर्ष पहले की है।

आप यह भली-भाँति जानते हो हैं कि हमारे गाँवों में कोई भी नीची जाति का आदमी घोड़े पर चढ़ नहीं जा सकता। खेती करने वाले ये जाट हैं न, एक बार इन्हीं जाटों का एक दूल्हा शहनाई के साथ घोड़े पर बैठ कर गुजरा।

क्या यह नियम-विच्छेद बात नहीं थी—जब वे लोग जानते थे कि यहाँ पर कोई भी घोड़े पर चढ़कर नहीं जा सकता !

पर इन काँग्रेसी नेताओं के कारण जिसका देशो दिमाग खराब होता जा रहा है। बराबर के अधिकारों की माँग बढ़ रही है। आदमी सब बराबर है, उन्हें एक-सा न्याय मिलना चाहिए इत्यादि नारों के चक्कर में ये सब आ गये थे। सो जाटों का दिमाग भी बिगड़ गया और वे हमारी तरह आन-आन के के साथ दूल्हे को घोड़े पर चढ़ा कर गुजरे। राजपूतों ने देखा, उनका खून खौल उठा। वे भागे-भागे आये और उन्होंने पिताजी के सामने सारी घटना बयान की। पिताजी के राजपूतों रक्त में गर्मी आ गई और उन्होंने तुरन्त उन राजपूतों को कहा, “बरात की अर्धी में बदल दो।”

शहनाई का स्वर सुनाई दे रहा था।

गाँव जैसे शान्त वातावरण में शहनाई का स्वर और ही स्पष्ट सुनाई पड़ रहा था। कोई बिदाई गीत था।

एकाएक राजपूत उन बारातियों पर दूटे पड़े। देखते-देखते दूल्हा साहब जमीन पर लोटते नजर आये। बाराती दुम दबा कर भागे। दूल्हा को अस्पताल में दाखिल करा दिया गया।

लेकिन जाटों ने इस घटना को बड़ा ही उग्र रूप दे दिया। वे सभी इकट्ठे हो गये और उन्होंने आन्दोलन करने की घमकी दी। मेरे पिताजी पर उन्होंने मामला चलाने का विचार किया। उन्होंने बड़ी तरकीब से काम लिया और साफ कह दिया कि हमारे आदमियों ने इस दूल्हे को मारा ही नहीं है बल्कि जाटों के दो दलों में झगड़ा होने के फलस्वरूप यह काण्ड हो गया। आप सब यह अच्छी तरह जानते हैं कि यहाँ सब अपना चलता है। अधिकार और कानून सब अपने आधीन हैं।

फिर क्या था !

पिताजी ने कई झूठी गवाहियों की बदौलत कई जाटो को जेल भिजवा दिया ।

इसमें मूल में कौन सी भावना थी, वस इसे ही समझने की जरूरत है । वह मूल भावना यह थी कि राजाजी का राज्य भी हमारी बदौलत ही चलता है । अगर हम उन्हें रुपया-पैसा देना बन्द कर दें तो उनका काम कैसे चलेगा ? हमारी ही शक्ति और भक्ति के बूते पर उनका वैभव-विलास टिका है, वरना एक ही दिन में उनके होश न उड़ जायें । हमारा विद्रोह इन किसानों के विद्रोह से कहीं ज्यादा भयानक और प्रचण्ड होगा । अब आप ही बताइए कि राजाजी ने तो हुक्म दे दिया कि किसानों का लगान माफ कर दिया जाय, लेकिन उन्होंने यह नहीं समझा है कि किसानों का लगान यदि हम लोग माफ कर देंगे तो अपना पेट कैसे भरेंगे ? हमारे पास कौन-सा धन गड़ा पड़ा है । हम लोग तो इन्हीं किसानों से लेकर अपना पेट भरते हैं, अतः मेरा आपसे अनुरोध है कि हमें इस आज्ञा का विरोध करना चाहिए ।

सब ठिकानेदार इस बात से सहमत हो गये । उन्होंने किसानों के प्रति कठोर रवैया अपनाया । ठकुराणी ने अपने सारे कारिन्दों को कह दिया कि अगर कोई किसान लगान न दे तो उस पर ज्यादातियाँ की जायें ।

भोपालसिंह और शादुलसिंह साधूपुर में खुलमखुल्ला जुलम करने लगे । वे किसानों के घर जाते थे, उन्हें मारते-पीटते थे और बाद में उनके बेल खोल लाते थे, बतन-भाँडे छीन लाते थे और उनकी औरतों के जेवर भी उनके अंगों से उतार लाते थे । परिणाम यह निकला कि चारों ओर हाहाकार मच गया । किसानों की दुर्दशा और उन पर किये गये अत्याचारों से पसीज कर केसर ने शिव की एक पत्र लिखा—

प्रिय शिव,

बड़ी कठिनाता से यह पत्र तुम्हारे पास पहुँचेगा । क्योंकि इस समय ठकुराणी के कई जासूस मेरे पीछे लगे हैं । उनमें से एक जासूस को दस रुपये देकर मैंने अपनी ओर फोड़ा है, यह पत्र तब कहीं तुम्हारे पास पहुँचा होगा । अगर उस जासूस ने मेरे साथ बेईमानी की तो परिणाम भयानक ही होगा, पर मुझे विश्वास है कि वह ऐसा नहीं करेगा । ऐसा दुःसाहस करना उसके वश का नहीं । क्योंकि वह अत्यन्त कायर मनोवृत्ति का है । फिर इन गुलामों का कोई भरोसा नहीं ।

मैं तुम्हें यह पत्र दगनिए भिग रही हूँ कि मेरे पति देव अपनी माँ के कहने पर विमानों पर जोर-जुल्म करने पर उतारू हो गये हैं। ठकुराणी उन्हें सारी बातें समझा-बुझा कर संभार करती है और ये उसी तरह उन बातों को अमल में लाते हैं। कुछ दिन पहले यहाँ कई ठिकानेदारों ने एक सभा का आयोजन किया था जिसमें यह निर्णय लिया गया था कि हम राजाजी के हुन को नहीं मानेंगे। और उसी निर्णय की प्रतिनिधा स्वरूप किसानों पर बहुत जुल्म किया जा रहा है।

देखो न, जुल्म की हद हो रही है। आज से बीस दिन पहले एक किसान के दो बैल छीन लिये गये थे। उन्हें यहाँ लाकर बाँध दिया गया। बैलों को भूखा-प्यासा रखा। जब ये मरने लगे तो बाबस उन्हें उनके मातृक के नुँदों से बाँध आये। कल पता चला कि ये मर गये हैं। अब तुम्हीं बताओ कि यह कहाँ का इस्ताफ है? इसी तरह कल एक किसान ने आपेश में उन्हें चोर-चुंदरा कहा तो ठकुराणी ने उसे इतना पिटवाया, इतना पिटवाया कि वह अचमरा हो गया। ये जोर-जुल्म और ज्यादातियाँ मैं नहीं सह सकती। शिव! क्या तुम इन सबके खिलाफ एक जोरदार आन्दोलन नहीं कर सकते? तुम आकर देखो कि आज सारे गाँवों के गरीब किस तरह बरबाद हो रहे हैं। वे अपने बच्चों को साधुओं के हाथों बेच रहे हैं, उनके पशु चार-चार आने में बिक रहे हैं। उफ! भूख ही भूख नजर आ रही है। साधूपुर से तुम्हारा पुराना सम्बन्ध है और मेरी तुमसे प्रार्थना है कि तुम आकर उन किसानों की गिरती हुई हालत को सम्भालो। तुम्हें मेरे प्यार और प्राण की कसम! पता नहीं, मुझे ईश्वर ने इस कूटुम्ब में किस जन्म की सजा के रूप में पैदा किया है, यह वही जानता है। मैं यहाँ बहुत ही दुःखी हूँ, दुःखी!

तुम्हारी
केसर

शिव सीधा आत्मारामजी के पास गया।

आत्मारामजी ने उसे समझाया कि तुम्हें जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए। हमें सेठानी से मिलना चाहिए। सेठानी कुछ भी हो, इस तरह प्रजा पर ज्यादातियाँ नहीं होने देंगी। उनमें सामन्ती व्यवस्था का खँदा नहीं है कि डण्डे

के जोर पर सारा काम कराया जाय, बल्कि यह चाहती हैं—समझोता । हमें एक बार उनसे जरूर मिलना चाहिए ।

तब वे दोनों सेठानी के पास गये और उन्हें सारी बातें समझाई । इस पर सेठानी ने उन्हें झूठा आश्वासन दे दिया । आत्मारामजी व शिव वापस लौट आये और उन्होंने उसके आश्वासन की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा की । पर जब एक सप्ताह बीत गया और किसी तरह के हालात नहीं बदले, तब शिव ने खुल्लमखुल्ला नेतागिरी सम्भाल ली और वह सीधा साधूपुर चला गया ।

उसने घर-घर जाकर किसानों को एकत्रित किया और उसने उन्हें अहिंसात्मक आन्दोलन के लिए तैयार किया । जब विद्रोहीजनों ने अहिंसात्मक सत्याग्रह से कुछ बनते नहीं देखा, तो वे भी उग्र बन गये और उन्होंने कारिन्दों को मारना-पीटना आरम्भ कर दिया ।

शिव एक जत्था लेकर ठकुराणी की हवेली के आगे आया । तब ठकुराणी ने थड़ी सफाई से यह चाल खेली—उसने मुरन्त राजाजी को खबर पहुँचाई कि सारे किसानों ने विद्रोह कर दिया है और वे उसे सूटने आ रहे हैं । तब राजाजी ने अंग्रेज अफसर को भेजा । जब उससे भी स्थिति काबू में नहीं आई तब उन्हें खुद को आना पड़ा । राजाजी की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए ठकुराणी ने आँसू तक बहाये । सफलता जरूर ठकुराणी की रही, पर राजाजी ने सारे गाँवों में अपने आदमी तैनात कर दिये कि किसानों पर सख्तियाँ न हों और वे ठिकानों को नुकसान न पहुँचाएँ ।

शिव की आँखें अपने विगत जीवन के संघर्ष भरे व पीड़ित क्षणों को याद कर-कर के भर आई और वह फफक-फफक कर रो पड़ा । लेकिन वह क्या कर सकता था ? उसकी माँ, उसकी केसर, ओह ! कैसा ममन्तिक जीवन है !

गाड़ी चल रही है ।

शिव को राजधानी लाकर हवालात में बन्द कर दिया गया । कई दिन तक हवालात में रखा गया और बाद में उसे तरह-तरह के आरोप लगाकर “देश-निकाला” दे दिया गया ।

वह वहाँ से सीधा दिल्ली आ गया ।

दिल्ली रवाना होते समय उसने कहा था, “मैं अपनी जन्मभूमि के लिए अन्तिम साँस तक लड़ूँगा ।”

द्वितीय खंड

शिव दिल्ली आ गया। वहाँ एक राजस्थानी के यहाँ ठहर गया। यह राजस्थानी गायक जाति का था। कभी-कभी वह एक मास्टर के यहाँ जाता था। वह गाँधीवादी विचारधारा का पोषक था और प्रत्येक राष्ट्रीय आन्दोलन में अपने आपको उत्सर्ग करने को तत्पर रहता था।

शिव को उसके पास जाने-आने से कई लाभ हुए। वह सीधा राजनीति से सम्बन्धित हो गया। राजनीति की वह बारीकियाँ समझने लगा और वही से देशी राज्यों में चल रही घाँसेवाजियों व भ्रष्टाचार का विरोध करने लगा। उसने क्रान्तिकारियों की गतिविधियों का परिचय भी भली-भाँति पाया।

केसर के कई पत्र आये थे।

गत एक वर्ष में उसने उन पत्रों पर आधारित कई रोमांचक घटनाएँ छप नाम से छपवाईं, जिसके कारण वह कई आदमियों का कोप-भाजन बना और उस पर कई जालिमाना हमले हुए।

रात का अन्तिम पहर था।

न जाने आज क्यों शिव को केसर की याद आ रही थी। केसर के साथ उसे अपनी जन्म-भूमि और विगत जीवन की चन्द घटनाएँ स्मरण हो आईं। वह आँखें मूँद कर बैठा रहा।

समीप केसर के लिखे कई पत्र बिखरे थे। हवा की सरसराहट के कारण वे धीमी-धीमी आवाज कर रहे थे।

तभी उसकी पड़ोसिन युवती इन्दिरा आई। इन्दिरा को देखते ही शिव ने आँखें खोली। वह गम्भीर स्वर में बोला, "तू अभी चला जा, मैं बहुत व्यस्त हूँ।" वह चली गई।

उसने उन पत्रों को पढ़ना शुरू किया।

पहला पत्र—

प्रिय शिव,

तुम्हें 'देश निकाले' की सजा होने के बाद यहाँ के किसानों की दशा कुछ न कुछ सुधरी ही है। इसका कारण यह था कि सेठानी ने राजाजी को समझा दिया कि अगर आपने किसानों की मदद नहीं की और उन पर होने वाले

अत्याचारों को नहीं रोका तो यहाँ एक भीषण आग जल उठेगी और कहीं दिल्ली में इसकी चर्चा हो गई तो बहुत बुरा होगा। इसलिए राजाजी ने थोड़ा कड़ा रख अपनाया। कई नये भवनों का निर्माण का ऐलान किया गया है तथा नई सड़कें भी बनाई जाने लगी हैं।

गांवों में घान बाँटा जा रहा है। इधर आकाश में कुछ बादल भी दिखाई पड़ने लगे हैं। मैं समझती हूँ—बारिश हो जायगी और किसानों का जीवन पुनः सुखी हो जायगा। ठकुराणों ने मुझसे बिलकुल सम्बन्ध समाप्त कर लिया है। इसका एक कारण और भी रहा कि निरन्तर तेजी से घटनाएँ घटने के कारण वह अपने बेटे का विवाह नहीं कर सकीं।

लेकिन आजकल फिर यहाँ शादी की जोरदार तैयारियाँ हो रही हैं। शीघ्र ही मेरे अपंग पति की दूसरी शादी एक रूपवती लड़की से होने वाली है।

तारीख कोई तय नहीं है।

तुम्हारी—

केसर

×

×

×

शिव,

आज मेरे पति का दूसरा विवाह हो गया है।

नयी दुल्हन घर में आ गई है। मैं तुम्हें सब कहती हूँ कि मुझे इसका जरा भी रंज नहीं है। हालाँकि एक प्रसन्नता है कि आज मेरा उससे जरा भी सम्बन्ध नहीं रहा। अब मैं द्वागण (परित्यक्ता) हो गई हूँ। ठकुराणी इस घटना से बड़ी प्रसन्न है क्योंकि वह इस विवाह को मेरी पराजय और अपनी विजय समझती है। वह अहम् से सिर ऊँचा किये अपने स्वजनों में डींग मारा करती है और कहा करती है कि मैं किसी से नहीं दबती, मैं अपने बेटे के लिए एक नहीं दस बहुएँ ला सकती हूँ।

विवाह पर एक महत्वपूर्ण घटना घटी। बात यह हुई कि राजाजी ने मेरे पति के विवाह पर एक हार बनवाया था। यह हार लगभग डेढ़-दो लास का था। वे उस हार को मेरी सौत जीतकुंवर को देना चाहते थे, पर सेठानी ने ऐन मौके पर उपहार की जगह एक तीस-चालीस हजार का हार दिसवा दिया। पता नहीं, इसबात का ठकुराणी को कैसे पता चल गया। वह क्रोध से

जल उठी और राजाजी की सीगात को वापस करने को उद्यत हो गई, पर उसके रिश्तेदारों ने उसे समझा दिया। कहा कि राजाजी की सीगात लौटाना उनका अपमान करना है और आप यह जानती ही हैं कि आपको और सेठानी जी की जरा भी नहीं पटती है। इसलिए अनर्थ हो जाने की पूरी आशंका है। उस समय तो ठकुराणी जहर का घूंट पीकर रह गई, पर बाद में उसने एक नौकरानी को बुलाया। यह नौकरानी सेठानी की अपनी खास नौकरानी थी। सेठानी के साथ ही उठती थी और साथ ही सोती थी। कहने का तात्पर्य यह है कि वह उसकी अपनी दासी थी।

ठकुराणी ने उससे कहा, “दासी गोमती, मैंने तुम्हें क्यों बुलाया है?”

“मैं नहीं जानती!”

“कुछ भी आभास नहीं मिला?”

“नहीं! मैं आपका धार-धार बुलावा पाकर यही समझी कि अवश्य कोई खास काम होगा। फिर आपकी प्रत्येक दासी को मेरी सेठानी जी सन्देह की नजर से देखती हैं। यह तो अच्छा हुआ कि मैंने आपकी दासी को अपनी बहन बता दिया, वरना मेरी नौकरी हाथ से जाती रहती।”

ठकुराणी तनिक मुस्कराई और बोली, “इसका मतलब साफ है कि तुम बहुत होशियार हो। अच्छा मैं अब अपनी बात पर आती हूँ।”

“.....?” गोमती ने उसे प्रदल मरी दृष्टि से देखा।

शिवा, मुझे भी कुछ वहम हो गया था, अतः मैंने भी ठकुराणी के महल में अपनी दासी दीड़ा दी। तुम तो यह अच्छी तरह जानते हो कि इन महलों में प्रत्येक अधिकारी और मासिक के अपने-अपने जासूस रहते हैं। इस तरह मेरे भी दो-तीन जासूस हैं क्योंकि अब मुझे भी हरदम खतरा लगा रहता है कि कब कोई मेरे प्राणों को हर ले?

मेरे जासूस ने बताया—

ठकुराणी ने कहा, “मैं तुम्हें अपनी दासी बनाना चाहती हूँ।”

दासी की आँखें विस्फारित हो गयीं। वह बोली, “क्यों?”

“क्यों? इसलिए कि मुझे तुम्हारी जैसी एक वफ़ादार दासी चाहिए और मैंने सुना है कि तुम से अधिक यहाँ पर कोई भी सच्ची और ईमानदार दासी नहीं है।”

ठकुराणी का अनुमान था कि गोमती अपनी प्रशंसा सुन कर फूली नहीं समाएगी, पर गोमती के चेहरे पर क्वचित् भी प्रसन्नता का आभास नहीं हुआ। वह गम्भीर दृष्टि से ठकुराणी को देखती रही।

ठकुराणी ने पुनः कहा, “मैं तुम्हें मेठानीजी से दुगनी तनखा दूँगी। अच्छा खाना और बढ़िया कपड़े मुपत। वस, तुम्हें मेरा एक काम करना है।”

“कोन-सा है यह काम?”

“हाँ, उसके लिए तुम्हें मुँह माँगा इनाम दूँगी।”

अब गोमती गावधान हो गई। वह बोली, “लेकिन आप उस काम का अता-पता तो दीजिए।”

ठकुराणी कुछ देर मौन रही।

बाहर कोई कुत्ता भौंकने लगा था, ठकुराणी को यह सहन नहीं हुआ। उसने तुरन्त किसी दास को बुलाकर कहा, “इस कुत्ते को गोली से उड़ा दो।”

फिर वह कुछ देर तक कमरे में चहलकदमी करती रही। उसकी चहलकदमी और चेहरे पर उठे हुए संघर्ष के भावों से साफ पता लग रहा था कि वह अभी विचार रही है कि उसके मन में जो दुष्टता छिपी है, उसे वह इस दासी से कहे या नहीं? अन्त में वह चहलकदमी करती-करती धम से बैठ गई। उसके माथे पर पसीने की बूँदें चमक उठीं। वह बोली, “पर पहले मुझे तुम्हें इस बात का वचन देना होगा कि तुम बात आगे पीछे नहीं करोगी। बात को पूरा करना अवकाश न करना तुम्हारे पर ही छोड़ती हूँ। बोली, वचन देती हो?”

गोमती ने सहमते-सहमते कहा, “मैं वचन देती हूँ।”

“फिर सुनो, क्या तुम किसी भी तरह सेठानी को मरवा नहीं सकती?” उसका स्वर काँप गया, “मेरा मतलब है कि उसे जहर आदि चीजों से मार नहीं सकती?”

गोमती की आँखें फट गईं। उसकी मुद्रा ऐसी हो गई थी जैसे उस पर कोई गाज गिर पड़ा हो। वह ठगी-ठगी सी ठकुराणी को देखती रही।

“तुम चुप क्यों हो गई हो? मैं तुम्हें मालामाल कर दूँगी। तुम्हें ऊपर से नीचे तक सोने से मँढ़वा दूँगी। बोली, तुम यह काम करोगी न? अरे, तुम बोलती क्यों नहीं? क्या तुम गूँगी हो गई?....अरे, तुम्हें क्या हो गया है। बोली, जल्दी बोली।”

ठकुराणी का अंग-प्रत्यंग काँट रहा था। उसकी आँखों से चिनगारियाँ जल रही थी।

और गोमती चुपचाप बैठी थी। विमूढ़ प्राणी की तरह निश्चल और निस्पन्द।

कुछ दण असह्य मोन छाया रहा।

ठकुराणी ने अपने आँचल से पसीना पोंछा।

फिर अपने को गावधान करके बोली, “बोली, तुम चुप क्यों हो ? मैं तुम्हें मुँह-मांगा इनाम दूँगी।”

अपने अन्तस् के आवेग को रोककर वह बोली, “ठकुराणी साँ मैं दासी जहर हूँ पर नमकहराम नहीं। जिस सेठानी ने मुझ पर बहिन-सा प्यार-स्नेह रखा, जो मुझे जहरत पड़ने पर पाँच-दस, पचास-सी रुपये ऐसे ही दे देती है, उसके साथ मैं छल नहीं कर सकती।”

“गोमती !” हल्की चीख निकली ठकुराणी के मुख से।

“हाँ ठकुराणी सा, मैं लाचार हूँ। मैं इस नीच काम में आपका थोड़ा भी हाथ नहीं बटा सकती। आप मुझे माफ करें।”

और शिव वह वफादार दासी बली गई।

उसके चले जाने के कुछ देर बाद तक ठकुराणी निश्चेष्ट-सी बैठी रही, और फिर उसने जोर-जोर से चिल्ला कर अपनी कई दासियों तथा दासों को इकट्ठा किया और विक्षिप्त-सी चीख-चीख कर उन्हें गद्गार कहने लगी।

सब नीकर-चाकर स्तम्भित से ठकुराणी का विकराल रूप देखते रहे। थोड़ी देर में ठकुराणी नशे में मस्त थी।

मैं, मैं तो वाम जी रही हूँ। घुटनदार हवाओं के बीच। एक कँदी की तरह ! न जाने क्यों मैं मर नहीं जाती !

तुम्हारी—

केसर

×

×

×

प्रिय शिव,

चरणों में प्रणाम !

आज चिमन तुम्हारा पत्र आत्मारामजी के यहाँ से लाया था। पत्र उसने जैसे ही मुझे सौंपा, वैसे ही एक चाकर ने उसे देना लिया। निदान मुझे उसके मुँह को बन्द करने में दस रुपये खर्च करने पड़े। खैर, मैं तुम्हारे इस पत्र पर दस वयों हजार रुपये भी खर्च कर सकती थी। शिव, क्या अच्छा होता कि मैं इस यन्त्रीगृह से भाग जाती। तुमने अपने पत्र में नाना साहब की लड़की 'मैना' का जो उल्लेख किया है, वह हृदय को हिला देने वाला है। सच, मैं उसे पढ़ती-पढ़ती रो उठी। मेरा दिन इतना याचास और निडर हो गया कि मुझे लगा कि मैं एक क्षण में इन सारे बन्धनों को तोड़ कर आजाद हो जाऊँगी। इस बड़े भारी संसार में इस तरह रों जाऊँगी जिस तरह नाना साहब के महल में मैना लो गई थी।

सच, मेरी आत्मा उस पवित्र देवी की कथा पढ़ पर विह्वल हो गई। कितनी निर्ममता से उसने अंग्रेज कर्नल के समक्ष जाकर कहा था, "तुम्हारा दुश्मनी नाना साहब से है, इस महल से नहीं।" पर उस देवारी की कौन सुनता और उसके वे मामिक शब्द, "मुझे पकड़ लो किन्तु थोड़ी देर ठहरो, मुझे इन खण्डहरों में जी भर कर रो लेने दो।" मैं कल्पना में लो गई और मैं ऐसे रोने लगी जैसे मैं ही वह लड़की हूँ। "और बाद में उन निर्दयी राक्षसों ने उसे जिन्दा जला दिया। वह जल गई अपनी आन बान के लिए, लेकिन उसे किसी तरह का दुःख नहीं था क्योंकि उसने चकमा देकर उन खण्डहरों के लिए जी भर कर आँसू बहा लिये थे। उसकी जो इच्छा थी वह पूरी हो गई। पर मैं वह भी नहीं कर सकती। मैं दुर्बल हूँ, क्या मैं मैना की तरह अपने आपको अपनी इच्छा के लिए उत्सर्ग नहीं कर सकती? शिव, तुम मुझे ऐसे चरित्रों के बारे में जरूर सिखा करो। यहाँ ऐसी पुस्तक नहीं है, यहाँ है केवल गन्दी पुस्तकें। अंग्रेजों के कामोत्तेजक उपन्यास और हिन्दी के कोकशास्त्र। मेरा मन इन सब में कैसे रम सकता है? सोचती हूँ, यहाँ के लोग शिकार और शराब के सिवाय और कुछ भी नहीं जानते।

शिव ! कल से मुझे दूसरे महल में जाना पड़ेगा। मैं भी यही चाहती हूँ। इस सुन्दर और चमकीले नरक से दूर रहना बहुत ही श्रेयस्कर है। उस एकान्त महल में तुम्हारे पत्र मुझे आसानी से मिल सकेंगे।

एक भजेदार बात सुनाती हूँ। पुरानी कहावत है—कर भला तो हो

भला । ठकुराणी ने मेरा भला नहीं किया, उसने मुझे नरक का जीवन जीवन-मापन करने के लिए विवश किया, मेरी हर इच्छा और विद्रोह को कुचला, पर जीत कुँवर मुझसे सर्वथा भिन्न निकली । वह मेरे पति के साथ खूब शराब पीती है । और सिगरेट, तोबा-तोबा दिन भर में तीस-तीस चालीस-चालीस पी जाती है । बहुत ही आबारा है, पर मेरे पति को खूब प्यार करती है । उसके आने पर उस वहशी की विकृत रंगरेलिमाँ बहुत कम हो गई हैं । अब वह इस नई बीनणी के इशें-गिदं हो रहता है ।

और उसके चेहरे पर भयानक छायाएँ सँरा करती हैं । हरदम सिगरेट और शराब पीने से उसकी आँखें घँस गई हैं और उसके मुँह से एक अजीब सी बदबू आती है ।

कल वह मेरे पास आई थी ।

मैं बड़ी विस्मित हुई । मैंने उसे अपने पास बिठाया ।

उसने मुझे सिगरेट देते हुए कहा, “लो, सिगरेट पिओ ।”

मैंने अस्वीकृति सूचक सिर हिला कर कहा, “नहीं, मैं सिगरेट नहीं पीती ।”

“सिगरेट नहीं पीतीं, तभी तुम्हें यहाँ सम्मान नहीं मिला । तभी तुम्हारा यहाँ रुआव नहीं रहा । देखो ‘बड़ी रानी’ (वह मुझे ‘बड़ी रानी’ ही कहती है), अगर तुम्हें इस चहारदीवार में मस्ती से रहना है तो जितने दुर्गण यहाँ के आदिमियों में हैं, उतने ही दुर्गण तुम अपने में भरलो ।”

बात कैसी भी हो, पर यह सही है कि ठकुराणी अपनी इस बहू से डरती है । इसका खौफ खाती है । इसकी बातों को वह मानती है ।

मैंने उसे कहा, “मैं ऐसा नहीं कर सकती ।”

जानते हो उसने मुझे क्या उत्तर दिया ?

वह भड़क कर बोली, “अपने जीवन को यूँ ही धुटा-धुटा कर वरवाद कर दोगी ।”

उसका कहना ठीक है, पर मैं अवगुणों को नहीं अपना सकती । दुर्व्यसन आदमी का नैतिक पतन कर देते हैं ।

अच्छा विदा !

तुम्हारी ही—
केसर

मेरे शिव,

तुमने लिखा कि तुम्हारे मालिक मास्टरजी मारे गये !—वह भी किसी रेल की छूटते हुए, वे एक महान् क्रान्तिकारी थे ! सब अचरज की बातें हैं ! पहले तुमने ऐसा कभी भी जिक्र नहीं किया था । क्यों ? इसलिए कि मैं स्त्री हूँ और स्त्रियाँ अपने मन में रहस्य छिपा कर नहीं रख सकती ? लेकिन मैं ऐसा नहीं समझती हूँ । स्त्री सागर होती है । वह अपने भीतर अनेक तूफान छिपा कर भी शांत रहती है । शिव ! तुम्हें गवें है कि तुम्हारे मास्टरजी अपने देश की आजादी पर बलिदान हो गये । उनका जीवन धन्य है !

लेकिन तुमने लिखा था, तुम्हें गाँधीजी के अहिंसात्मक आन्दोलन में विश्वास है । अच्छा ही है । लेकिन अहिंसा से आदमी अकर्मण्य न हो जाय, बस इतना हयाल रखना ।

हाँ, तुम अपने काम में ध्यस्त हो । कहते हो कि चर्खा भी कातने लगे हो । वह और भी अच्छा है । तुम्हारी एक कहानी 'चाँद' में पढ़ी । "ठकुराणी की चारा" भी पसन्द आई । भूल से मैंने उस कहानी का जिक्र जीत कुँवर से कर दिया । जीत कुँवर उस कहानी के पन्नों को लेकर ठकुराणी के पास गई । उसके न चाहने पर भी उसने वह कहानी उसे सुना दी । बस फिर क्या था ! महल में हल्ला मच गया । लेकिन जीत कुँवर ने उन्हें समझाया कि उसने ग़हर से कुछ सामान भेंगवाया था, उसमें यह कागज आये हैं ।

वस्तुतः वह दुगुंणो का घर है लेकिन वह अपनी 'बड़ी रानी' को बहुत प्यार करती है । कभी-कभी वह दुखी हो जाती है तो मेरे पास आ जाती है ।

माँसू बहाकर कहती है, "तुम मुझे बेहया मत समझो बड़ी रानी ! लेकिन मैं क्या करूँ ? मैं तुम्हारी तरह संयम और शांत जीवन नहीं गुजार सकती । मैं तुम्हारी तरह सोने पर पत्थर रखकर नहीं रह सकती । फिर हरएक की प्रकृति भिन्न-भिन्न होती है । मेरे बाप ने जानबूझ कर मुझे इस अपंग जान-वर को सौंपा, इसलिए मैंने यह तय कर लिया है कि मैं उसकी पगड़ो उछाले बिना नहीं रह सकती । मुझे लोग छिनाल कहे और मेरी चरित्र हीनता को लेकर मेरे कुटुम्ब को गालियाँ निकालें, बाप से जाकर शिकायतें करें और वहाँ कि आपने चोली बेटी खनी है !—बड़ी रानी ! मेरे कारण उस दुष्ट की दुष्टता हो गई । अब मेरे कमरे में कोई भी लड़की आ जाती है तो जानती हो

मैं क्या करती हूँ ? मैं उम्र भोपाल और शाहूँन के बच्चों को हण्टरों से पीटती हूँ । मुझे किसी तरह की लाज-शर्म नहीं ।” लेकिन अब तुम्हारा कोई भी बाल धाँका नहीं कर सकता । तुम अपनी मर्जी के मुताबिक जो भी चाहो कर सकती हो ।”

उसके कारण मुझे बड़ा बल मिला है ।

तुमने यह भी लिखा है कि मैं शीघ्र ही एक पैम्फलेट ठाकुरों के अत्याचारों को प्रस्तुत करता हुआ छपवाऊँगा और उसका घर-घर प्रचार-प्रसार करूँगा ।

तुम्हें एक दुःख भरी खबर भेज रही हूँ, कदाचित् अंग्रेजी अखबारों से तुम्हें पता भी लग गया हो कि कल हाथी महल की सीढ़ी से राजाजी का पाँव फिसल गया है, जिससे उन्हें जगह-जगह चोट आई है ।

उस चोट की खबर मिलते ही ठकुराणी राजधानी को चली गई है । उसके साथ ठाकुर सा भी गये हैं । जीत कुँवर ने जाने की इच्छा प्रकट की थी, पर ठकुराणी उसे साथ ले जाने को राजी नहीं हुई और मुझे तो कहा तक नहीं । मैं दर असल इन सभी मौजूदा सम्बन्धों से कट गयी हूँ ।

तुम्हारी अपनी—

केसर

×

×

×

प्रिय शिव,

रात का सन्ताटा छाता जा रहा है ।

राजाजी के महल में बड़ी भीड़ है । लोग बड़ी तादाद में आ-जा रहे हैं । उनकी दशा दिन-प्रतिदिन चिन्ताजनक होती जा रही है । उनकी बीमारी के कारण राज्य के तमाम ठिकानेदार सपरिवार आ गये हैं ।

मैं भी राजधानी पहुँच गई हूँ । और जीत भी ।

सब ठिकानेदारों को एक महल में ठहराया गया है । सेठानी, महाराजा के प्राईवेट सेक्रेटरी घूडासिंह और अन्य अफसर तथा दीवान सबके सब वहाँ लड़े हैं । राजाजी होश में हैं तथा उनका ठीक ढंग से उपचार हो रहा है । उम्मीद है कि चिन्ताजनक स्थिति आज-कल में समाप्त हो जायगी ।

उपर प्रजा मण्डल का अधिवेशन होने वाला है । बड़ी मुश्किल से प्रजा मण्डल के नेताओं को आज्ञा मिली है । उन पर कई तरह के प्रतिबन्ध लगाये

गये हैं। बाहर से आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को इस तरह देखा-भाला जाता है जैसे वह किसी का खस्ता उलटने आ रहे हैं। "शिव, मुझे मालूम हुआ है कि इसमें तुम भी आओगे। तुम ऐसे कामों में कदापि पीछे नहीं रहोगे।

चिमन को मैं वहाँ भेजूँगी।

सुना है कि सरकारी अधिकारी इस सम्मेलन को बुरी तरह असफल करने पर तुले हैं और यह भी पता चला है कि कुछ गुण्डों को वह हुल्लडबाजी करने भी भेजेंगे। मुझे लिखते हुए बड़ी शर्म आती है कि चन्द पेट्ट खट्टरधारी सम्मेलन की उचित माँगों का विरोध करेंगे। यह उनके लिए कितनी शर्म की बात है!

मैं यहाँ जीत कुँवर के पास सुरक्षित हूँ।

पत्र अधूरा छोड़कर जा रही हूँ। सुना है कि महारानी ने सभी को अभा बुलाया है क्योंकि महाराजा की तबीयत एकाएक खराब हो गई है।"

शिव !

दस दिन के बाद पत्र को पूरा कर रही हूँ। महाराजा का देहांत हो गया है। सच बताऊँ तुमसे, उनको मरवा दिया गया है। यह सब राजसिनी ठकुराणी का ही काम है। घटना इस तरह है—

सुनो शिव ! जैसे ही राजाजी की तबीयत खराब हुई, वैसे ही ठकुराणी महारानी को लेकर अपने गुप्त कमरे में गईं।

घोर एकान्त !

महारानी का हाथ ठकुराणी ने महल में जाते ही जोर से पकड़ लिया।

"तुम क्या कहना चाहती हो बेना ? मैं कुछ भी नहीं सोच सकती। वे मुझे छोड़ कर जा रहे हैं !"

सूरज एकदम कठोर हो गई। वह भड़क कर बोली "बाईसा, बाईसा भावुकता को छोड़िए।"

"कैसी भावुकता ?"

"इस तरह का विलाप आपको शोभा नहीं देता। अच्छे से अच्छे डाक्टर को बुलाइए।"

"क्यों, कोई डाक्टर रह गया है ?"

"हाँ !"

“कीन ?”

“मोतीलाल, लन्दन से डाक्टरों पढ़ कर आया है। इसे राजाजी खुद बम्बई से लाये थे।”

“अच्छा !”

“हाँ बाईसा ! उसे सिर्फ इसीलिए यहाँ नहीं बुलाया गया है कि वह अन्य डाक्टरों की तरह सेठानी को चापलूसी नहीं करता, बल्कि वह एक ईमानदार व्यक्ति भी है।”

“मैं उसे अभी बुलाती हूँ।” महारानी आदेश में बोली और द्वार की ओर लपकी।

“ठहरिए, महाराजकुमार सा को बुनाइए।”

“पप्पसिंह को ? उसे ...?” महारानी चुप हो गई। ठकुराणी सीधे महाराजकुमार सा के पास पहुँची। पप्पसिंह दीवानजी से बातचीत कर रहा था।

ठकुराणी ने दामो को भेजकर उसे अपने पास बुलाया। उसे एकान्त कमरे में ले गई और बोली, “मैं तुम्हारी काकी के अलावा मौसी भी हूँ। तुम्हारी रगों में मुक्त जैसा जोश और अपने काका जैसा प्रतिशोध लेने का दम होना चाहिए।”

पप्पसिंह आरामकुर्मी पर बैठ गया।

“मैं आपका मतलब नहीं समझा।”

“मतलब यह है.....” ठकुराणी उसके पास कुर्मी खींच कर बैठ गई। उसने कमरे का दरवाजा बन्द कर लिया।

“क्या तुम उम्र भर महाराजकुमार ही रहोगे ? मेरे बेटे ! तुम यह नहीं जानते कि सेठानी तुम्हारे विरोध में कितना भयंकर पड़्यंत्र रच रही है ! वह मृत्यु के मुख में सिसकते हुए महाराजा को इसलिए ठीक करना चाहती है ताकि वह तुम लोगों पर शासन करती रहे।”

पप्पसिंह ने कुछ कहना चाहा। उसके चेहरे के भावों से स्पष्ट पता चल रहा था कि वह ठकुराणी के कथन का विरोध करना चाहता है। पर ठकुराणी ने उसे बोलने ही नहीं दिया। वह पुनः बोली, “सेठानी तुम्हारे सारे अफसरों को अपने साथ मिला चुकी है। वह चाहती है कि महाराजा के एकाकी पुत्र

को हत्या कराके गद्दी पर किसी अपने ठाकुर की बिठा दे। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि इसके साथ अंग्रेजों के बड़े-बड़े आदमी भी शामिल हैं क्योंकि सेठानी का यतनि सबके साथ बुरा ही रहा है।”

“लेकिन काकी सा आपको किसने कहा है ?”

ठाकुराणी के होठों पर कुटिल मुस्कान दौड़ गई। वह अपनी दृष्टि को दीवार पर गाड़ कर बोली, “यह पत्र पढो। इसमें सेठानी ने यहाँ के रेलवे के अंग्रेज अफसर को लिखा है कि मैं शीघ्र ही महाराजकुमार को खतम कराके राजाजी को एकदम अपने वश में कर लूंगी।”

पद्मसिंह ने पत्र को देखा, पढ़ा। एक बार, दो बार और तीन बार पढ़कर यह हैरान हो गया।

“बेटा ! मैं तुम्हारी मौसी हूँ। मैं अपनी वहिन की गोद उजड़ते नहीं देख सकती। इसलिए मैंने ऐन मौके पर तुम्हें सावधान कर दिया है। मैं चाहती हूँ कि तुम इतने बड़े राज्य के एकाधिकारी राजा बनो। लोग तुम्हारी तुम्हारे बाप की तरह जयजयकार करें। तुम इतने भोग-विलास और ऐश्वर्य के उपभोक्ता बनो।” लेकिन मेरे चाहने से क्या होगा ? मैं सिर्फ तुम्हें राय दे सकती हूँ।” और ठाकुराणी की आँखें भर आईं।

“लेकिन माँ जी सा ने क्या कहा ?”

“वह भावुक नारी है। वह सेठानी का विरोध करने में अपने आपको सर्वथा असमर्थ पाती है। वह समझती है कि वह इस संघर्ष में अपना नाश कर लेंगी। उनमें साहस नहीं है। उनमें लड़ने की क्षमता नहीं है।”

“फिर मैं क्या करूँ ?”

“सबसे पहले तुम यहाँ जाओ और दीवानजी को अपने साथ मिला लो। दीवानजी सेठानी के कारण बड़े दुःखी हैं और बेचारे अपने व्यक्तित्व को मारे हुए जी रहे हैं। वे एक बट्टर राजपूत हैं। बाँकड़ली मूँछों के धनी तथा शान और आन पर बलिदान होने वाले। लेकिन इधर परिस्थिति खराब हो गई है और वे बेचारे इस छिनास के कारण बड़े परेशान हैं। कठपुतली की तरह जी रहे हैं। बस, उन्हें इतना कह दो कि मुझे सेठानी पर भरोसा नहीं है। यह महाराजा को मरवाना चाहती है। बस !”

“फिर ?”

“फिर उस सेठानी की बच्ची को महल से निकलवा दो। महाराजा अभी कुछ भी नहीं बोल सकते हैं और तुम खुद डाक्टर मोतीलाल के पास जाओ और उसे कह दो कि कोई....?” ठकुराणी ने देखा कि परसिह के चेहरे पर हवाई उड़ रही हैं। वह सम्मल कर अत्यन्त अभिनय-कुशल खतनायिका की तरह अपने चेहरे के भावों को तुरन्त बदल कर बोली, “भैं डायन नहीं हूँ। मैं तुम्हें अपने पिता का हत्यारा नहीं बनाना चाहती, मैं यह भी नहीं चाहती कि इतिहास तुम्हारी नालायकी पर झूके, लेकिन यह तुम्हारे जीवन का प्रश्न है। बिना सेठानी की मौत के तुम कुछ भी नहीं बन सकते और उसकी मौत तभी हो सकती है जब तुम....! संकेत काफी है। सीधे डाक्टर के पास चले जाओ।” ठकुराणी उसके पास आई। उसके कंधों को पकड़ा। थोड़ी देर बाद उसने उसके कंधों से अपने हाथों को हटाकर उसकी पीठ थपथपाई और बोली, “राजनीति में कोई अपना-पराया नहीं होता और कोई अच्छा-बुरा नहीं होता। राजनीति का आवरण इतना गहरा होता है कि उसमें कुछ भी नजर नहीं आता। इसलिए कुशल राजनीतिज्ञ की तरह अवसर का लाभ उठाओ।”

वह इतना कह कर चली आई।

परसिह राजाजी के पास आया।

सेठानी ने उसे भीतर जाने के लिए मना कर दिया। ठकुराणी का समझाया हुआ परसिह एकदम भड़क उठा। कड़क कर वह बोला, “आप कौन हैं मुझे रोकने वाली ?” “दीवानजी, आप मेरे रिश्ते के मामा हैं, मैं आपसे पूछ सकता हूँ कि यह कौन है मुझे रोकने वाली ?”

दीवानजी ने कहा, “यह राजाजी की खास !”

“लेकिन ये हुबम कैसे चला सकती है ? दीवानजी इसे कह दो कि यह महल से इसी वक्त चली जाय। मुझे खतरा है कि यह कुछ गड़बड़ कर दे।”

परसिह का इतना कहना था कि सेठानी आहत सर्पिल-सी नीचे उतर गई। दीवान जी, धूर्सिह एवं कई सामन्त हत्प्रभ से देखते रहे।

दीवानजी ने उसे एकाग्र में ले जाकर कहा, “यह आपने अच्छा नहीं किया युवराज, वह बड़ी दुष्ट औरत है।”

“लेकिन मैं भी कम नहीं हूँ। मैं उस औरत का हुबम नहीं जो अपने सतीत्व को बेचकर शासन करती हो। यह रण्डी है

रण्डी का दयाव मान सकते हैं, पर मैं नहीं मान सकता ! राजाजी के अच्छे होने पर मैं इसकी मुसालफत करूँगा ।”

“क्या कहते ही बेटा ?”

“हाँ मामा सा ! इसके कारण मेरे पिताजी इतने भ्रष्ट हो गये हैं कि वे प्रजा की बहू-बेटियों को भी कुछ नहीं समझते । आप यहाँ रहिए, देखिए किसी तरह की यहाँ गड़बड़ी नहीं होनी चाहिए । मैं डाक्टर को बुला कर लाता हूँ । मुझे यह भी मासूम पड़ा है कि ये जितने भी डाक्टर हैं वे सब सेठानी के इशारों पर नाचने वाले हैं । आप मुझे बता सकते हैं कि महाराजा की तबीयत एकाएक क्यों खराब हो गई ?... चुप क्यों हैं ?... यह मैं आपको बताता हूँ । सेठानी जैसी कुलटा चाहती है कि राजाजी बीमार रहें और वह अपनी मर्जी का जुल्म खाती रहे ।”

“सोच लीजिए आप उसे ‘नीति’ में परास्त नहीं कर पायेंगे । वह आपको—” दीवानजी कहते-कहते रुक गये ।

“आप चिन्ता न कीजिए । मुझे आपके सहारे की जरूरत है । मैं यह चाहता हूँ कि आप इन सबको यहाँ से खाना कर दें ।”

“जो हुक्म !”

पद्मसिंह चला गया । बीच में ही उसे ठहुराणी मिल गई । उसने उसे रोका और हिदायत के तौर पर कहा, “बड़ा सालब देना ।”

“आप चिन्ता न करें, मासी सा !”

वह कुटिल हँसी हँस पड़ी, बोली, “मैं चिन्ता नहीं करती हूँ, पर तुम जवान हो और जवान आदमी अक्सर ऐसा काम कर देता है जो उसकी समझ में बहुत ही अच्छा होता है लेकिन वस्तुतः वह एकदम बुरा होता है । इसलिए ऐसे मौकों पर विवेक को नहीं छोड़ना चाहिए । धर्राहट का जरा-सा चिल्ल भी नहीं दीखना चाहिए । साधारण मुद्रा, साधारण ढंग और साधारण गतिविधि !”

“समझा !”

“अगर तुम मेरे कहने पर चले तो जीवन के समस्त सुख यही पर भोग लोगे । जवानी की उम्र में राजा बनना बहुत कम नसीब होता है !”

पद्मसिंह चला गया ।

ठकुराणी महारानी के पास आई। बोली, "अब आपका कुछ भी कोई नहीं बिगाड़ सकता। अब आपके घर में नयी रानी नहीं आयगी। अब सेठानी का हुक्म यहाँ पर नहीं चलेगा!"

"क्यों क्या बात है?"

"बात यह है कि अब आपका बेटा उस छिनाल राई का रहस्य जान गया है।"

और शिव डाक्टर ने आते ही कहा, "महाराजाधिराज का इलाज गलत हो गया है। उन्हें जो इन्जेक्शन दिये गये हैं, वे ठीक नहीं हैं।"

यह झूठी बात सारे महल में हवा की तरह फैल गई और देखते-देखते डाक्टर ने पचास हजार रुपये लेकर महाराजा को मार दिया।

महल व राज्य में हाहाकार मच गया।

तुम्हें यह सुनकर आश्चर्य होगा कि इस घटना से मुझ पर बड़ा आतंक हुआ और मैंने तय किया कि ऐसी खूँखार औरत से बच कर रहना चाहिए। इससे टकराने का सीधा परिणाम यह है कि अपने आपको समाप्त करना।

राजधानी में शोक छा गया है। लोग घड़ाघड़ सिर मुँडवा रहे हैं। पद्मसिंह महाराजाधिराज नरेन्द्र शिरोमणि की पदवी धारण करके राजा बन गया है।

शेष फिर।

तुम्हारी—
केसर

× × ×

मेरे शिव,

यह पत्र मैं तुम्हें साधूपुर से लिख रही हूँ। रात का सप्ताटा छाया हुआ है। तारों से भरा आकाश है। मैं तुम्हें बता रही हूँ—क्यों के बाद मुझसे मेरे माता-पिता राजधानी में मिले थे। मेरे एक छोटा भाई हुआ था, दुर्योग समझो कि वह जन्म लेने के साथ ही मर गया।

मेरे माँ और मेरे बाप, हार-थके यात्रियों की तरह मेरे पास आये। मैंने उनके चरण-स्पर्श किये। उन्होंने मुझे आशीर्ष देते हुए कहा, "अखंड सौभाग्यवती हो, बेटो!"

मैंने उनकी ओर देखा। वे दोनों मेरी दृष्टि के दुःख को नहीं सह सके। असह्य वेदना थी मेरी दृष्टि में। जीवन के पीड़ित क्षणों का सारा इतिहास बोल गया मेरी आँखों में।

“कैसी हो बेटी?”

मैंने विगलित स्वर में कहा, “मैं किसी की बेटी नहीं हूँ। मेरे माँ-बाप नहीं हैं। मैं अनाथ हूँ।”

माँ सिसक पड़ी। लेकिन मैंने निश्चय कर लिया था कि मैं किसी से समझौता नहीं करूँगी। मुझे कितनी पीड़ा और कष्ट मिलते रहें, पर मैं किसी के कहने पर अपनी आत्मा को नहीं मारूँगी।

शिव ! नारी बहुत दयनीय है। जन्म के त्योहार से लेकर मरण के त्योहार तक बस किसी न किसी वग्धन में बँधी रहती है। उसे किसी न किसी का वास्ता देकर दुर्बल रखा जाता है। और वह थोड़ी-सी भावना भरी बातों के खोखले महत्व में छली जाती है। लेकिन मैंने तय कर लिया है कि मृत्यु के अन्तिम क्षण तक न मैं बाप के कर्तव्य की पुकार पर, न माँ के आँसू पर और न पति के सतीत्व-धर्म की दुहाई पर पिघलूँगी। उचित और अनुचित की चिन्ता किये बिना ही मैं उस ‘एक पल’ को प्राप्त करने का प्रयास करूँगी, जिसे मैं अपने हृदय की समस्त अभिलाषाओं से चाहती हूँ।

“तुम्हें ऐसा नहीं कहना चाहिए।” माँ ने मुझसे कहा। वह अपने ओढ़ने से आँसू पोंछ रही थी। अतः मैं उनके चेहरे के भावों को पढ़ने में सर्वथा असमर्थ रही। मेरे पिता का मुख अपराधी की तरह झुक गया।

माँ ने मुझे अपने सीने से लगा कर बहा, “तुम मुझे माफ नहीं कर सकती बेटी? तुम यह अच्छी तरह जानती हो कि यहाँ आदमी अपने मन के मुताबिक कुछ भी नहीं कर सकता। यहाँ एक दूसरे का आपस में कोई न कोई सम्बन्ध लगा रहता है।”

“उस सम्बन्ध में भालिक लोग अपने सुख को तो सुरक्षित रख लेते हैं पर वे दूसरे के सुख और जीवन की आहुति दे देते हैं।” माँ सा ! आपने कभी यह सोचा था कि आपकी बेटी का क्या हाल होगा?”

माँ ने कोई उत्तर न दिया। आत्मग्लानि के भारे अपना सिर झुका कर बैठ गई।

हम तीनों कुछ देर तक चुपचाप बैठे रहे। अन्त में पिताजी ने कहा, "घर नहीं चलोगी?"

"नहीं!"

"क्यों?"

"मैंने अपने तमाम स्वजनों में नाते-रिश्ते खत्म कर लिये हैं। मेरा इस संसार में कोई नहीं है। मैं अकेली हूँ और जो मेरा है, उसे मैं प्राप्त नहीं कर सकती। (...जैसे तुम हो शिव, तुम्हें प्राप्त करने के लिए न मालूम कितने वर्षों और इन्तजार करना पड़ेगा...)। मैं मेरी ओर देखती रही। धीरे-धीरे उनके जाने का समय हो गया। मैं अकेली खड़ी रही। मैंने अपनी माँ के साथ कठोरता का व्यवहार किया। उनके हृदय पर आघात लगाया, पर क्या करती शिव? क्या तुम नहीं जानते कि तकलीफों के बीच मनुष्य जिस तरह भूल को नहीं भूल सकता, उसी तरह वह यौन-पीड़ा को भी नहीं विसार सकता। अपने आस-पास की घुबलियों को जब मैं आमोद-प्रमोद करते देखती हूँ तब ऐसा लगता है कि मैं भीतर ही भीतर जल मरूँगी। कोई अदृश्य-शक्ति मुझे भस्म करने पर उतारू हो गई है। देखो न, इतने बड़े घर में सिवाय दो-चार दासियों के मेरा अपना कौन है? मेरा अपना है सिर्फ मेरा अपना दुःख और असीम वेदना।"

तुम्हें एक बात लिखना भूल गई है।

महाराजा की हत्या के तुरन्त बाद ही दीवानजी को पर्दासिंह ने बुला कर कहा, "डो० आई० जी० साहब को जाकर कह दीजिए कि वह सेठानी के घर के चारों ओर पहरा लगा दे ताकि एक पैसे की चीज भी इधर-उधर न हो।"

इधर राजाजी की मृत्यु के समाचार से शोकाकुल सेठानी ने जब पुलिस को अपने घर के चारों ओर देखा तो उसके होश उड़ गये। महाराजा को शममान घाट जना आने के बाद पुलिस उसकी हवेली को गई। दीवानजी, डो० आई० जी० व अन्य ठिकानेदार जो चन्द घण्टों के पहले सेठानी जी का पूरा हफ्ते में लेकर चाटते थे, अब वे भी उसकी खिल्ली उड़ाने लगे।

देखते-देखते कई दिनों के बाद सेठानी की हवेली में ताला लगा दिया गया। उसे पक्के मार कर हवेली से बाहर निकाल दिया गया। शाइशाही के

शूर शासन में इतना परिवर्तन मैंने कभी नहीं देखा था। बेचारी सेठानी जो इत्र में स्नान करती थी, जो दिन भर में कई बार कपड़े बदलती थी, जिसकी हाजिरी में कई-कई दासियाँ रहती थी, उसको एक अदना सिपाही गालियाँ निकालने लगा। अपनी भयंकर दुर्दशा देकर सेठानी अपना होश खो बैठी। जब पद्मसिंह के सिपाहियों ने उसके पति को छिपाया हुआ धन बताने के लिए पीटा, तब वह उन्मत्त-सी खीख उठी और देखते-देखते पागल हो गई।

कानून जिसका अपना छूता है, उस झाड़शाही में न्याय कहाँ? सेठानी के सारे जेवर उतार लिये गये। उसके पति के शरीर में हण्टरो के निशान चमक उठे और लाचार उसने आत्मग्लानि के मारे आत्महत्या करली। सेठानी पागल हो गई है। वह सड़कों पर भटक रही है। ठकुराणी को आत्मसन्तोष मिला। उसने मेरे सामने भी इसका जिक्र किया। वह मुझे अपने बुरे इरादों से बाकिफ कराना चाहती है। वह मुझे बताना चाहती है कि मैं कितनी भयानक हूँ।

फिर शासन-व्यवस्था में परिवर्तन हुए। सेठानी के समर्थकों का बहोस पत्ता कट गया। एक अंग्रेज आई० जी० पी० का रुआब बढ़ गया है। मेरे पिताजी को खजांची बनाया गया है, बयो कि इसके पहले उस पद पर सेठानी का भाई था जिसे तुरन्त निकाल दिया गया।

लेकिन जनानी झ्योड़ी में किंचित् परिवर्तन नहीं हुआ। उसमें नयी-नयी छोकरियाँ बढ़ ही रही हैं।

ठकुराणी की बात मत पूछो। आजकल उसकी सब जगह खूब चलती है। उसमें दुर्गुणों का समावेश होने लगा है। सिगरेट और शराब खूब पीने लगी है और नये राजाजी पद्मसिंह उसे खूब पूछते हैं। वह बार-बार राजधानी जाती है और दिन प्रतिदिन उसकी लिप्ता बढ रही है।

मेरी ओर वह देखती ही नहीं।

वस !

तुम्हारी दुःखी—
केसर

शिव,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने लिखा है कि प्रजा-मण्डल का अधिवेशन हो रहा है, मैं जरूर आऊँगा। तुम्हें आना ही चाहिए। पर मैं तुमसे भेट नहीं कर पाऊँगी। अभी मेरी ठगघर आने की कोई सम्भावना नहीं है। वहाँ के बिना आना मुझे ठीक नहीं लगता। फिर अब मुझे ठकुराणी से भय हो गया है। दरअसल वह एक खूंखार जानवर की तरह है जिसे उसकी ही लिप्साएँ और झूठा दम्भ विकृत कर रहा है। पतनोग्रमुख बना रहा है। मैं समझती हूँ कि तुम आने के पहले अच्छी तरह सोच लो क्यों कि जो अंग्रेज आई० जी० पी० है न, वह बड़ा खूंखार है। इन गोरों को हम भारतीयों से कुछ भी प्यार नहीं। मक्खियों की तरह ये हमारे जीवन को समझते हैं। हम लाख इनकी गुलामी करें, इन्हें ऊँचे ओहदे दें, पर ये समझते हैं कि हम सब कालों को यह ज्ञान दे रहे हैं कि शासन कैसे चलता है? तो यह अंग्रेज आई० जी० पी० खुद इस अधिवेशन को असफल करने में लगा हुआ है। उसने चारों ओर से अपने अंग्रेज अधिकारियों को बुला लिया है और वह इस मीके पर राजाजी को विलायत भी भेज रहा है। नये राजाजी की विलायती सड़कियों के प्रति तीव्र जिज्ञासा है। एक अबोध इन्सान की जिज्ञासा, इसलिए वे विलायत जायेंगे। पीछे से अधिवेशन होगा और तुम लोगों का जोरदार दमन किया जायेगा। यह मेरी शका है, जो झूठ भी हो सकती है, पर सत्य की सम्भावना कहीं अधिक ही है। इसलिए आने के पहले अच्छी तरह से सोच-विचार लेना।

तुम्हारी कहानी "राजाजी की मौत" पढ़ी।

बड़ी सनसनीदार कहानी रही। ठकुराणी के हाथों में जैसे ही वह कहानी पढ़ी, बंसे ही वह फुस्कारती हुई मेरे पास आई और कड़क कर बोली, "यह किसकी जुरंत हो सकती है?"

मेरा मुँह सपेद पड़ गया, फिर भी मैं सम्भल कर धीमे स्वर में बोली, मैं कुछ भी नहीं जानती ठकुराणी सा।"

"मैं सब समझती हूँ। यह 'सत्यवादी' नाम का जो लेखक है, वह अवश्य कोई घर का भेदी है। मैं आज सबकी जाँच-पड़ताल करूँगी।"

मैंने तेज स्वर में कहा, "कर लीजिए।"

उस समय वह चली गई। मैंने तुरन्त तुम्हारी सभी चिट्ठियों को आग में

जला दिया। पता नहीं, वह कब अपने दल-बल के साथ आ पहुँचे और कब इस रहस्य का पता चल जाय कि मैं ही तुम्हें सारे भेद दे रही हूँ।

यहाँ से यह पत्र संध्या के समय लिख रही हूँ, क्योंकि आज दोपहर को एक भीषण दुर्घटना घटी थी। इस झाड़वाही में नागरिक अधिकारों का जो हनन देखा गया है, वह कहीं भी नहीं होगा। तुम समझते हो कि यह बीसवीं सदी है, और मैं समझती हूँ कि इन रियासतों में आज भी आदिम-काल की बर्बरता चली आ रही है।

घटना इस तरह है कि दो भियाँ-बीबी बाहर से आये थे। बाहर मतलब परदेश से। वे दोनों जाति के धोबी हैं। वपों से वे कसकसा रहते थे एवं वहाँ धुलाई का काम करते थे। वहाँ उनका व्यापार अच्छा चला, फलस्वरूप उन्होंने कुछ रुपया इकट्ठा कर लिया और उन्होंने सोने के जेवर बना लिये।

लेकिन हमारे ठिकाने में कोई भी नीची जाति का आदमी सोने का जेवर नहीं पहन सकता। कुछ राजपूतों व ब्राह्मणों ने उन दोनों को देखा तो वे आग-ववूला हो उठे। वे सीधे ठकुराणी के पास आये। ठकुराणी सिगरेट पी रही थी और उसने जैसे ही यह सुना, वैसे ही उसने यह हुक्म दे दिया कि उन दोनों के जेवर छीन लिये जायें।

ठकुराणी का हुक्म पाते ही चन्द राजपूत वहाँ गये और उन्होंने तुरन्त उन बेचारों के जेवर छूट लिये। उन राजपूतों ने अपने चेहरे ढाकुओं की तरह ढक रखे थे। और, एक ने उसकी बीबी से गन्दा मजाक भी कर लिया। जब वह रोता-पीटता ठकुराणी के पास आया, तब ठकुराणी ने बहुत अच्छा अभिनय किया।

वह बोली, “तुम उन्हें पहचानते हो?”

“नहीं ठकुराणी सा!”

“फिर भी तुम चिन्ता न करो। हम उनकी खोज करेंगे और उन्हें कड़ा दण्ड देंगे।” लेकिन वाद में उन्हें यह पता चल गया। उन दोनों ने जाते-जाते कहा, “अब हम जीवन भर इस निगोड़े ठिकाने का मुँह नहीं देखेंगे।”

ठकुराणी को उन जेवरों का कुछ हिस्सा मिला।

अभी-अभी एक बड़िया कार आकर ठकुराणी के महल के आगे खड़ी है।

राजाजी ने उसे बुचाया है, यह जा रही है। जब वह गांव छोड़ देती है तब मैं चिन्ता से मुक्त हो जाती हूँ।***समय बीत रहा है।

रात का अंधेरा अब बढ़ने लगा है।

घाँद चमक रहा है। मैं उसमें पड़े दारों को देखकर सोच रही हूँ—

सौन्दर्य में कलंक क्यों लगता है ?

कभी-कभी हृदय विचित्र अनुभूतियों से भर आता है। एक पौढ़ा उठती है और कश्मिरा सतरंगी इन्द्रधनुष की तरह रंगीन हो जाती है। इतनी रंगीन, जिसमें मैं यह भूल जाती हूँ कि मेरा जीवन हाहाकारों से भरा है, दुःख-दर्दों से ओत-प्रोत है।

सोचती हूँ—

मैं यहाँ से भाग गई हूँ। तुम्हारे पास हूँ।

घाँद चमक रहा है। दूर से यह आवाज आ रही है—

मैं रावल सून नहीं बोली

नाय बोली, मुख नहीं बोली***

पलवाड़ा रो कील कहो छो

छै मौना सून आया होना

मैं रावल सून नहीं बोली***

जब रावल से मेड्या आस्यो

लाल-किवाड़ी जड़ लेस्या

मैं रावल सून नहीं बोली***

जब दोनो म्हाँरी सेजा मासी

धूँपट रा पट नहीं खोली

मैं रावल सून नहीं बोली***। १

१. भावार्थ—मैं अपने राजा से नहीं बोलूँगी। मुख से नहीं बोलूँगी। एक पक्ष का वायदा किया था और छः माह के बाद आये। जब तुम दोलाजी, महल में आओगे तब मैं लाल-किवाड़ बन्द कर लूँगी और तुमसे नहीं बोलूँगी। जब तुम शय्या पर आओगे तब मैं अपना धूँपट-पट नहीं खोलूँगी, हे पतिदेव। मैं तुमसे नहीं बोलूँगी।

सचमुच शिव मैं तुमसे नहीं बोधूँगी। तुम कभी भी मुझे अपने पत्र में प्यार की बातें नहीं लिखते हो। क्या तुम्हें मेरी याद नहीं आती है? क्यों आये? कौन हूँ मैं तुम्हारी?....मैं सिर्फ तुम्हारी हूँ।....शिव! मैं बहुत दुःखी हूँ, बहुत दुःखी। लगता है, अपना काम तमाम कर लूँ, पर केवल तुम्हारा ध्यान, केवल तुम्हारी स्मृति, केवल तुम्हारा प्यार मुझे ऐसा करने से रोक रहा है।

शिव! मैं तुम्हारी पार्वती हूँ, पार्वती!

तुम्हारी पार्वती—

केसर

×

×

×

शिव!

चिमन न हो तो मैं मर जाऊँ। हम दोनों इसका कभी भी अहसान नहीं उतार सकते।

अब मेरा तुमसे मिलने का अवसर आ रहा है।

क्यों आ रहा है, यह तुम्हें चिमन बता देगा। तुम अधिवेशन में आ रहे हो? जरूर आओ, पर उस गोरे बाज से बचना। वह गोरा बाज निर्दोष कबूतरों पर बुरी तरह हमला करता है।

अधिवेशन में गड़बड़ी की पूरी सम्भावना है।

जुलमी लोग देश के जाग्रत सिपाहियों के बारे में गन्दी-गन्दी कहानियाँ बना कर भोली जनता में फैला रहे हैं। साथ ही नेताओं को गद्दार और लुटेरा बताकर उसे आतंकित कर रहे हैं।

मैं तुम्हें एक बार और सावधान करना चाहती हूँ कि तुम होशियार रहना। कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा सपना अधूरा ही रह जाय।

मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी। चाहती हूँ कि तुम्हें किसी तरह एक बार देख लूँ।

तुम्हारी—

केसर

×

×

×

राजधानी में अधिवेशन की तैयारियाँ हो गईं ।

विदेश में दर्यासिंह का मन नहीं लगा, इसलिए वह शीघ्र ही लौट आये ।

राज्य के बड़े-बड़े नेता आये और उन्होंने बड़े जोश से देश में बस रही विदेशी हकूमत और देशी रियासतों में हो रहे फोपण के विरुद्ध आवाजें बुलन्द की । चिंमन भी गया था ।

शिव साधू का भेष बनाकर आया । बड़ी-बड़ी दाढ़ी, भूँछ और भगवा कपड़े । उसे कोई भी नहीं पहचान सका । उसने पूरे अधिवेशन में भाग नहीं लिया और वह कभी भी किसी मुख्य सभा में नहीं बैठा । बस, उसकी निगाह चिंमन पर थी । आखिर उसने चिंमन को पहचान ही लिया ।

रात हो गई थी ।

शिव भेष बदल कर साधूपुर जाने वाली सड़क पर बैठा था । उसके आस-पास कई लोग थे । वह बैठा-बैठा सामन्तों का गुणगान कर रहा था । कुछ लोग सामन्तों का गुणगान सुनकर उसे उनका गुर्गा समझ रहे थे और कुछ राज-भक्त लोग उसे सम्मान की दृष्टि से देख रहे थे । अचानक ठकुराणी की कार वहाँ से गुजरी । रास्ते में मीढ़ देखकर उसने तुरन्त चिंमन को भेजा । वह गया । उसने आकर बताया कि कोई महात्मा बैठे हैं और वे राजा, महा-राजाओं की प्रशंसा कर रहे हैं ।

ठकुराणी ने तुरन्त उत्सुक होकर कहा, “उन्हें अपने यहाँ खाने के लिए ले आना, समझे !” ठकुराणी चली गई । चिंमन ने आकर शिव को सारी बात बताई ।

शिव उठ खड़ा हुआ और उसके साथ चल पड़ा ।

रास्ता सूना था ।

शिव ने अचानक चिंमन का हाथ पकड़ा । चिंमन हड़बड़ा उठा । आकुल स्वर में बोला, “क्या बात है ?”

“कुछ नहीं, मुझे पहचाना नहीं चिंमन ?”

चिंमन हैरत में आ गया ।

वह बड़े गौर से देखकर बोला, "क्या बात है ? मैंने आपको नहीं पहचाना, महात्मा जी !"

"लेकिन मैंने तुम्हें पहचान लिया। तुम चिमन हो। साधूपुर के ठिकाने के नोकर। कंसर कुंवर के पत्रों को छिपे....!"

चिमन हर्ष से भर उठा। बड़ी मुश्किल से बोला, "तुम, शिव तुम !"

दोनों दोस्त एक दूसरे के प्रगाढ़ आलिगन में आबद्ध हो गये।

अधुपूरित नेत्रों से चिमन ने शिव की ओर देखा और बोला, "तुम क्या से क्या बन गये हो मेरे दोस्त !"

"चिमन ! तुम कैसे हो ? तुम्हारे बाल-बच्चों का क्या हालचाल है ?"

"सब ठीक है।"

"लेकिन तुम्हारे कहने में उत्साह नहीं।"

चिमन गम्भीर हो गया। वह अपनी आँखों के आँसुओं को पोंछता हुआ बोला, "शिव ! गुलाम की कोई अपनी जिन्दगी नहीं होती। उसकी हर साँस गिरबी होती है। और उसका हर काम हुनम की तामील के रूप में होता है।

वह न अपने ढंग से सोच सकता है और न वह अपना कुछ स्वतन्त्र कर सकता है।...जीवन के चासीस वर्ष बीत गये हैं। हुनम की तामील करते-करते मन मर गया है।"

शिव ने तुरन्त उसे आश्वासन दिया, "हम जल्दी ही आजाद होंगे।"

शिव ने उसे एक वृक्ष की छाया में बिठा दिया।

शान्त वातावरण।

शिव ने कहा, "मैं कंसर से मिलना चाहता हूँ। मैं उससे चन्द बड़ी बातचीत करना चाहता हूँ।"

"लेकिन !"

"देखो चिमन, किसी भी तरह तुम मुझे उससे मिला दो।"

"तुम यही पर बैठो। रात को मुझसे यहीं पर मिल लेता।"

"मैं तुम्हें साधूपुर के पास जो दूटा मन्दिर है, वही पर मिलूँगा।"

चिमन वहाँ से चला गया।

महल में हलचल थी।

कंसर अपने पृथक् महल में बैठे प्रेमचन्द जी का उपन्यास पढ़ रही

यी। चिमन को देखकर वह उठी और और बोली, "क्या बात है ? ठकुराणी सा ने मुझे बुलाया है ?"

"हाँ।"

"क्यों ?"

चिमन के होठों पर हँसी नाच उठी, "एक बड़े महात्मा के दर्शन करने।"

"मैं किसी महात्मा-वात्मा के दर्शन नहीं करती। ये सारे के सारे पाखंडी और आवारा होते हैं।" उसने तड़ाक से कहा और उसने अपना मुँह धुमा लिया।

चिमन उसके पास बैठ गया और बोला, "बड़ी राणी सा ! आप विश्वास करें कि वह महात्मा बहुत पहुँचा हुआ है। वह भूत, भविष्य और वर्तमान सबको बता सकता है। फिर ठकुराणी सा का हुक्म है।"

केसर ने कहा, "मैं किसी का हुक्म नहीं मानती। तुम जाकर कह देना कि मैं किसी साधू-बाधू को नहीं मानती।"

चिमन खड़ा रहा।

"तुम जाते क्यों नहीं ?"

"मैं जा रहा हूँ पर मैं आपको कह देता हूँ कि साधू का आपको दर्शन करना ही होगा।"

केसर एकदम गम्भीर हो गई। वह अपनी दृष्टि उस पर गड़ाती हुई बोली, "क्यों ? मुझे ऐसा क्यों करना होगा ?"

"बस करना होगा।"

"लेकिन क्यों ?"

"क्योंकि वह साधू आपका शिव है।"

सितार के तार झनझना उठे हों, ऐसा लगा केसर को। कुछ देर तक वह ठगी-ठगी सी खड़ी रही। उससे न उठते बना और न बैठते। एकदम स्तब्ध।

चिमन ने धीरे से कहा, "शिव आया हुआ है। वह साधू के भेष में है। ठकुराणी ने उसे बुलाया था लेकिन वह उसके यहाँ नहीं गया। वह केवल आप से मिलना चाहता है। वह रात को आपसे गाँव वाले मन्दिर में मिलेगा।"

"ठीक है।"

"मैं अभी उसे कह दूँगा।"

वह बड़े गौर से देखकर बोला, “क्या बात है ? मैंने आपको नहीं पहचाना, महात्मा जी !”

“लेकिन मैंने तुम्हें पहचान लिया। तुम चिमन हो। साधूपुर के ठिकाने के नौकर। कंसार कुंवर के पत्रों को छिपे—”

चिमन हृषं से भर उठा। बड़ी मुश्किल से बोला, “तुम, शिव तुम !”

दोनों दोस्त एक दूसरे के प्रगाढ़ आलिंगन में आवद्ध हो गये।

अश्रुपूरित नेत्रों से चिमन ने शिव की ओर देखा और बोला, “तुम क्या से क्या बन गये हो मेरे दोस्त !”

“चिमन ! तुम कैसे हो ? तुम्हारे बाल-बच्चों का क्या हालचाल है ?”

“सब ठीक है।”

“लेकिन तुम्हारे कहने में सत्साह नहीं।”

चिमन गम्भीर हो गया। वह अपनी आँखों के आँसुओं की पोंछता हुआ बोला, “शिव ! गुलाम की कोई अपनी जिन्दगी नहीं होती। उसकी हर साँस गिरवी होती है। और उसका हर काम हुक्म की तामील के रूप में होता है।

वह न अपने ढंग से सोच सकता है और न वह अपना कुछ स्वतन्त्र कर सकता है।...जीवन के चालीस वर्ष भीत गये हैं। हुक्म की तामील करते-करते मन मर गया है।”

शिव ने तुरन्त उसे आश्वासन दिया, “हम जल्दी ही आजाद होंगे।”

शिव ने उसे एक वृक्ष की छाया में बिठा दिया।

शान्त वातावरण।

शिव ने कहा, “मैं केसर से मिलना चाहता हूँ। मैं उससे चन्द बड़ी बातचीत करना चाहता हूँ।”

“लेकिन !”

“देखो चिमन, किसी भी तरह तुम मुझे उससे मिला दो।”

“तुम यही पर बैठो। रात को मुझसे यही पर मिल लेना।”

“मैं तुम्हें साधूपुर के पास जो झूटा मन्दिर है, वही पर मिलूँगा।”

चिमन वहाँ से चला गया।

महल में हलचल थी।

केसर अपने पृथक् महल में बैठी प्रेमचन्द जी का उपन्यास पढ़ रही

धी। चिमन को देखकर वह उठी और ओर बोली, “बया बात है ? ठकुराणी सा ने मुझे बुलाया है ?”

“हाँ।”

“क्यों ?”

चिमन के होठों पर हँसी नाच उठी, “एक बड़े महात्मा के दर्शन करने।”

“मैं किसी महात्मा-वात्मा के दर्शन नहीं करती। ये सारे के सारे पाखंडी और आबारा होते हैं।” उसने तड़ाक से कहा और उसने अपना मुँह धुमा लिया।

चिमन उसके पास बैठ गया और बोला, “बड़ी राणी सा ! आप विश्वास करें कि वह महात्मा बहुत पहुँचा हुआ है। वह भूत, भविष्य और वर्तमान सबको बता सकता है। फिर ठकुराणी सा का हुक्म है।”

केसर ने कहा, “मैं किसी का हुक्म नहीं मानती। तुम जाकर कह देना कि मैं किसी साधू-बाधू को नहीं मानती।”

चिमन खड़ा रहा।

“तुम जाते क्यों नहीं ?”

“मैं जा रहा हूँ पर मैं आपको कह देता हूँ कि साधू का आपको दर्शन करना ही होगा।”

केसर एकदम गम्भीर हो गई। वह अपनी दृष्टि उस पर गड़ाती हुई बोली, “क्यों ? मुझे ऐसा क्यों करना होगा ?

“बस करना होगा।”

“लेकिन क्यों ?”

“क्योंकि वह साधू आपका शिव है।”

सितार के तार झनझना उठे हों, ऐसा लगा केसर को। कुछ देर तक वह ठगी-ठगी सी खड़ी रही। उससे न उठते बना और न बैठते। एकदम स्तब्ध।

चिमन ने धीरे से कहा, “शिव आया हुआ है। वह साधू के भेष में है। ठकुराणी ने उसे बुलाया था लेकिन वह उसके यहाँ नहीं गया। वह केवल आप से मिलना चाहता है। वह रात को आपसे गाँव वाले मन्दिर में मिलेगा।”

“ठीक है।”

“मैं अभी उसे कह दूँगा।”

“हौ-हौ, चिमन....!”

“क्या है ?”

“लो यह हार !”

“नहीं बड़ी राणी सा, यह हार मैं नहीं लूंगी । मैं सिर्फ शिव से अपनी मित्रता निभा रहा हूँ । चाहता हूँ कि उससे मित्रता निभती रहे ।”

×

×

×

रात हो गई थी ।

अनूपसिंह के डेरे से हल्का-हल्का शोरगुल आ रहा था । लगता था कि वह किसी नौकर को डांट रहा है ।

केसर चुपके से पिछले दरवाजे से निकली और पलक झपकते वह मन्दिर के समीप पहुँच गई ।

चारों ओर सन्नाटा था ।

शिव एक कोने में दुबका बैठा था ।

केसर ने उसे पुकारा, “शिव !”

चाँदनी प्यार की वर्षा कर रही थी । उसके रुपहले प्रकाश में केसर का सूखा हुआ चेहरा साफ दिखलाई पड़ रहा था । वह उसे देखता रहा । फिर वह उसकी बाँहों में थी । वह रो रही थी, सिसक रही थी । जब रोते-रोते उसका मन हल्का हुआ तब वे दोनों बातचीत करने लगे ।

शिव ने कहा, “तुम कितनी दुबली हो गई हो !”

“बस, अब मैं मर भी जाऊँ तो मुझे कोई गम नहीं होगा । तुमसे मिलने की साथ पूरी हो गई । शिव, चलो मेरे महल में ।”

“महल में ?”

“डरते क्यों हो ? इन बड़े महलों में बड़े से बड़ा पाप छिप सकता है, फिर एक आदमी क्यों नहीं छिप सकता ! चलो न, शिव, तुम्हें मेरी कसम !”

और शिव केसर के साथ महल की ओर चला ।

×

×

×

तीन दिन बीत गये ।

शिव केसर के महल में था । दोनों जीवन की समस्त विषमताओं को विस्मृत करके प्यार के क्षणों की सर्जना कर रहे थे । केसर उसे बार-बार कहती

यी कि तुम मुझे ऐसी जगह ले चलो जहाँ हम दोनों सुख-शान्ति से रह सकें ।
जहाँ कोई भी हमें अलग न करे ।”

शिव उसको भावुकता को परे कर कहता, “केसर ! संसार की दृष्टि से
हम कहीं बच कर नहीं रह सकते ।”

“फिर तुम यहीं पर रहो ।”

“खूब !” शिव ने कहा, “वधों से जिस गुलामी से मुक्त हुआ है, उसमें तुम
मुझे वापस डालना चाहती हो ?”

“मेरे पास रहने को तुम गुलामी कहते हो ।”

“आनन्द के क्षण बहुत कम होते हैं । थोड़े दिनों के बाद ही उत्तेजित क्षणों
की मौत हो जायगी और मैं इसे भी भयानक कैंद समझने लगूँगा । केसर ! मैं
ऐसा नहीं कर सकता । मैं कल यहाँ से चला जाऊँगा ।”

केसर का मुँह उतर गया ।

तभी चिमन भागा-भागा आया । आकर बोला, “ग़रब हो गया है बड़ी
राणी सा !”

“क्या ग़रब हो गया है ?”

“ठकुराणी सा ने बन्दूक तान ली है । वह छोटी राणी जी की हत्या करने
को तत्पर हो गई है ।”

“बात क्या है ?”

“आप खुद चलकर देख लीजिए ।”

केसर ने ओढ़ना ओढ़ा । शिव को वापस आने तक इन्तजार करने की
कसम दिला कर वह चली ।

अनूपसिंह का कमरा ।

अनूपसिंह कुर्सी के हथिये से अपना सिर फोड़ रहा था ।

ठकुराणी हाथ में बन्दूक लिये खड़ी थी ।

केसर जैसे ही कमरे में घुसी, वैसे ही ठकुराणी ने गरज कर कहा, “तुम
बाहर ही रहना ।”

“क्यों ?” केसर ने पूछा ।

“क्योंकि जिस खानदान की आन रियासत में सिरमौर बन कर रही है ।
उसी आन को इस कमोनी ने नागिन बन कर डस लिया है ।”

“बात क्या हुई हुई ठकुराणी सा !”

“बात इन छिनाल से पूछो कि क्या है ?”

अनूपसिंह ने तड़प कर कहा, “इसे कुछ मत पूछो । इसे गोली से मार दो । इसे गोली से मार दो ,”

केसर ने चतुराई का परिचय दिया । उसने बाहर निकल कर देखा । कोई नौकर-चाकर नहीं था ।

तब केसर ने ठकुराणी के हाथ से बन्दूक ली और वह धीमे स्वर में बोली, “बात का बतंगड़ बने, उसके पहले ही उसे सम्भाल लिया जाय ।” केसर उसी समय जीत कुंवर के पास गई । उसे वह स्नेह से डुलार कर बोली, “क्या बात है वहिन ?”

“बात कुछ भी नहीं है ।” उसने नाक-भों सिकोछते हुए कहा ।

“बात कुछ नहीं है ?” अनूपसिंह ने भड़क कर खड़े होने की चेष्टा की, पर वह धड़ाम से जमीन पर गिर गया । ठकुराणी और केसर ने उसे सहारा देकर उठाया ।

एक अरसे बाद केसर ने अनूपसिंह को देखा था । उसका पेट बहुत फूल गया था । गले के नीचे मांस छिटक गया था और आँखें सदा पीते रहने से डरावनी हो गई थी ।

अनूपसिंह ने घृणा से तड़प कर कहा, “इसे गोली मार दो, मैं कहता हूँ, मुझे बन्दूक दो, बन्दूक दो ! मैं इसे जिन्दा नहीं छोड़ूँगा ।”

जीत कुंवर अपने चेहरे पर हड़ता लाये हुए पूर्ववत् खड़ी थी । उसके चेहरे पर किंचित् भय नहीं था । हालाँकि उसके चेहरे पर कठोरता थी ।

ठकुराणी ने आकर कहा, “यह सब भूल गई है—रक्त-गर्व और रक्त-गौरव । यह गोले के साथ रंगरेलियाँ मनाती पकड़ी गई । तुम बताओ न, यह कितने शर्म की बात है !”

केसर ने जीत की ओर प्रश्न भरी नजर से देखा और वह बोली, “यह क्या बात है ? इतना पतन ?”

“यह झूठ है । सपेज झूठ !”

अनूपसिंह एक बार फिर इत्सा पड़ा । वह अपने हाथों को जोर से हिलाकर बोला, “यह मुझे उल्लू बनाना चाहती है । यह सच का झूठ करना चाहती है ।”

छिनाल कही की। मैं ईश्वर को कसम साकर कहता हूँ कि वह गोला मेरे सामने पलंग के नीचे से निकल कर भागा था। मैंने उसे पुकारा। उसे पकड़ने के लिए क्षपटा, पर मेरे पाँवों ने मुझे जवाब दे दिया। मैं तड़प कर रह गया। तब तक वह कम्बुस्त यहाँ से भाग गया। मैं उसका चेहरा भी नहीं देख पाया। मेरे पलंग के नीचे मेरी बीबी का यार ? हूँ ! मैं सबको कच्चा खा जाऊँगा।”

जीत ने उसी दृढ़ स्वर में कहा, “ये सपने की बात करते हैं। मैं सीगम्प खाकर कहती हूँ कि यह झूठ है, झूठ !”

ठकुराणी का ध्यान अचानक एक कपड़े के बटुए की ओर गया। वह उसे उठाकर बोली, “यह बटुआ यहाँ कैसे आया ?”

“मैं क्या जानूँ ?”

“यह बटुआ किसका है ?”

इस बार जीत भड़क कर बोली, “आप तो मुझसे इस तरह पूछ रही हैं जैसे मैं कोई परमात्मा होऊँ। बाहजी चाह, कोई भी चीज मिल गई तो उसके बारे में सब कुछ मैं बताऊँ ? कोई सपने को सत्य समझ ले तो मैं साबित करूँ कि इसे सपना था या नहीं। देखिए ठकुराणी सा, मैं ज्यादा बकबक करने की आदत नहीं हूँ, मुझे भाफ करिए। चलिये बड़ी राणी सा, ठकुराणी सा का दिमाग सठिया गया है। उँह !” और जीत इस नाजुक स्थिति में लापरवाही से नाक-भौं सिकोड़ कर चसती बनी।

ठकुराणी ने उसे रोका।

अनूपसिंह चिल्लाया, “इसे बन्दूक से मार दो ! यह भागने न पाये !”

जीत ने कहा, “मुझसे टकराने की कोशिश न करो, मैं सबको ठीक कर दूँगी।”

उसका इतना कहना था कि ठकुराणी के हृदय में आग लग गई। उसने तुरन्त बन्दूक उठा ली। उसने ज्योंही बन्दूक चलाई त्योंही जीत ने भी दूसरी बन्दूक उठा ली।

बड़ी भयंकर स्थिति हो गई थी।

केसर को लगा कि चन्द घड़ी में यहाँ खून-खराबी होने वाली है। दोनों में से एक घराशायी होने वाली है। वह सपक कर जीत के पास पहुँची और

उसने उसे कमरे के बाहर किया और फिर बड़ी फुर्ती से कमरे को बन्द कर दिया।

ठकुराणी किवाड़ खटखटाती रही और जीत अपने कमरे में घसी गई। केसर ने जीत को अपने पास बुलाया। बड़ी देर तक वह उसे समझाती रही। बाद में उसने इसके सामने शिव का जिफ्र किया। जीत ने किसी तरह की कोई दिसचस्पी नहीं दिखाई। वस इतना ही कहा, “मैं क्या करूँ ? मैं तुम्हारी तरह कुछ भी सहने को तैयार नहीं हूँ। मैं तुम्हारी तरह अपने आपका शोषण नहीं करा सकती। अपने आपको नहीं मार सकती।” कह कर वह सुबक पड़ी।

“फिर भी...”

“मैं किसी से नहीं डरती हूँ। ठकुराणी मेरा क्या कर लेगी ? इस ठिकाने पर मेरा भी बराबर का हक है।” वह रोती हुई चीखी !

थोड़ी देर बाद शान्त रहने के बाद केसर बोली, “तुम ठकुराणी को नहीं जानती हो ! वह इतनी गई-गुजरी और पशु-वृत्ति की है कि समय पड़ने पर वह अपने विकृत अहम् की रक्षार्थ अपने बेटे का खून भी अपने हाथों कर सकती है। वह तुम्हें किसी के द्वारा मरवा देगी।... फिर स्वयं राजाजी भी उसके अधिकार में हैं।”

“तुम उसकी चिन्ता न करो। मैं भी किसी से कम नहीं हूँ। मैं ठकुराणी को ठीक कर दूँगी।... कल मैं राजधानी जा रही हूँ। मैं इस बुढ़िया का दिमाग ठीक करके रहूँगी।”

जीत चली गई।

× × ×

शिव ने कहा, “मुझे यहाँ से चला जाना चाहिए। यहाँ काफी समय लग गया। इसके साथ यहाँ की स्थिति भी बदस रही है।”

“हां, शिव तुम्हारा यहाँ रहना खतरे से खाली नहीं है।”

“लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि गाँव वाले, ठकुराणी और अन्य आदमी मुझे भूल गये हैं।”

“तुम्हें कौन भूल सकता है ? शिव, तुम क्या हो, यह तो समय ही

बताएगा ।”

शिव ने उसे एक बार फिर अपनी बांहों में मरा और फिर रात के अँधेरे में केसर को विलखती छोड़ कर चला गया ।

रात के अँधेरे में केसर महल की छत पर बैठी हुई तारे गिन रही थी ।
धीरे-धीरे उसके अधरों से फूट पड़ा—

नाग जी रे
भूलू छूँ बैरी धारों नाँव रे
कोई सूरतड़ी भूल नहीं जावे हो नागजी ।

× × ×

दूसरे दिन ही जीत ने अपने आपको अलग समझ लिया । उसने अपनी दासियों को कह दिया कि वे ठकुराणी का हुक्म न मानें और चन्द बसूली करने वाले नौकरों को हुक्म दे दिया कि किसानों की सारी बसूली उसके हाथ में रहें ।

यह बात ठकुराणी के पास पहुँची ।

वह सीधी जीत के पास आई । उसने जीत को सम्बोधित करके कहा, “अँधेरी कोठरी देखी है ? जरा अपनी बहिन केसर को पूछ ले । वह गत बनाजैगी कि दिन के तारे दिखने लगेंगे ।”

जीत ने उपेक्षा से कहा, “भगवान ने दो हाथ मुझे भी दिये हैं ।”

ठकुराणी नीचे गई और उसने जीत को पकड़ने के लिए हुक्म दिया । लेकिन जीत चम्कूक लेकर बाहर भा गई । पकड़ने वाले खड़े के खड़े रह गये ।

केसर को विमन बुलाकर लाया और उसने जैसे-सैसे बात को बनाया और उन दोनों को शान्त किया ।

ठकुराणी ने उसी समय अपनी विश्वस्त दासियों व दासों को अपने निजी कमरे में इकट्ठा किया । उन्हें मह हिदायत दी कि आज रात को छोटी कुँयराणी का काम तमाम कर दिया जाय ।

पड़्यन्त्र बन गया !

उसकी खबर केसर को भी नहीं लगी ।

उस रात लखूपसिंह पुनः किसी अन्य लड़की के साथ शराब पीकर पड़ गया । भोगलसिंह और शार्दूलसिंह भी इस पड़्यन्त्र से नावाकफ थे ।

ठकुराणी ने अपने दासों को जीत के कमरे के चारों ओर खड़ा कर दिया सावधान । एकदम सावधान !

योजना यह बनाई गई थी कि जीत को गला घोटकर मार दिया जाय गला घोटने से दूसरे लोगों को यह शक भी नहीं रहेगा कि वह कैसे मरी है । उसका अन्त किसने किया ?

स्वयं ठकुराणी अपने सबसे बलिष्ठ दास के साथ जीत के कमरे में घुसी । देखा सम्राट्ठा था ।

ठकुराणी ने धीरे से कहा, "आज कोई नहीं है । मौका अच्छा है वना यह खूँखार भेड़िनी बच ही जायगी ।"

वे सब अँधेरे में बड़े ।

"अँधेरा भी खूब रहा आज । देखो कदमों की आहट नहीं होनी चाहिए ।"

लेकिन जीत का सारे महल में कोई पता नहीं लगा । ठकुराणी ने एक-एक कमरा खोजा, पर उसे जीत नहीं मिली । तब वह केसर के पास आई । केसर ने कहा, "वह सन्ध्या के समय राजधानी की ओर अपनी पुरानी कार लेकर चली गई है ।"

ठकुराणी ने उसी समय दूसरी कार ली और वह भी राजधानी की ओर चल पड़ी ।

×

×

×

३

....

हाथी महल में महाराजाधिराज श्री पद्मसिंह जी गये हुए थे । आज वहाँ वायसराय के भतीजे के दिल्ली आगमन पर नाच-गाने का प्रोग्राम था । नाच और गाने में सिवाय पद्मसिंह के दोस्तों के और कोई नहीं था ।

जीत ने गड़ से पता लगाया और फिर वह हाथी महल में आ गई । हाथी

मइल में उन्ने जनानवाने में डेरा जमाया। दावी के हाथ उसने पचासिह को खबर पहुँचाई।

पचासिह अपने गोरे साहब को छोड़कर वहाँ आया। अप्रत्याशित आने का कारण पूछा, "आप यहाँ कैसे पधारी हैं?"

जीत ने पर्दे की ओट में सारी स्थिति समझाई।

पचासिह ने कहा, "आपने उनका विरोध करके अच्छा नहीं किया। आप उनकी शक्ति से परिचित नहीं हैं।"

"मैं हर एक की शक्ति से परिचित हूँ। राजाजी! आप उन्हें अपनी शक्ति से अधिक ताकतवर समझ सकते हैं, पर मैं किसी को आप से अधिक नहीं मानती। ज़िम महान् आदमी के एक सकेत पर सारा राज्य झुक जाता है, वह महान् आदमी एक साधारण औरत के हाथ को कठपुतली बने, यह मैं नहीं चाह सकती।"

पचासिह को गुस्सा आ गया। उसने डाँट कर कहा, "छोटी राणीजी, हाँश में बातें करिए।"

"मैं आपके पाँव पकड़ती हूँ। आप मेरी मदद कीजिए।" कह कर जीत ने सारी मर्माँदा तोड़ डाली। वह पर्दे के बाहर आ गई। उपांग पचासिह के पाँव पकड़ लिये।

अनूठा यौवन और अनुपम रूपरंग।

पचासिह उसे देखता रहा—अनिमेष।

जीत ने कहा, मैं कसम खाकर कहती हूँ कि मुझ पर अत्यन्त आशा है, कि मेरे साथ कुत्ते-सा व्यवहार किया जा रहा है। मैं जानती हूँ, कि आपके वह भाई-सा आदमी होकर भी अत्यन्त के दर्शन नहीं करे। फिर ठकुराणी सा का जुलूम! आप नहीं जानते कि वह कितने बुरा है। मैं जानती हूँ! अपनी बात रखना चाहती हूँ।"

"लेकिन मैं क्या कर सकता हूँ?"

"आप सब कुछ कर सकते हैं। मैं जानती हूँ कि आप बहुत सारे से दें कि आप मेरा बगल में बैठें और मेरी बातें सुन लें। मैं सब कुछ टाँक कर रखती हूँ।"

पचासिह के आगे अत्यन्त बुराई का दर्शन था।

प्यासी नजरों से देखा और बाद में अपने आपको सावधान करता हुआ बोला,
 “ठीक है, मैं सब ठीक कर दूँगा। आप रात भर यही पर ठहरिए।”

जीत ने अपने आपको अहम् से देखा।

रात दिन रही थी।

जीत जालीदार झरोखे में बंठी हुई पातुर का नाच देख रही थी। गौरा
 आदमी झूम रहा था और कभी-कभी वह अंग्रेजी में कुछ बक उठता था।

पातुर गा रही थी—

मैं कईपों जगावूँ.....काची नीदाँ में सुतो सामबो

मणदल कर्यो रसोवड़ो स रे पुरस्यो सोबन घाल

भावज ! भेज्यो म्हारा घोर न भोजन की बेल्पाँ जाय एजी मैं.....१

वह गा रही थी। उसकी कमर में सौ-सौ बल पड़ रहे थे। दाढ़ खूब उड़
 रही थी। अन्त में सभी लोग थक गये।

गौरा अफसर पातुर को लेकर रंगमहल में चला गया।

अब परसिह अकेला रह गया। हालाँकि जनानी द्यूड़ी से एक अत्यन्त
 सुन्दर रूपमती लड़की साथ आई थी, लेकिन आज परसिह के मानस में एक ही
 स्त्री का रूप नाच रहा था, वह था—जीत का।

लेकिन ?

वह विचारता रहा। वासना का भीषण संघर्ष उसके मन में होता रहा।
 वह कभी शय्या कर करबटे बदलता और कभी वह कमरे में बहुतकदमी
 करता था।

अन्त में घोर की तरह जीत के कमरे की ओर बढ़ा। घुमावदार रास्तों
 को पार करके उसने जीत का द्वार खटखटाया। जीत ने किवाड़ खोले। उसने
 खूब धाराब पी रखी थी। सिगरेटों का घुआँ कमरे में बादलों की तरह छाया
 हुआ था।

१. मैं अपने पति को कच्ची नीद में कैसे जगा दूँ ? नन्द ने रसोई करके
 सोबन-घाल परोस दिया है। वह कह रही है कि हे भाभी, मेरे भाई को
 भेज दीजिए, भोजन का समय जा रहा है। पर मैं उसे कच्ची नीद में
 कैसे जगाऊँ ?

—एक राजस्थानी लोक-गीत

जीत ने पूछा, “कोन है ?”

पर्शसिंह ने कहा, “मैं हूँ पर्शसिंह !”

जीत ने कहा, “आप यहाँ क्यों आये हैं ?”

“मैं……मैं……।” पर्शसिंह से कुछ भी नहीं कहा गया। वह लड़खड़ा कर रह गया। उसकी आँखों के आँगन में वासना के नाग नाच रहे थे।

जीत ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोली, “पहले आप मुझे वचन दीजिए कि मैं ठकुराणी का पक्ष नहीं लूँगा, कहिए !”

“मैं वचन देता हूँ।”

“सच ?”

“हाँ !”

जीत ने दियासलाई जलाई। सिगरेट पिया और राजाजी के बेहरे की ओर देखा। फिर उसने कमरे में एकदम अन्धेरा कर दिया।

×

×

×

जीत अपनी सास के दबदबे का पासा पलट कर वापस साधूपुर चली गई। ठकुराणी को इस बात का पता ही नहीं चला। इसका एक कारण और था कि ठकुराणी को गोरे अफसरों से बड़ा भय था। यही वजह थी कि वह रात भर राजधानी के महल में ही बीठी रही और राजमाता के कान भरती रही।

सवेरे जैसे ही पर्शसिंह महल में पहुँचा, वैसे ही दासी ने आकर कहा, “भाजी सा, आपको याद फरमा रही है।”

“कह देना मैं थोड़ी देर बाद उनसे भेंट करूँगा, अभी मुझे बायसराय साहब के भतीजे को खाना करने जाना है।”

और ठकुराणी राजमाता को कह रही थी। (क्योंकि अब महारानी का पद पर्शसिंह की बहू को मिल गया था।) उसकी आँखों में आँसू थे। वह बोली, “उसने मेरी ओर आग उगलती आँखों से देखा और मुझे ओछे शब्द कहे।…… बाई सा ! आज तक मेरे सामने किसी का मुँह भी नहीं खुलता था, पर उसने मेरी सारी प्रतिष्ठा को धूल में मिला दिया।”

राजमाता उसे धीरज दे रही थी। उसके आँसुओं को अपने आशवासनों

से पोछ रही थी। उसे बार-बार कह रही थी, “मैं पद्मसिंह को कह कर सब ठीक करा दूँगी। तुम जरा भी चिन्ता न करो।”

लेकिन हुआ उसका उल्टा ही।

दोपहर को जब पद्मसिंह लौटा तो रावले में उसका बुलावा हुआ। वह वहाँ गया। माजी सा गाव-तकिये का सहारा लिये बैठी थी। उसने काले वस्त्र पहन रखे थे। उसके मुख की कान्ति फीकी पड़ गयी थी। राजमाता ने यह प्रण कर लिया था कि वह उम्र भर महल से बाहर नहीं निकलेगी।

पद्मसिंह ने राजमाता के चरण-स्पर्श किये।

राजमाता ने उसे आशीर्वाद दिया। बोली, “देखो बेटे, सूरज बाई सा आपकी मौसी हैं। आपको अपनी मौसी का विशेष स्याल रखना चाहिए। मैं आपसे प्रार्थना करूँगी कि आप एक बार जाकर उनके महल के सभी नौकर-चाकरों को डाँट दें तथा इनकी बहू सा को समझा दें।”

पद्मसिंह चुप रहा।

“देखिए बाई सा, राजाजी धोलते नहीं हैं। जल्द उसने इनके कानों को भर दिया होगा।” सूरज ने कहा।

“नहीं-नहीं, आपको भ्रम हो गया है मौसी सा, ऐसा कोई बात नहीं है।”

“लेकिन आप उसे असल क्यों नहीं कर देते?”

“देखिए, असली अधिकार उन्हीं का है, अब आप तो बैठी-बैठी पेन्शन लें।” राजाजी ने उपेक्षा से कहा।

ठकुराणी की भयें तन गईं। वह क्रूरता को अपने चेहरे पर नचाकर बोली, “राजाजी! आप मुझे उपदेश दे रहे हैं? मैं खम्मा मांगती हूँ—गुस्ताखी के लिए, लेकिन आप यह अच्छी तरह जानते हैं कि आप आज जो कुछ भी हैं, वह मेरी बदौलत हैं।”

पद्मसिंह के भी तौर बदल गये। वह बोला, “आप यह क्यों भूल जाती हैं कि मैंने इसका बदला दे दिया है। आपके ठिकाने में कई बार विद्रोह फैला, किसानों के साथ अत्याय हुआ, दो-तीन आदमियों को आपके नौकरों ने हत्या की, लेकिन मैंने कुछ भी नहीं कहा। क्या यह बदला काफी नहीं?”

ठकुराणी का मुँह उतर गया।

वह राजमाता के पाँव पकड़ कर बोली, “आप इन्हें समझाइए। पता

नहीं, उसने सारे नौकर-चाकरो पर बया जादू कर दिया ! यह मेरी इज्जत का सवाल है । मेरी आन का प्रश्न है ।”

पद्मसिंह बुत की तरह बैठा रहा ।

राजमाता ने कहा, “इनका हमारे पर बहुत बड़ा अहसान है बेटा ! आपकी मौसी ने अपने जीवन को सतरे में डालकर हमारे साथ बड़े-बड़े नाजुक खेल खेले हैं । इनकी बात हमें रखनी ही पड़ेगी ।”

पद्मसिंह गम्भीर हो गया ।

राबले में कोई नहीं था । एक दासी थी, उसे भी यहाँ से हटा दिया गया ।

पद्मसिंह बड़े धर्म-संकट में पड़ गया । यह क्या करे और क्या न करे ! सोचता रहा, विचारता रहा । अन्त में उसने ठकुराणी को कहा, “आप इस मामले को आपस में ही निपटा लें ।”

“कैसे ?”

“जैसे भी हो ।”

“तुम तो बीच में नहीं धोलोगे ?”

“नहीं ।”

“बचन देते हो ?”

“हाँ !”

ठकुराणी उठ खड़ी हुई । उसने राजमाता के चरण छूकर कहा, “मैं उसको देख लूँगी ।”

पद्मसिंह की अब क्याल आया कि ठकुराणी अपनी जान पर खेल जायगी । उसने चुपके से कार भेजकर जीतकुँवर को बुलाया ।

केसर अपने महल में परित्यक्ता-सी बैठी बड़े महल की हलचल देख रही थी । जीत घर से निकली । राजाजी की कार थी । ठकुराणी जल कर राख हो गई । उसने तुरन्त एक आदमी को अपने पीहर के ठिकाने को दौड़ाया । वह बहुत अवश थी ।

जीत चार दिन के बाद लौटी ।

उसके लौटते ही ठकुराणी के पीहरवालों ने मिलकर जीत को पकड़ लिया और एक कमरे में बन्द कर दिया ।

ठकुराणी ने सारे नौकरों को बुलाया । उन्हें कड़ाई से कह दिया कि “किसी ने इस रहस्य को जरा भी बाहर कर दिया तो मैं उसे जिन्दा जला दूँगी । जमीन में गड़वा दूँगी ।”

इसके बाद ठकुराणी जीत के पास गई ।

उसके हाथ में तार का हष्टर था ।

बन्द कमरा—बन्दी-गृह सा ।

ठकुराणी ने हष्टर लेकर जीत के आगे दम्भ से फटकारा । जीत क्रोध में छटपटाती रही । तड़पती रही । लेकिन क्या करती ?

ठकुराणी ने अपने पीहर के तीन कारिन्दों को वहाँ लडा कर दिया ।

उसको पूरा यकीन था कि उसके साथ वे छल नहीं कर सकते ।

जीत को सिगरेट पीने की आदत—वह क्या करे ?

वह बेचारी बार-बार उन आदमियों से सिगरेट देने के लिए कहती, पर वे नहीं देते । एक बार उनमें से एक आदमी का दिल बेचैन जीत को देखकर तड़प गया और ठकुराणी से जाकर कहा, “आप हुक्म दें तो मैं उन्हें एक सिगरेट दे दूँ ।”

“नहीं !”

वह बेचारा आकर बैठ गया ।

थोड़ी देर बाद ठकुराणी खुद वहाँ गई ।

जीत दीवार की ओर मुख किये हुए बैठी थी । ठकुराणी का क्रूर अट्टहास सुनकर उसने गर्दन ऊँची की ओर ठकुराणी को देखते ही उसके तौर बदल गये ।

ठकुराणी ने पूछा—

“तुम्हें सिगरेट चाहिए ?”

“नहीं !” उसने कठोरता से उत्तर दिया ।

“रस्सी जल गई, पर उसके बल नहीं गये ।”

जीत ने कुछ नहीं कहा । वह बैठ गई ।

ठकुराणी ने कहा, “इसी कोठरी में सड़ा-सड़ा कर मारूँगी ।”

जीत ने कहा, “मरने से मैं नहीं डरती ।”

ठकुराणी चली गई ।

केसर को चिमन ने सारी बातें कही । वह सीधी ठकुराणी के पास गई ।

ठकुराणी शराब पी रही थी। जब कभी वह मन ही मन अशान्त होती थी, तब वह वक्त-बेवक्त शराब पीने लग जाती थी। आज भी यही बात थी।

वह शराब पी रही थी। शराब के पास पका हुआ मांस पड़ा था। वह मांस के टुकड़ों को तोड़-तोड़ कर खा रही थी। इस समय उसका चेहरा इतना अमानवीय लग रहा था कि देखते ही केसर के शरीर में कँपकँपी दौड़ गई। कितनी गहरी झुर्रियाँ !

उसने चरण-स्पर्श करके कहा, “ठकुराणी सा ! आप छोटी बहू सा पर ऐसा जुल्म न कीजिए। यह अच्छा नहीं रहेगा !”

“मुझे सीख देने आई हो। मैं अपना भला-बुरा खूब समझती हूँ।” ठकुराणी ने तप्त-स्वर में कहा।

केसर कुछ नहीं बोली। उसने देखा कि सारे महल में ठकुराणी के भाई, भतीजे और रिश्तेदार जमे हैं। कल उसके एक रिश्तेदार ने दो किसानों को पीट भी दिया। उसके एक छोटे भाई ने एक घोड़ी का पालतू कुत्ता मार दिया। जिधर देखो वे लोग अशान्ति मचा रहे थे।

केसर ने अनूपसिंह के पास इसकी सूचना भेजी। अनूपसिंह उस समय अपने मामा के लड़कों से घिरा हुआ था। शराब के दौर चस रहे थे। शिकार से लाये हिरनों का मांस पक रहा था।

अनूपसिंह ने उसकी फरियाद सुनी। उसे अपनी कुर्सी पर बिठाकर चार आदमी लाये।

एकान्त।

“कहो, क्या कहना चाहती हो ?”

“मैं यह पूछना चाहती हूँ कि दूसरों को घर में पनाह देने से क्या लाभ है ? वे आपका ही सिर और आपकी ही खूती कर रहे हैं।”

अनूपसिंह ने तुरन्त कहा, “मैं किसी तरह का उपदेश नहीं सुनना चाहता हूँ। मेरी माँ सब समझती हैं। वह मेरा भला-बुरा खूब समझती हैं।”

केसर उसके चरणों में बैठ गई। उसे समझाती हुई वह बोली, “आप मेरे कहने पर ध्यान दीजिए। कहीं ऐसा न हो कि अन्नदाता अपने ठिकानों को ही हड़प लें।”

“तुम्हें क्या कष्ट हो रहा है ! ठिकाना मेरा बीर....?”

“मुझे कष्ट इस बात का हो रहा है कि आपसे छोटी राणी को कोठरी में बन्द कर दिया है।”

“उस कुलटा को ? अच्छा किया। मैं उसे दो-तीन दिन में जहर पीने को मजबूर करूँगा। अब मैं उसे जिन्दा थोड़े ही रखूँगा !” और इसके बाद उसने कुछ भी सुनने से इन्कार कर दिया। उसने अपने नौकरी को आवाज दी और वह चला गया।

केसर का मन व्यथा से भर गया।

अधियारा-सा उसके मानस पर छाता गया। उसे लगा कि जीत का जीवन फिर भी कुछ साभिप्राय है। वह कुछ नहीं है। बन्द पखेरू की तरह वह जिन्दा रहना चाहती है। जीवन के कितने ही बरसों को उसने यों ही बरबाद कर दिया। जीत में विश्रोह है। वह प्रतिशोध भी लेना जानती है, पर उसमें कुछ भी नहीं है। वह कुछ भी नहीं कर सकती।

वह जीत के पास गई।

उसने उसे सिगरेट दी। जीत ने बाँसू भर कर कहा, “मुझे यहाँ से निकालो। मुझे यहाँ से भगा ले चलो। फिर मैं एक-एक को देख लूँगी।”

यह खबर तुरन्त ठकुराणी के पास पहुँची। वह आई।

“बड़ी बहू ! तुम यहाँ क्यों आईं ?”

“ऐसे ही।”

“कोई बात नहीं। भविष्य में ऐसा नहीं होना चाहिए।”

“ठीक है।” कहकर वह चली गई।

चिन्मन बैठा-बैठा हुक्का पी रहा था।

केसर ने उसे सारी बातें समझाईं और कहा, “तुम जाकर सारी बातें राजाजी से कह आओ।”

“नहीं बड़ी राणी सा, मुझे ठकुराणी सा जिन्दा जला देगी।”

केसर कुछ देर सोचती रही। फिर खुद रथ पर सवार होकर चल पड़ी। रात गहरी हो रही थी।

सवेरे ठकुराणी को मालूम हुआ कि केसर राजधानी चली गई है। फिर क्या था, उसने तुरन्त जीत को मरवाने का कार्यक्रम बना लिया। उसने मन

ही मन सोचा कि वह जीत को छोड़ देगी। जीत बाहर आयेगी और बाद में वह किसी बन्दूक से....!

लेकिन राजाजी खुद आ गये।

उन्होंने आने में इतनी जल्दी की कि ठकुराणी की योजना असफल हो गई। ठकुराणी के भाई-भतीजों को पद्मसिंह ने पकड़ लिया और ठकुराणी को एक महल में बन्द कर दिया और उसे हिदायत दे दी, "अगर मौसी सा आपने फिर कभी ऐसा नीच काम किया तो ठीक नहीं रहेगा। उसका परिणाम बहुत ही भयानक होगा।"

पद्मसिंह के कारण भयानक काण्ड होते-होते रुक गया। ठकुराणी के नाते-रिश्तेदारों पर कई हजार रुपया जुर्माना करके उन्हें छोड़ दिया गया। ठकुराणी को पद्मसिंह ने चार दिन कमरे में बन्द रखा और बाद में उसे शान्ति से पड़े रहने की आज्ञा दे दी। जीत ठिकाने की सर्वेसर्वा हो गई।

X

X

X

४

...

अभी-अभी सबेरा हुआ है।

केसर महल के जालीदार झरोखे में बैठी-बैठी सूर्य की किरणों का आनन्द ले रही थी। हवा ठण्डी थी।

उसके पास ही उसकी दासी खड़ी थी। वह उसे यह कहने आई थी कि पहले आप स्नान कर लीजिए, लेकिन अपनी भालकिन को विचार-मग्न देखकर उसकी हिम्मत नहीं हुई। समय गुजारने के लिए वह वहाँ खड़ी-खड़ी झरोखे की जालियाँ हो गिनने लगी।

केसर सोच रही थी। आज उसे भयानक स्वप्न आया था। ऐसा स्वप्न जैसे एक महल है। उस महल में एक राजकुमारी कैद है। वह राजकुमारी सुन्दर है, गोरी है और आकर्षक, साथ ही वह बड़ी कमजोर व लाचार है।

महल का राजा उससे जबरदस्ती विवाह करना चाहता है पर राजकुमारी उससे विवाह किसी भी सूरत में नहीं करती। फिर क्या था ? राजा ने उस राजकुमारी को कैद कर लिया।

दिन आये और गये।

केसर ने देखा कि राजा का प्रखर व्यक्तित्व शान्त हो गया है। उसके सारे बाल रुई की तरह सफेद हो गये हैं। इधर राजकुमारी भी बूढ़ी हो गई है। उसके भी बाल सफेद हो गये हैं। गालों पर झुर्रियों के निशान बन गये हैं और उसकी सूरत बेमानी हो गई है।

तभी गडगड़ाहट की आवाज के साथ कैद के फाटक खुलते हैं। राजकुमारी चौंकती है। देखती है, वही राजा फिर आया है !

राजा कहता है, 'तुम्हारे हठ ने तुम्हें तबाह कर डाला, लेकिन तुम अब भी मेरे साथ रह सकती हो !'

राजकुमारी घृणा से झूक कर बोली, "मुझे तुमसे घृणा है। मैं किसी की भी होना नहीं चाहती। मैं अकेली ही रहना चाहती हूँ। मैं मरना चाहती हूँ, मरना।"

सपना टूट गया।

और केसर सोचती रही कि इसी तरह का उसका भी अंजाम होगा। वह अकेली यहाँ प्यार का दीपक संजोये पड़ी रहेगी। वह समय की प्रतीक्षा करेगी, पर समय प्रतीक्षा नहीं करेगा। तब शिव आयगा। ओह ! उस समय इस जित्म में क्या रहेगा ? हड्डियाँ और मांस। एक निर्जीव लोथड़ा-सा। न भावनाओं का जोश और न उत्तेजना की ज्वाला। एक शान्त और स्थिर ठहराव ! धका-धका तन और बुझा-बुझा मन !

तब उसे रात भर नींद नहीं आई।

वह रात्रि की निस्तब्धता में बैठी रही।

और अब भी वह यही सोच रही है कि क्या वह अर्थहीन पीड़ित-सुहाग का सिन्दूर लिये अपने शिव की प्रतीक्षा में अपने यौवन के स्वर्णिम जगत को देखे, जीवन की महा-उपलब्धि प्रेम के अलौकिक क्षणों का उपभोग करे।

अप्रत्याशित उसकी दृष्टि अपनी दासी पर गई।

जबने पूछा, "क्या बात है ?"

“आप स्नान कर लें।”

“ओह !” चौंक कर वह उठी। उठकर उसने अँगड़ाई ली और वह चल पड़ी। उदास-उदास !

स्नान से निवृत्त होकर वह दर्पण के सम्मुख खड़ी हो गई। अपने रूप-यौवन की उपेक्षा उससे नहीं देखी गई। वह यकायक सिसक पड़ी।

“उसका यह उज्ज्वल यौवन ऐसे ही मर जायगा ?”

जीतकुँवर ने आने की सूचना दी।

कैसर तुरन्त तैयार हुई। अपनी आँखों के आँमुओं को पोंछा।

दोनों पास-पास बैठीं। जीतकुँवर सिगरेट जला कर बोली, “बड़ी राणी ! मैंने ठकुराणी सा को परास्त कर दिया है, पर कोई पता नहीं कि वह कब कोई भयानक कदम उठा ले। सावधान मैं रहती ही हूँ, पर इतना चाहती हूँ कि तुम भी सावधान रहो।”

“मुझे किसी का भय नहीं। मेरा जीवन एकदम निर्भय है। तुम मुझे...!”

जीत ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया और कहा, “आप अपनी मर्जी से जो चाहें कर सकती हैं। आपका इस ठिकाने पर उतना ही हक है, जितना मेरा। आप मुझसे बड़ी हैं।”

मैं तुमने उम्र में बड़ी जरूर हूँ, परन्तु हूँ छोटी। तुमने विद्रोह करके वह प्राप्त किया, जिसकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकती थी। मैंने पिछले सारे वर्ष सुलगती हुई लकड़ी की तरह बिताये हैं। मैं जुल्म सहती रही हूँ। मैं अपने आपको मारती रही हूँ।”

“अपनी-अपनी आदत होती है। लेकिन आपको चैन नहीं है। क्या आप किसी से प्रेम करती हैं ?”

“नहीं नहीं !”

“झूठ क्यों बोलती हैं ? आप अपने आपको धोखा दे सकती हैं पर मुझे नहीं, मैं सब जानती हूँ। यह गहरा मौन, एकान्त और यह सहिष्णुता की अपरिमित सीमा प्रेम का ही दान हो सकता है। और चिमन...?”

सन्नाटा।

“मैंने आपको, बड़ी राणी, आदरणीय माना है। जीवन में अधिकार करना और विद्रोह करना मेरा धर्म-सा बन गया है, चाहे वह विद्रोह सही हो या

गलत । मैंने कभी उसके परिणाम पर नहीं विचारा । हाँ, एक बात है कि मैं किसी से दय कर नहीं रह सकती । मैं अपना हनन नहीं कर सकती ।”

“फिर ?”

“मुझे पता चला है कि आप ‘शिव’ नामक किसी दासी-पुत्र से प्यार करती हैं । वह भी आपको तन-मन से चाहता है । यह पता चला है कि स्वर्गीय महाराजाधिराज ने उसे राज्य से निकाल दिया था, लेकिन मैं उसे पापस यहाँ घुलाऊँगी । उसे इसी गाँव में जमीन दूँगी और आपके दुःख दूर करूँगी ।”

“लेकिन !”

“लेकिन-येकिन मैं नहीं जानती ।”

केसर ने उसे रोककर कहा, “नहीं छोटी राणी, नहीं ! मैं यह सब नहीं कर सकती । मैं प्रेम में मिट पाऊँगी, पर यहाँ के लोगों की तेज और तिरस्कार भरी नजरों को नहीं सह पाऊँगी ।”

जीत ने स्नेह पूर्ण स्वर में कहा, “यह देखो शिव का पत्र ।”

पहाड़ टूट पड़ा है—ऐसा लगा केसर को । जीत को शिव का पत्र कहाँ मिल गया ? पत्र में क्रान्तिकारी आन्दोलन की बातों के अतिरिक्त कुछ पत्तियाँ भावुकतापूर्ण भी थी । उसमें शिव ने कई बातें प्रेम को लेकर बड़ी मार्मिक लिखी थी । उसने यह भी लिखा था कि आजकल वह बड़ा व्यस्त है । विशेषतः वह देश के दीवानों के साथ ही रहता है । वह खूब अध्ययन करता है । उसने यह भी लिखा—आजादी के दीवानों के जीवन-चरित्रों से हृदय को दृढ़ता और विश्वास मिलता है ।

जीत ने वह पत्र उसे दे दिया ।

बोली, “शिव तुमसे हार्दिक प्यार करता है और तुम उसे अपना सब कुछ मानती हो । मंत्रों के पवित्र अनुष्ठान और सामाजिक रीति-रिवाजों के अनुसार तुम दोनों का विवाह भले ही न हुआ हो, पर यह सत्य है कि आत्मा के लोक में तुम दोनों के प्रेम-बन्धनों की ही यूँज है ।” “बड़ी राणी ! आत्मबन्धक और आत्म-हनन दोनों ही पाप और पतन हैं । आदमी अपने आपको बेमदलब मारकर महान् अवश्य बन सकता है, पर उसकी उस महानता में सदा

खोखलापन बोलता है। यह खोखलापन आदमी को अवश्य दुष्परिणामों से टकराता है।”

“लेकिन छोटी राणी ! यह समाज, यह बन्धन यह खानदान और यह ठकुराणी ?”

“विद्रोह करोगी तो खोखली मान्यताएँ खण्ड-खण्ड हो जाएंगी। फिर नीति का यह कथन है कि यदि ऐच्छिक वस्तु सहज और स्वस्थ रूप से प्राप्त नहीं होती, तो उसे किसी भी तरह प्राप्त करो। बहिन ! जीवन बड़ी कठिनता से मिलता है। उसे व्यर्थ और निष्प्रयोजन मत खोजो। अगर हमारे माँ-बाप हमें एक अपंग और पीरूपहीन व्यक्ति को सौंप सकते हैं तो हम क्यों नहीं अपने अपने लिए दूसरे रास्ते अपना लें ! हम भी तो इन्सान हैं।”

केसर कुछ देर तक चुप रही। फिर बोली, “मेरा यहाँ दम घुट रहा है। मैं चाहती हूँ कि यहाँ से भाग जाऊँ, दूर बहुत दूर और इस घुटनदार महल का मुँह भी नहीं देखूँ !”

दासी ने आकर कहा, “छोटी राणी सा ! महाराजाधिराज पधारे हैं।”

“मैं जाती हूँ बड़ी राणी ! और सुनो, मैं तुम्हारी तीर्थयात्रा का शीघ्र ही प्रबन्ध करूँगी !”

जीत चली गई।

केसर शिव के बारे में सोचती रही।

×

×

×

५

...

पद्मसिंह जीतकुँवर के महल में ठहरा।

आने का कारण था—अनूपसिंह की वरपंठाई। ठकुराणी का प्रभुत्व प्रायः समाप्त-सा हो गया था। अब उसका स्थान जीतकुँवर ने ले लिया था। यह बात सर्वविदित न हो, पर चन्द आदमी यह अच्छी तरह जानते थे कि जीतकुँवर

का राजाजी के साथ अनुचित सम्बन्ध है। इस अनुचित सम्बन्ध के किसी के पास प्रमाण नहीं थे, फिर भी कुछ आदमी इस तरह बातें किया करते थे जैसे वे जो कुछ कह रहे हैं, आपों देखी ही कह रहे हैं।

जीतकुंवर के पास अधिकार आने के बाद अनूपसिंह के प्रति उसका रवैया बदल गया। उनसे ठकुराणी की तरह उसके जीवन को सुखी बनाने के लिए हर सम्भव प्रयास किया। अब वह उसके पास भी जाती थी। उसने अनूपसिंह को यह विश्वास दिलाया कि वह जो कुछ उसके धारे में सोचता है, गलत सोचता है। उस रात उसे जिन आदमी का भ्रम हुआ, वह भ्रम ही था।

लेकिन ठकुराणी ने अपने बेटे को जैसे ही जीतकुंवर की ओर झुकते देखा, वैसे ही वह पीड़ा से तिलमिला उठी। यह उसकी दूसरी पराजय थी। ऐसी पराजय जो उसे खुद कचोटने लगी। उसने अपने विश्वस्त आरमियों को इकट्ठा किया और वह विचारने लगी कि किस तरह वह उसके उत्सव में विघ्न डाले।

रात की ही शराब के दौर चलने लगे।

सारे महल में दिये जल रहे थे।

अनूपसिंह की वर्षगांठ थी। केसर भी बे-मन उसमें सम्मिलित हुई। डोलनियों के नृत्य के साथ-साथ बाह-बाह हो रही थी।

तभी विस्फोट-सा हुआ।

लोगों ने देखा—पद्मसिंह के पास बोतल फट पड़ी है। तुरन्त आदमी इधर-उधर लपके, कोई भी नहीं मिला। ठकुराणी ने तुरन्त भीतर से दासी को भेजा कि मामला क्या है?

बोतल किसने फेंकी, कोई नहीं जान सका। लेकिन साथ ही फेंकने वाले के इरादे का पता लग गया। बोतल में तेजाब था। वह इसलिए फेंका गया था कि राजाजी का खात्मा हो जाय, पर निशाना ठीक नहीं लगा और वे बच गये।

महफिल में सफाया और आतंक छा गया।

अनूपसिंह का मुँह पीला पड़ गया। वह समझ नहीं सका कि वह क्या करे? वह कुछ देर के बाद बोला—“मैं उसे बन्दूक से उड़ा दूँगा। अरे कोई

है ? उस नमकहराम को जो पकड़कर लायगा, उसे मैं सौ रुपये इनाम दूँगा ।”

पप्पासिंह का मुँह ऐसे हो गया था जैसे वह मरता-मरता बचा हो । विमूढावस्था के प्राणी की तरह उसके सारे अंग में जड़ता आ गई । वह कुछ नहीं बोला और सीधे उसने अपने दीवान को आज्ञा दी, “हमारी ‘सवारी’ इसी समय राजधानी को जायगी ।”

जीतकुँवर ने उससे अकेले में भेट की । उसने उसे बहुत समझाया कि आप इस तरह मत जाइए, पर पप्पासिंह नहीं माना । जब जीतकुँवर ने अपनी आँखों में आँसू भर लिये तब वह बोला, “मैं आपका हर अनुरोध मान सकता हूँ । मुझे आपके यहाँ रहने में प्रसन्नता ही होगी, लेकिन मेरा जीवन सबसे अधिक मूल्यवान है । यहाँ आप और ठकुराणी के कलह का मैं व्यर्थ ही शिकार हो जाऊँगा ।”

जीतकुँवर ने पप्पासिंह के पाँव पकड़लिये । रुँधे कण्ठ से बोली, “राजाजी, आप रंग में भंग मत कीजिए । यह नीच काम सिवाय ठकुराणी के कोई नहीं करा सकता । आप उसे पकड़कर नजरबन्द कर दीजिए ।”

“ऐसे मैं...?”

“मैं आपको ठीक कहती हूँ ।” उसने पप्पासिंह की बात को बिना सुने ही कहा, “यह वह आन और दम्भ वाली औरत है, जो दूट जायगी, पर झुकेगी नहीं । यह कभी न कभी आपके प्राणों की घातक बन सकती है ।”

पप्पासिंह कठोर हो गया । वह अपनी मुट्ठियाँ बाँधकर तेज स्वर में बोला, “मैं भोला नहीं हूँ । मैं सब समझता हूँ ।”

जीतकुँवर चुप हो गई ।

थोड़ी देर के बाद ठकुराणी आई । वह ममता भरे स्वर में बोली, “मुझे यह पता नहीं था । मैं यह नहीं जानती थी कि आपके साथ यहाँ ऐसा खतरनाक खेल खेला जायगा । मैं सच कहती हूँ कि इन दोनों बहुओं का कांग्रेस के साथ सम्बन्ध है । ये किसानों जैसे टुटपूँजिए आदिमियों को अपने मुँह लगाती रहती हैं । देखिए न, इस बार इन बहुओं ने किसानों से बेगार न करवा कर उन्हें मेहनताना दिया यह नया तरीका इन हरामखोरों को बल नहीं देगा ?”

पप्पासिंह चुप रहा ।

“जब मैं जानने ! इन तरह का अत्याचार हमारे लिए ही घातक सिद्ध होगा । राजाजी ! अगर मेरी बात मानें, हिजड़ों को राज्य न सौंपें ! राज्य और सत्कार सिर्फ कठोरता और शक्ति के नहीं चतुता है । मैं आपको.....”

“मैं सब जानता हूँ ।” कहकर पद्मसिंह चल गया ।

जीतकुँवर रात के अँधेरे में मोटर की पिछली सीट बत्ती देखती रही । केसर के डले धँसे बँधाया ।

जीतकुँवर ने कहा, “मैं इस बुढ़िया को जान से मार दूँगी ।”

और ठकुराणी अपने शराब के नशे में डूबकर अपनी खास दासी से बोली, “निशाना धूक गया वरना विरोध करने वाले को मैं समाप्त करा देती ।”

रात ढल रही थी ।

× × ×

ठकुराणी और जीतकुँवर की कलह ने केसर को और परेशान कर दिया । ठकुराणी अपने आदमियों को भेजकर पहले ही गाँव की बसूली करा रोती थी और जब जीतकुँवर पृथ्वी तो कहती कि मैंने वे रुपये कल जगह खर्च कर दिये ।

अनेक बहुएँ और ता सकती हूँ, पर तुमने एक पराई के कहने पर अपनी माँ का साप छोड़ दिया, यह हूब मरने के बारबर है। यूँ है तुम पर !”

बेचारा अनूपसिंह क्या करता ! वह अपना सा मुँह लेकर वापस आ गया।

× × ×

चैत्र का महीना लग गया था।

फागुन की मस्ती के पश्चात् चैत्र में गणगौर की तैयारियाँ होने लगती हैं।

प्रायः ही चन्द्र सौभाग्यवती स्त्रियाँ और सुकुमारियाँ वस्त्राभूषणों में सज-धज कर सिरों पर कलश रखकर गौरी की पूजा करने के लिए बगीचों में जाती हैं। बगीचों में वे अपनी जलेरियाँ (नव अंकुरित दूबों और फूलों का गुल-दस्ता) सजाकर गाती हैं—

बंदा थारे चानणे जी

पाणी गयी तलाव

हेडल कोडल को बेवड़ी जी

पाताल सी पणिहार

ओए म्हाँरी चन्द्र गोरजा

ओए म्हाँरी रूप गोरजा

पारो नैणों रो मुरमो सुवोणो।

आज केसर अपने शिव की याद में दुःखी होकर रात भर छत पर चहल कदमी करती रही। इधर उसकी भेट शिव से बहुत दिनों से नहीं हुई थी। वह चाहती थी कि वह कुछ दिन के लिए उसके पास जाये और भविष्य में जीवन की कुछ निश्चित योजना बनाये। वह उससे प्रार्थना करेगी कि वह क्यों नहीं गाँव आकर रहता। जीतकुँवर उसके निर्वासन की आशा भंग करा सकता है।

दूसरे ही दिन केसर जीतकुँवर के पास गई।

उसने उसको कहा, “मैं कुछ दिन के लिए तीर्थ-यात्रा करने जाना चाहती हूँ। आपने भी मुझे आश्वासन दिया था।”

जीतकुँवर उसके मन की बात समझ गई। यह बोली, “तुम जा सकती हो। मैं तुम्हें कहूँगी कि शिव से जरूर मिलना।”

केसर ने कोई जवाब नहीं दिया। वह चुपचाप वहाँ से चली आई और दूसरे ही दिन वह हरिद्वार जानो को तत्पर हुई।

वैशाखी में हरिद्वार का मेला होता ही है।

उसने राजधानी से दिल्ली पत्र डलवा दिया, “शिव तुम मुझे मिलो। मैं दिल्ली पहुँच रही हूँ।”

×

×

×

६

....

दिल्ली की थोड़ी-सी आबादी को एक पुरानी बस्ती।

शिव वहाँ रहता था।

गन्दा मोहल्ला और गन्दा वातावरण।

वहाँ छोटा सा स्कूल था। उसमें चन्द लड़के पढ़ते थे। उसी स्कूल के ऊपरी भाग में शिव रहता था।

महाराजा के निजी ‘हाउस’ में केसर ठहरी थी। स्टेशन पर उसने उसका बहुत इंतजार किया, पर शिव नहीं आया। उसका मन धक् से रह गया। कहीं वह गोरों के क्रोध का शिकार तो नहीं बन गया! वह यह जानती थी कि शिव आजादी का सिपाही है। उसका मालिक भी राष्ट्रीय विचारों का है। उसके हृदय में हलचल भव गई। वह अवश हो उठी।

उसने चिमन को बुलाया।

दोपहर का समय था।

चिमन ने गर्दन झुका कर कहा, “हुक्म सा?”

“तुम चुपचाप इस पते पर जाओ और शिव को तुरन्त बुला कर लाओ।”

केसर वह आज्ञा देते समय यह भूल गई थी कि जहाँ वह ठहरी हुई है, वह महाराजा का निवास-स्थान है।

चिमन धीमे स्वर में बोला, “मैं माफी चाहता हूँ । शिव का यहाँ आना सतरे से खाली नहीं है ।”

“क्यों ?”

“शिव को महाराजा ने देश-निकासी दे रखा है और अगर किसी ने यह बात यहाँ पहुँचा दी तो ठीक नहीं रहेगा । बदनामी के साथ खतरा भी हो सकता है ।”

चिमन का कहना ठीक था । इसलिए केसर विचारों में खो गई । गुजरता हुआ एक क्षण भी अब उसे शिव के बिना एक युग-सा लगता था । वह हर पल उसे देखने के लिए बेताब हो जाती थी ।

वह शिव से कैसे मिले ?

अन्त में उसके चेहरे पर मुस्कान खेल गई । सगा, जैसे उसने एक बहुत ही अच्छी बात सोच ली है ।

“हाँ, यही ठीक रहेगा !” उसने अपने आप मन ही मन कहा, “इसमें मजा भी बढ़ा रहेगा । शिव जब उसे अपने सामने यकायक पायगा तो हक्का-धक्का रह जायगा । बार-बार अपनी आँखों को मलकर वह यह सोचेगा कि वह कोई सपना तो नहीं देख रहा है ?” और दूसरे ही क्षण उसे ख्याल आयगा कि वह सपना नहीं देख रहा है, उसके सामने सचमुच केसर खड़ी है । उसके जीवन की सर्वस्व और उसकी कल्पना की प्रेरणा !

मधुर कल्पना के कारण उसकी पलकें भीम गईं और उसका चेहरा प्यार से दीप्त हो उठा ।

वह उठी और उसने कुछ क्षण के बाद चिमन से कहा, मैं बाहर जाती हूँ । तुम मेरे साथ चलो ।”

“लेकिन गाड़ी ?”

“नहीं-नहीं, हम दोनों साथ ही चलेंगे । हमारे साथ कोई नहीं जायगा ।”

तब वे दोनों चले ।

दिल्ली की वही गन्दी बस्ती ।

सप्ताटा ।

पूछताछ के बाद मालूम हुआ कि आज स्कूल की छुट्टी है और मास्टर जी ऊपर सोये हुए हैं ।

“छोटे मास्टरजी कहाँ हैं ?”

“छोटा-बड़ा एक ही मास्टर है।” उस लड़के ने जो स्कूल के फाटक के पास खड़ा था अपनी आँखें मिचमिचा कर कहा।

केसर कुछ देर तक वहीं खड़ी रही। चिमन उसे विस्मित दृष्टि से देख रहा था। उसकी आँखों में भय था और वह हर क्षण मन ही मन शंका प्रकट कर रहा था कि कुछ गजब होने वाला है। कहीं किसी ने हमें यहाँ देख लिया तो ठिकाने की बड़ी बदनामी होगी। मुझे तो वे लोग जिन्दा ही जला देंगे।

फाटक पर कुछ देर तक केसर निचले होठ पर अँगुली रखकर खड़ी रही। वह उस गन्दे मकान को देख रही थी। खुला, पर बहुत ही जीर्ण धर। घर के बीचोंबीच पीपल का पेड़। दीवारों का चूना उतर गया था, जिसके कारण ईंटें साफ नजर आ रही थी। पानी की मोरी के पास गन्दगी थी। उसकी बदबू के कारण वह नाक-भों सिकोड़ उठी और उसके मुँह से अनायास ही निकल गया, “कितना गन्दा है !”

तभी एक बालक सीढ़ियों से नीचे उतरा। बालक नंगा था—बिल्कुल नंगा। लेकिन उसकी दृष्टि ज्योंही अनजान केसर पर पड़ी, रयोही वह वापस कुछ अस्पष्ट ध्वनि करता हुआ ऊपर को ओर भागा।

केसर के सारे शरीर में अजीब-सी सिहरन दौड़ गई। वह सीढ़ियों पर चढ़ने को तैयार हुई। तभी डाकिया आ गया था। उसने एक चिट्ठी केसर के हाथ में दे दी। केसर ने चिट्ठी को पढ़ा तो हैरान रह गई। यह चिट्ठी उसी की अपनी थी। बहुत खूब। चिट्ठी भेजने वाली पहले, और चिट्ठी बाद में।

उसने मन ही मन सोचा, यह भी अच्छा ही हुआ, और भी मजा रहेगा। कहूँगी कि देखो तुम्हें चिट्ठी मिल चुकी थी, फिर भी नहीं आये। लेकिन.....

चिमन ने बीच में ही कहा, “राणी सा ! जल्दी कीजिए, कहीं कुछ गड़बड़ न हो जाए।”

“नहीं चिमन, कोई नहीं जानेगा इस घटना को। तुम यही पर ठहरो। मैं अकेली ऊपर जाती हूँ।”

“अच्छा, पर जरा जल्दी आइएगा।”

“हाँ-हाँ, वस उसे इतना कहना है कि हम आज रात की गाड़ी से हरिद्वार चलेंगे।”

कहकर वह ऊपर की ओर चली ।

सीढ़ियाँ कम चौड़ी थीं । केसर अपना हर पाँव बड़ी सावधानी से रख रही थी । दीवारों पर लगातार हाथ लगने से मैली-सी लकीर खिच गई थी । ऐसा लगता था कि उतरने वाला एक ही ढंग से उतरता है ।

केसर ऊपर चढ़ती गई ।

उसके पाँवों की आहट के साथ एक युवती ने झाँका । वह युवती जो नितान्त अपरिचित थी, सीढ़ियों के पास वाले दरवाजे पर आकर खड़ी हो गई । केसर को उस युवती ने जरा भी आकर्षित नहीं किया । लड़की काली थी और उसकी शक्ल-सूरत बड़ी साधारण थी । सौन्दर्य उसके कुछ अंगों को स्पर्श कर पाया था ।

केसर ने उसे प्रश्न भरी दृष्टि देखा और पूछा, "मास्टर शिव क्या यहाँ पर रहते हैं ?"

"हाँ !"

"उन्हें कहिए कि आप से केसर मिलने आई है ।"

"कहती हूँ ।" कहकर वह युवती भीतर चली गई । केसर उसकी पीठ को स्तब्ध-सी देखती रही ।

"यह कौन हो सकती है ?"

बस एक ही प्रश्न उसके मस्तिष्क में बार-बार छाता गया ।

तभी वह बालक फिर आया । वह भोला-भाला बालक उसे देखने लगा— अपनी पवित्र दृष्टि से । देखते-देखते उसके होठों पर मुस्कान नाच उठी । केसर ने उसके गाल पर हल्की-सी छपत जमा दी । बालक वापस भाग गया ।

शिव अभी तक बाहर नहीं आया था ।

केसर दरवाजे के भीतर चली गई ।

उसकी कल्पना और रोमांस मर-सा गया । उसने देखा—वह युवती शिव को हाथ पकड़ कर उठा रही है ।

शिव उठा ।

"क्या है ?"

"देखो—आपसे कौन मिलने आई हैं !"

“मुझे ?” चौंक पड़ा शिव और हड़बड़ा कर उठ बैठा ।

देखा—केसर है ! गम्भीर और मौन केसर !

“तुम ?”

“हाँ, मैं ! क्यों कोई आश्चर्य हो रहा है ?”

“नहीं तो ! आओ-आओ बैठो, इन्दिरा, दरी ला तो ।”

अपरिचित युवती ने दरी बिछा दी ।

“बैठो केसर ! यह बिना चिट्ठी तुम्हारा आना कैसे हुआ ? मुझे पत्र दे देती ।” वह अपने अन्तस् के भावों को रोककर साधारण भाव से बोला ।

केसर ने वह पत्र शिव के हाथ में सौंप दिया ।

युवती वापस उसके पास आ गई थी । वह केसर को तीखी नजर से देख रही थी । केसर को यह समझते देर ही नहीं लगी कि उसका आगमन इस युवती को प्रियकर नहीं लग रहा है ।

तब उसने पूछा, “आप कौन हैं ?”

“यह, यह मेरी धर्म-पत्नी !” शिव ने पेड़ के हिलते पत्तों की ओर देखकर कहा, “यह मेरी वहू है केसर, क्या कहें, कुछ परिस्थिति ही ऐसी थी कि मैं तुम्हें पत्र नहीं डाल सका ।”

केसर उठ खड़ी हुई ।

इन्दिरा ने आकर कहा, “ठहरिए न, आप इनके गाँव की हैं । इसलिए मैं आपकी भावज (भाभी) हुई । मैं अपनी ननद को बिना खाना खिलाये नहीं जाने दूँगी ।”

कानों में गर्म सीसा पिघल कर वह गया हो और उसने तमाम शरीर में पीड़ा पैदा कर दी हो, ऐसा महसूस हुआ केसर को । वह उठी और चलने को तैयार हुई । इन्दिरा को आश्चर्य सा हुआ ।

“मुझे माफ करना वहिन, अभी मैं जल्दी मे हूँ ।”

वह उठी ! शिव उसके पीछे-पीछे चला ।

एक बार फिर पुकारा, “सुनो तो केसर, देखो इस तरह मुझे दुःखी करके मत जाओ । मैं तुम्हें कहता हूँ कि.....!”

केसर एक पल के लिए रुकी । वह शिव के दूटे-फूटे घर से बाहर आ चुकी थी । उसने घृणा भरी नजर से उसकी ओर देखा ।

शिव करुण स्वर में बोला, “केसर, तुम समझती क्यों नहीं कि किसी बड़े कारणवश ऐसी दुर्घटना अप्रत्याशित व अनायास घटी है। मैं इससे थोड़ा भी सन्तुष्ट नहीं हूँ, लेकिन क्या करूँ ? एक कर्तव्य, एक वचन की बदौलत मुझे यह सब करना पड़ा।”

“मैं सफाई नहीं चाहती।” उसने कठोर स्वर में कहा।

“लेकिन तुम यह मत समझना कि मैंने तुम्हें धोखा दिया है।”

“इतना ही समझती हूँ—बाज अगर तुम्हारी तरह मैं करती तो तुम मुझे बेवफा, छिनाल और कुलटा न जाने क्या-क्या कहते ! खैर, तुम सुखी रहो। जीवन में अनेकों कष्ट झेन चुकी हूँ। उन कष्टों ने मुझे तोड़ा नहीं, पर शिव मैं इस आघात को नहीं सह सकूंगी ! यह मुझे तोड़ देगा !” कह कर वह रो पड़ी और धोड़ा-गाड़ी में बैठ गई।

चिमन ने पूछा, “क्या बात है ?”

“तुम्हारे शिव ने विवाह कर लिया।”

“हूँ !” चिमन की आँखें फट गयीं।

“पुरुष भेड़िया होता है, पुरुष ! न मालूम वह किस-किस तरह आदमी को खाता है, यह कोई नहीं जानता ! ओह ! यह पुरुष !”

वह निरन्तर रो रही थी !

×

=

×

७

....

केसर का शरीर ‘हाउस’ पहुँचते-पहुँचते टूटने लगा था। वह आकर बिस्तरे पर पड़ गई। उसके सिर में हथोड़े से चलने लगे। चिमन केसर के मना करने पर भी डाक्टर को बुला लाया। उसने जाँच करके इतना ही कहा, “कोई विशेष बात नहीं है।” उसने दवा की गोलीयाँ दीं।

लेकिन केसर का मन बहुत बीमार हो गया था। रह-रह कर उसे पुरानी

स्मृतियाँ याद आ रही थीं। शिव का प्यार और आलिंगन, प्रतिज्ञाएँ और वचन। ओह ! पुरुष सचमुच एक छल है। विश्वासघात है।

चिमन उसके दिल का दर्द जान गया। वह उसके पास आया, उसके पलंग के पास बैठ कर बोला “बड़ी राणी सा !”

“क्या है ?”

“आप के दुःख को मैं जानता हूँ।”

“नहीं चिमन, मेरे दुःख को मेरे सिवाय कोई नहीं जानता। इस मन का रहस्य अथाह है और इसकी पीड़ा भी अपार है। इसे दूसरा नहीं जान सकता।”

चिमन थोड़ी देर मौन रहा।

वह उठा और बाहर आया। आस-पास के बंगलों में मन्हे-भुन्ने बच्चे खेल रहे थे। वह उन्हें व्यर्थ ही देखता रहा। फिर आया और बोला, “बड़ी राणी सा, मैं थोड़ी देर के लिए बाहर जा रहा हूँ।”

“कहाँ ?”

“बस, मैं अभी आया।”

केसर ने उसकी ओर तेज निगाह से देखा और वह बोली, “तुम कहाँ जा रहे हो, यह मैं जानती हूँ। लेकिन आना जल्दी।”

“अभी आया।”

चिमन सीधा शिव के घर आया।

शिव उस बच्चे को कुछ खिला रहा था।

चिमन को देखते ही उसकी आँखें चमक उठी। वह तुरन्त बोला, “आओ, चिमन आओ ! मैंने समझा था कि तुम लोग मेरी सफाई सुने बिना ही चले जाओगे।”

शिव ने इन्दिरा को पुकारा। इन्दिरा से चिमन का परिचय कराया। परिचय के उपरान्त कुछ खिलाने के लिए कहा।

चिमन ने तुरन्त कहा, “मैं अभी-अभी खाकर आया हूँ।”

“बस रहने दो ! इन्दिरा जल्दी से कुछ बना ला !”

चिमन और शिव बैठ गये।

गहरा मौन।

एकाएक चिमन ने पूछा, "यह तुमने अच्छा नहीं किया शिव, बड़ी रागी सा पागल हो जायेंगे। यह यह सब नहीं सह सकते।"

"चिमन ! तुम नश्चिन्त होकर सुनो। तुम्हें मालूम हो जायगा कि मैंने यह सब क्यों किया।"

चिमन ने उसे प्रश्न भरी नजर से देखा।

शिव दूर तक नजर दौड़ाता हुआ आहिस्ते-आहिस्ते बोला, "घोड़े दिन पहले की बात है।"

"फिर यह अच्छा?"

"अरे मैं तुम्हें बताना ही भूल गया। यह तो मेरे पड़ोसी का लड़का है। इन्दिरा से बड़ा हिल-मिल गया है न ! इसलिए यह प्रायः हमारे पास ही रहता है।... देखो इन्दिरा, हम अभी वापस आते हैं।" वे दोनों बाहर आये।

चिमन ने उसे विस्मय से देखा।

थोड़ी दूर पर मुले मैदान में एक वृक्ष के नीचे बैठ कर शिव बोला, "कुछ दिन पहले की बात है। मैं, जैसा तुम जानते हो, गदा प्रगतिशील विचारधारा का रहा हूँ। जीवन के कटु और तीक्ष्ण अनुभवों ने मुझे थोड़ा-सा जल्दबाज बना दिया है। मुझमें भावुकता पहले से ही अधिक है।

जब मैं दिल्ली आया। तब मैं निराश्रय था। आत्मारामजी ने एक पत्र मुझे अपने मित्र रेवाप्रसाद के नाम लिख कर दिया था। रेवाप्रसाद खप्पा था। सन् १८५७ के बाद अंग्रेजों ने जिन पंजाबियों को दिल्ली में लाकर बसाया था, उनमें लाला के पूर्वज भी थे। मैं वह पत्र लेकर लाला के पास आया। लाला खुद राष्ट्रीय विचारों के थे। वे भी चाहते थे कि उनके देश से अंग्रेज चले जाएँ। वे मुझसे मिल कर बड़े प्रसन्न हुए और इन्होंने मुझे अपने यहाँ रहने की जगह दे दी।

पूरा मकान था।

ऊपर के कमरे में लाला, उसकी बीवी, लाला की इकलौती बेटी इन्दिरा रहती थी। नीचे के एक कमरे में मैं अकेला रहता था। लाला रात-दिन मेरी देख-रेख रखता था और मुझे कहता था, "तुम मेरे बच्चे हो, मैं तुम्हें किसी तरह की तकलीफ न होने दूँगा।"

मैं लाला का स्नेह पाकर गद्-गद् हो गया।

इन्दिरा सुबह-शाम पढ़ने जाती थी। वह कालेज में पढ़ती थी। इन्दिरा से ही थोड़ी फैशनेबुल थी। वह कालेज के सभी सांस्कृतिक आयोजनों में लेती थी।

वह मुझसे घण्टों बैठकर राष्ट्रीय आन्दोलन और नेताओं के बारे में चर्चा करती थी। वह मुझसे बहुत घुल-मिल गई थी।

एक दिन वह आई। दोपहर का समय था। लालाजी अपनी दुकान हुए थे।

मैं बैठा-बैठा पढ़ रहा था।

“शिव !”

मैंने नजर उठाई।

“शिव मेरे साथ जरा चलो।”

“पर कहाँ ?”

“चलो न एक जल्दरी काम है।”

उसका आग्रह मैं नहीं टाल सका। मैं उसके साथ चल पड़ा। वह मुझे सिनेमा ले गई, वह भी अँग्रेजी। मैं सिनेमा-गृह के पास पहुँचा, तब उसने घोला, “इन्दिरा एक बात कहूँ ?”

“कहो।”

“मैं अँग्रेजी नहीं जानता, फिर यहाँ क्यों लाई ?”

“मैं जानती हूँ।” उसने उत्तर दिया, “मैं तुम्हें समझाती रहूँगी। सिनेमा बहुत अच्छा है। तुम देखते रहना। मजा आयेगा।”

मैं उसका विरोध नहीं कर सका। सोच रहा था कि उनके बाप के मुँह पर बड़े अहसान हैं। अगर लालाजी मुझे आश्रय नहीं देते तो इस परदेश में मेरा बहुत बुरा हाल होता। अनजान जगह और अनजान लोग।

इसलिए मैं चाह कर भी इन्दिरा का अधिक विरोध नहीं करता था। हम सिनेमा ‘हाल’ में बैठ गये। वह मेरे समीप बैठी थी। कभी-कभी वह मेरे हाथों पर स्पर्श कर लेती थी और कभी वह मुझे कुछ समझाती-समझाती मेरा पाँव दबा देती थी। मैं कुछ देर तक इस तरह की हरकतों को देखता रहा। अन्त में मैंने उसे इतना ही कहा, “आस-पास भी लोग बैठे हैं।”

उसका मुँह फूल गया। वह सिनेमा खत्म होने तक मुझसे नहीं बोली। जब हम दोनों बाहर आये, तब मैंने उससे पूछा, “क्या तुम मुझसे नाराज हो?”

“नहीं तो।”

“फिर तुमने मुझसे बोलना बन्द क्यों कर दिया।”

“कोई किसी के खामखा नजदीक थोड़े आना चाहेगा।”

सच चिन्मन, मैं हतप्रभा रह गया। क्या इन्दिरा मुझसे प्यार करती है? यह प्रश्न मेरे मस्तिष्क में धीरे-धीरे घुन्घ की तरह छाता गया। मैं सारे रास्ते उससे नहीं बोला। मैं बार-बार यह सोच रहा था कि इन्दिरा को क्या हो गया? वह मुझे इतना क्यों चाहती है? मेरा उसका कोई मेल नहीं।

क्या कहूँ?

घर में आकर निढाल-सा बिस्तरे पर पड़ गया।

शाम को इन्दिरा खाना लाई। वह बहुत उदास थी। आँखें रोते-रोते सूज गई थी।

“आज तुम उदास लगती हो?” मैंने पूछा।

“नहीं तो।”

“फिर सदा की तरह तुम हँसी क्यों नहीं?”

“तुम मुझसे बोलना नहीं चाहते। शिव, क्या मैं इतनी बुरी हूँ? क्या मैं तुम्हें जरा भी पसन्द नहीं।”

ऐसी बात “नहीं,” मैंने कहा, “लेकिन मैं गरीब हूँ। प्यार करना मुझे नहीं आता। फिर मेरा बन्धन किमी और से बँध चुका है।”

मेरे इस कथन पर वह चौंकी। उसी समय मेरे मन में केसर की सीम्य मूर्ति नाच उठी। उसका भोला-भाला चेहरा, उदास-उदास-सी आँखें और आहें। चिन्मन, जीवन जहर बन गया है लेकिन मैं प्रण कर चुका था कि केसर को इस रहस्य का पता नहीं लगने देगा। मैं जानता हूँ, मुझे विश्वास है कि वह मुझे बहुत प्यार करती है। उसके हृदय में मेरे सिवाय कोई नहीं रह सकता। लेकिन कल सारा भेद खुल गया। चिन्मन, रात भर मैं सो नहीं सका। अन्धेरे में अतीत को टटोलता रहा, ढूँढता रहा, पर अतीत मुझसे कोसों दूर जा चुका था। मैं जानता हूँ केसर मुझे माफ नहीं करेगी। उसके हृदय को

मैं जानता हूँ—कसूरवार के लिए उसके हृदय में कही भी किसी तरह की क्षमा नहीं है।” कहते-कहते शिव ने आँसू बहा दिये।

चिमन उसे देखता रहा।

वह फिर बोला, “इन्दिरा मेरे पास आई। उसने मेरा हाथ अपने हाथ में लिया। बोली, “नहीं शिव, मैं तुम्हें नहीं छोड़ सकती.....हर रात तुम मेरे सपनों में आते हो, मैं तुम्हें हृदय से प्यार करती हूँ।” उसने मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर खूब सिया।” मैं हैरान ! यह सब क्या है, क्यों हो रहा है, किस कारण हो रहा है ?

धीरे-धीरे वह मेरे न चाहते हुए भी नजदीक आती रही।

एक बार वह आधी रात को कमरे में घुस आई।

चारों ओर सघनाटा था।

क्षीगुर बोल रहे थे। दूर-दूर तक तारों भरा आकाश दिखलाई पड़ रहा था। शान्त ! एकदम शान्त !

मैं उसे देखकर विमूढ़-सा खड़ा रहा। कुछ देर तक मेरी समझ में नहीं आया कि मैं क्या कहूँ।

“शिव !” उसने धीमे से कहा।

मैं बोलना चाहता था, पर बोला नहीं सका। मेरे शब्द कण्ठ में रुक गये। अजीब स्थिति थी। क्या कहूँ ? अगर लालाजी ने इसे इस समय देख लिया तो मेरा बुरा हाल होगा ! मान-मर्यादा, मेरे जीवन का ध्येय सबके सब माटी में मिल जायेंगे।

मेरा शरीर पसीना-पसीना हो रहा था।

वह मेरे पास आई। बोली, “प्यार करना कोई गुनाह नहीं है। प्यार ईश्वर है। प्यार मनुष्य के हृदय का मधुर वरदान है।”

उसकी भावुकता ने मुझ पर कोई विशेष प्रभाव नहीं डाला।

मैंने उसे अन्धेरे में ही अपने पास खींचते हुए कहा, “अगर ईश्वर प्यार का रूप है, अगर प्यार मनुष्य के हृदय का मधुर वरदान है तो उसे शरीर की बदबू से दूर रखो। ऐसा प्यार हृदय में बसता है।”

इन्दिरा उसी समय चली गई।

मैं समझ गया कि वह मुझसे नाराज होकर यहाँ से गई है। लेकिन मैं

उसे राजी भी कैसे कर सकता था ऐसी विकट परिस्थिति में। दूसरे दिन माताजी ने उदास स्वर में कहा, “आज उसकी तबीयत खराब है। कह रही है कि सिर में दर्द है।”

“सिर में दर्द है !” मैंने विस्मय से कहा, “कहीं जुकाम तो नहीं हो गया है ?”

“पता नहीं। मैंने जब पूछा तो बोली—मैं ठीक हूँ, पर वह ठीक नहीं है। जब वह किसी से नाराज होती है, तब वह इसी तरह रुठ जाती है। न किसी से बोलती है और न हँसती है। न खाना खाती है और न घर से बाहर निकलती है। बस, पड़ी रहती है।”

मैं कुछ नहीं बोला। चुगचाप चाय पीने लगा। माताजी कुछ देर तक खड़ी रही, फिर वह जाती हुई बोली, “तुम जाओ, शायद वह मान जाय।”

माताजी चली गईं। उनकी मुद्रा से लगता था कि वह अपनी बेटी का दुःख नहीं सह सकती हैं।

मैं चाय से जैसे ही निवृत्त हुआ, वैसे ही इन्दिरा के पास गया। इन्दिरा तनिके मे मुँह छुपाये लेटी थी।

मैंने समीप जाकर पुकारा, “इन्दिरा, इन्दिरा !”

इन्दिरा ने मुझे कोई जवाब नहीं दिया।

मैं कुछ देर तक खड़ा रहा। अन्त में मैंने उसके सिर को अपनी ओर घुमा कर जोर से पुकारा, “इन्दिरा, !”

इन्दिरा ने आँखें खोल कर कहा, “मर गई इन्दिरा !”

मैंने उसे स्नेह से कहा, “ऐसा क्यों कहती है ? इन्दिरा क्यों मर गई ? मरें उसके बैरी। इन्दिरा जीएगी हजार वर्षों।” मैंने तनिक उपहास मिश्रित स्वर में कहा। कदाचित् मेरे उपहास भरे स्वर से वह राजी हो जाय।

वह नटखट बालिका की तरह बोली, “मैं एक पल भी जिन्दा नहीं रहना चाहती। मैं मरना चाहती हूँ।”

मैंने उसके हल्की चपल सगाते हुए कहा, “यह कैसा पागलपन है, उठो, अब तुम बच्ची नहीं हो। अब तुम बड़ी हो गई हो। जरा समझदारी रखा करो। यह सब बचपना है। कहाँ मैं और कहाँ तुम !”

उसने मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया। उसे दुत्ताराते हुए वह बोली,

“जब तक तुम मुझे प्यार नहीं करोगे, तब तक मैं यहीं पर पड़ी रहूँगी। तुम-में, ऊँच-नीच, गरीब-अमीर, अनपढ़-शिक्षित....” यह सब प्यार के जोश में नहीं चलता।”

मैं कुछ नहीं बोला। चुपचाप वहाँ से चला आया।

वह मुझे ठगी-ठगी-सी देखती रही। धीरे से बोली, “परपर दिल !” कितनी चक्कानी हरकत ! एकदम अपरिपक्व।

मैं परपर का हो गया। मैं केसर को छोड़कर किसी को भी प्यार नहीं कर सकता था। मेरे लिए यह असम्भव था और है। प्यार मैं अब भी चिन्तन, केसर से ही करता हूँ। मेरी आत्मा के हर कोने में उसकी ही मूर्तियाँ हैं।

इन्दिरा भी पक्की हठी थी। उसने विस्तरा नहीं छोड़ा। न ही उसने कुछ खाया। अपने माँ-बाप की वह इकलौती बेटी है। बाप ने उसे समझाया कि कोई बात हो तो बताओ बेटी ! लेकिन इन्दिरा हर बार एक ही उत्तर देती थी “मेरी तबीयत ठीक नहीं है।”

उसकी माँ उसके कारण बड़ी दुःखी हो गई।

मैं भी उसको समझाने में असमर्थ रहा। जब एक दिन मैंने इन्दिरा की माँ को समझाया तो वह बोली, “बेटा, तुम मेरी चिन्ता को नहीं समझ सकते। मैं वह माँ हूँ, जिसकी अपनी एक सत्ता है। कही इसे कुछ हो गया तो मैं कहीं की भी नहीं रहूँगी।”

मैं उनके आँसू नहीं देख सका। परदेश में जिन आदमियों ने मुझे अपने बेटे की तरह पाला, उन्हें मैं कैसे भूल सकता हूँ ! लालाजी का पिता-तुल्य प्रेम। माताजी की असीम ममता !.... चिन्तन, मैं इन्दिरा के पास गया। इन्दिरा का मुख सूख गया था। आँखें भूख के कारण भीतर घँस गई थी।

मुझे देखते ही उसने अपना मुँह फेर लिया। मैं कुछ क्षण तक खड़ा रहा। देखता रहा। विचारता रहा कि मैं जैसे ही उसके प्यार को स्वीकार करूँगा, जैसे ही मेरी आत्मा मुझे धिक्कारेगी। हृदय में संघर्ष उठ रहा था। उस संघर्ष का वर्णन मैं नहीं कर सकता।

मैं सोचने लगा कि यह मन बड़ा अजीब होता है। इसे कोई नहीं समझ सकता। यह विचित्र है विचित्र, यह नारी सचमुच समीप वाले से ही लिपटती

है। ओह !... फिर मैं उसके कंधे को हिलाकर बोला, “तुम मुझसे बहुत नाराज हो न, तो मैं तुमसे माफी माँगता हूँ।”

उसने मेरी ओर नहीं देखा।

मैं क्या करता—कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

फिर भी बोला, “तुम मुझे गलत समझ रही हो। मैं किसी ओर को प्यार करता हूँ। मैंने किसी ओर को वचन दे रने हैं। इन्दिरा ! क्या मैं तुम्हारी ही तरह की एक नारी को घोसा दे दूँ ? वह मेरी वर्षों से प्रतीक्षा कर रही है। अपने जीवन के उन क्षणों को वह मेरे इन्जुअर में गँवा रही है, जो गुजरने के बाद कभी नहीं लौटते।”

मेरा इनना कहना था कि उसने एकदम मेरी ओर देखा।

मैंने देखा—उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही है।

“इन्दिरा, यदि ऐसा बन्धन न होता तो मैं तुम जैसी सुशील युवती के प्यार को कभी नहीं टुकराता !” और मैंने उसकी प्रशंसा करने के हेतु झूठ कहा, तुम जैसी युवती के प्यार को खोकर कोई भी आदमी सुखी नहीं रह सकता। वह बहुत अभागा है।” भावावेश में मेरी आँखें भी सजल हो उठी।

वह उठी। मेरे नामने खड़ी रही। मुझे अनिमेष दृष्टि से देखती रही। फिर उसने लपक कर मेरा हाथ अपने हाथ में लिया और उसे घूम लिया।

मैं कुछ नहीं बोला। मुझे निश्चिन्त देखकर वह बोली, “अब मैं आपको कभी नहीं सताऊँगी। आप के प्यार के बीच दीवार नहीं बनूँगी। मैं किसी नारी के हृदय को नहीं फुवस सकती।”

वह चली गई। उसने स्नान किया और फिर खाना खाने बैठी।

उसकी माँ और उसके पिता को विश्वास हो गया कि उसके दृष्ट होने का कारण मैं ही हूँ।

× × ×

मैं उस दिन घर देर से लौटा। रात्रि के शून्य पहर में लहरों के गर्जन का संगीत सुनने में यमुना तट चला गया। मुझे लगा कि मैं अपराधी हूँ, इस सम्पूर्ण जीवन में मैं प्रत्येक के हृदय को जलन ही दे सकता हूँ।

तारे पानी में दिवों की तरह भंचल रहे थे।

जनशून्य उस किनारे पर मैं अकेला बैठ रहा। भावनाओं में मैं बह गया।

मुझे लगा कि कोई मेरे पास आकर खड़ा हो गया है। मैंने उसे पहचान लिया, वह थी केसर।

लहरों की तेज हिलोरों के कारण तारे खो गये।

मैंने केसर का हाथ अपने हाथ में लिया और कहा, "तुम मेरी अन्तरंग हो, मेरे हृदय की प्रेरणा हो, मेरे मानस की कल्पना हो, मेरे जीवन के सुख-सुख की साधन हो।"

तभी कोई मस्ताह चिल्लाया, "अरे सम्भल जइयो, उबार आ रहा है।" "नाथों को बांध दो।"

मेरा सपना भंग हो गया।

यस्तु जगत में लौटते ही मैंने प्रतिज्ञा की— मैं अब केसर को अपना लूँगा। सारे बन्धन और सारे नियमों को तोड़कर मैं उसे अपने पास बुला लूँगा। केवल दो-चार मंत्र ही किसी के जीवन को चिर-बन्धन में बांधने की पर्याप्त नहीं। मैं सबको तोड़ दूँगा, तोड़ दंगा। बन्धन तो मन का होता है। समर्पण तो मन का होता है। मन की अस्वीकृति के साथ कोई भी बाह्य स्वीकृति सही नहीं। उसमें आनन्द नहीं।

रात को जैसे ही घर में घुसा, माताजी ने पूछा, "आज बड़ी देर कर दी शिव बेटा।"

"हाँ माताजी, मैं जरा काम से चला गया था।"

"कहाँ?"

"बस, एक मित्र के यहाँ।"

"इतनी रात बाहर रहना ठीक नहीं है।"

"आगे से न रहूँगा।" कहकर मैं सो गया।

सवेरे इन्दिरा चाय लेकर आई। वह मुझसे नहीं बोली। जब मैंने उससे कारण पूछा तो वह बोली, "जगत बहुत बड़ा है। मुझे भी कोई न-कोई मिल जायगा।" मैंने देखा उसमें मुझे प्राप्त करने का बड़ा रस्ता।

मैंने उससे कहस करना अच्छा नहीं

थी

इसके बाद चिन्तन, तुम्हें क्या ब

करती थी। वह मुझसे बड़ी उपेक्षा

मेरी बात का अथेला करके बोलती थी। मैं उससे परेशान हो उठा। आखिर मैं भी आदमी था, हर समय को कठोर बात मुझसे नहीं सही गई।

इधर वह रात को देर से आती थी। माँ कुछ कहती तो वह उससे भी झगड़ पड़ती थी। उससे नहीं झगड़ती तो वह अपने आपको कोसती थी। यह सब मेरे कारण हुआ। न मैं उसके घर आता और न उसका झुकाव मेरी ओर होता। सब कुछ मुझे अपने आप पर कभी-कभी बड़ा गुस्सा आता था। कभी-कभी झुंझनाहट। कभी-कभी मैं यह भी सोचता था कि मैं लालाजी का घर छोड़कर चला जाऊँ !... एक दिन मैंने अपना बिस्तर भी बाँध लिया, लेकिन लालाजी ने घर छोड़ने का कारण पूछा। मैं कुछ भी कारण नहीं बता सका। चुपचाप उनके सामने खड़ा रहा। मेरी गर्दन झुकी थी। मेरी आँखों में पश्चात्ताप था।

उन्होंने मेरे सिर पर हाथ रखकर पूछा, “क्या बात है ?”

“ऐसे ही जा रहा हूँ। आपको बहुत कष्ट दे लिया !”

“कष्ट कैसा बेटा ? मौलाद के स्नेह को कौन माँ-बाप कष्ट समझेगा ! मैं चाहूँगा कि तुम मुझे बहुत कष्ट दो, इतना कष्ट दो कि मेरा जीवन उन कष्टों से भर जाय।” कहते-कहते उनकी आँखें भर आईं।

मैं वापस आने कमरे में चला गया।

चिन्तन ! लालाजी के आत्मिक-बन्धन ने मुझे उस दिन उस घर से विदा नहीं होने दिया। यदि मैं उस दिन विदा हो जाता तो आज मैं उस नज़र से नीचे नहीं गिरता जिस नज़र ने मुझे अपनी रोशनी समझा था। मैं लालाजी के अटूट स्नेह में बँध गया। दिन गुज़रे... गुज़रते गये।

एक माह बाद की बात है।

मैं यमुना के किनारे टहलने चला गया था। इधर मुझे सन्तोष नहीं मिलता था। कुछ उद्विग्न रहता था।... इसका कारण यह था कि इन्दिरा का मन आजकल कहीं भटक गया था।

अब जब कभी उसे अपने पास बुलाता तो वह अजीब व्यंग्य में मुझसे बातचीत करती। उसका सहजा ही बदल गया था।

तो मैं तुम्हें कह रहा था कि मैं उस रात देर से आया। आते ही मुझे मालूम हुआ कि इन्दिरा अभी तक नहीं लौटी है।

सालाजी ने मुझे पूछा, "तुम्हें वह कुछ कह कर गई है ?"

"नहीं तो !"

"फिर कहाँ गई है ?"

"मैं कुछ कह नहीं सकता ।" कहकर मैं कपड़े बदलने भीतर चला गया । मैं काफी गम्भीर हो गया था । समझ नहीं पा रहा था कि आखिर इन्दिरा इतनी रात गये कहाँ रहती है ?

कपड़े बदलकर आया तो सालाजी अपनी पत्नी से पूछ रहे थे । उनकी पत्नी उदास बैठी थी ।

"इन्दिरा की माँ, वह तुम्हें कुछ कह नहीं गई ?" सालाजी ने पूछा ।

"नहीं ।"

"बड़ी अजीब लड़की है ।"

"अजीब हो या कुछ और, पर मैं आज उसे साफ-साफ शब्दों में कह दूँगी कि इतनी रात गये घर से बाहर रहना ठीक नहीं है । ये सब भले घर की लड़कियों के लक्षण नहीं हैं ।" माताजी के स्वर में आक्रोश था ।

सालाजी काफी समझदार और धैर्यशील व्यक्ति थे ।

उन्होंने माताजी की ओर देखा और परामर्श भरे स्वर में बोले, "देख इन्दिरा की माँ, कठोर रवैया बच्चों को खराब कर देता है । सदा आदमी को धीरज से काम करना चाहिए । तुम उसे धीरज से समझा देना ।"

उनमें काफी देर तक चर्चा होती रही । अन्त में सालाजी ऊपर जाकर सो गये ।

रात ढल रही थी ।

माताजी जहाँ बैठी थी, वही पड़कर झुर्राटे भरने लगी ।

लेकिन मुझे नींद नहीं आई । मैं अपने कमरे में चहल-कदमी करने लगा । मुझे यकीन था कि वह अपनी किसी सहेली के साथ फिल्म का अन्तिम शो देखने चली गई है ।

सालाजी के पास एक अन्धा भिखारी रहता था । वह बारह और एक के बीच में पानी माँगता था । जब उसने पानी माँगा तो मैंने बत्ती बुझा दी ।

मेरे कमरे में घोर अन्धेरा छा गया । उस अन्धेरे में भी मुझे इन्दिरा का

तमतपाया और नाराज मुख जलते अंगारे की तरह दिखलाई पड़ जाता था।
मेरे कल्पना लोक में केवल वह ही रह जाती थी।

लेकिन इस उद्विग्नता और परेशानी में भी मैं केसर को नहीं भूल पाया। घोर अन्धकार में दूरस्थ जलते दीप की तरह उसकी स्मृति का अपना अस्तित्व था।

केसर, सचमुच केसर है ! प्रभु के मस्तक पर शोभा पाने वाली अनुपम !
मैं क्या करूँगा चिमन, वह मुझे अब कभी भाफ नहीं कर सकती !”

वह कुछ तेर तक चुप रहा। फिर सिससिले को जोड़ता हुआ वह बोला,
“शान्त पहर था। मुझे नींद नहीं आ रही थी। अन्धकार में मैंने सोचा ज़रूर
था, पर मेरा मस्तिष्क किसी के कदमा की आहट सुनने को बेचैन था। हर
घड़ी मुझे ऐसा लगता था कि किसी के कदमों की आहट आ रही है।

आखिर वह आहट भी सुनाई पड़ी।

मैं सजग होकर खड़ा हो गया।

इन्दिरा घर के सामने आई। वह खड़ी रही। सड़क की धीमी बत्ती में
मैं उसके चेहरे के भावों को पढ़ने में सर्वथा असमर्थ रहा, किन्तु यह मैं अच्छी
तरह समझ गया कि वह परेशान है। क्योंकि वह दो-तीन बार दरवाजे तक
आई और चली गई।

मैं चुपचाप अंधेरे में उसकी गतिविधि को देखता रहा। कुछ देर बाद
वह दरवाजे के समीप आई और सुवक-सुवक कर रोने लगी। रोती-रोती वह
उठी और चलती बनी।

मैं उसके पीछे गया।

उसे बड़ी नाटकीयता से पकड़ा।

उसने मेरी ओर देखा, मैंने उसकी ओर; और वह फूट-फूट कर रो पड़ी।
मैं उसे अवोध बालक जैसी जिज्ञासा भरी नजर से देख रहा था।

उसने रुंधे कण्ठ से कहा, “मुझे छोड़ दो, मुझे छोड़ दो, शिव मुझे छोड़
दो !”

“लेकिन क्यों ?”

“क्यों, यह मैं तुम्हें नहीं बता सकती। तुम मेरे माँ-बाप को कह देना कि
आपकी बेटो इस संसार में नहीं है !”

मेरे पाँवों की जमीन सिसक गई ।

“आखिर घात क्या है ?”

“बात ? नहीं-नहीं, बस मुझे मरने दो !”

मैंने उसका हाथ मजबूती से पकड़ लिया और कहा, “जब तक इन ह में दम है, मैं तुम्हें किसी भी कीमत में नहीं मरने दूँगा !”

“तब शिव ?”

मैंने उसे और दृढ़ता से पकड़ा ।

“देखो !”

“विश्वास रखो इन्दिरा, मैंने आज तक किसी से झूठे वायदे नहीं किये ।

इन्दिरा मेरे कमरे में आई ।

मैंने प्रकाश कर दिया ।

वह धीरे-धीरे बोली, “शिव, मुझे दामा कर देना । मुझे मरने दो । मृत्यु के बिना मैं अब नहीं रह सकती ।”

“कारण क्या है ?”

“कारण सुन कर मुझसे घृणा तो नहीं करोगे ?”

“नहीं, नहीं । तुम तो यह अच्छी तरह जानती हो कि मैं गांधीजी के आदर्शों को मानता हूँ । प्राणी मात्र से प्यार करना मैं अपना धर्म समझता हूँ और पापी से पापी को स्नेह देना ही मानवीय धर्म है ।”

इन्दिरा दीवार पर नजर जमा कर बैठ गई । वह नहीं बोली । मैं उत्कण्ठा से उसके रहस्य को जानने के लिए बैठ गया ।

वह अन्त में धड़ी मुश्किल से बोली, “मैं माँ बनने वाली हूँ ।”

पहाड़ टूट पड़ा हो मुझ पर, ऐसा मुझे लगा ।

उसने मेरे पाँव पकड़ लिये । बोली, “मैं माँ बन रही हूँ । मुझे किसी ने छल लिया है । शिव, वह भक्कार मुझे छोड़कर कहीं भाग गया । कहता रहा, मैं तुमसे विवाह करूँगा । मैं उसके घर भी गई । पर वहाँ से मालुम हुआ कि उसने जो आलीशान मकान बताया था वह उसका अपना नहीं । उसमें वह एक कमरा किराये पर लेकर रहता था । तीन दिन से वह कहीं चला गया है ।” “अब मैं क्या करूँ शिव ?” “शिव, मुझे मरने दो । मैं अपना यह काला मुँह अपने माँ-बाप को नहीं दिखा सकती ।”

मैं घम-संकट में पड़ गया।

इन्दिरा ने मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, "मैं अब सिर्फ मर सकती हूँ। मरना ही चाहिए मुझ जैसी लड़की को।"

मेरी स्थिति बड़ी नाजुक थी। मेरी इच्छा हुई कि मैं फूट-फूट कर रो पड़ूँ। कहा गया हमारी नैतिकता ?

बड़ी मुश्किल से मैंने उसे कहा, "यह सब क्यों किया ?" उस समय केसर का मुख मेरे सामने नाच उठा। कुछ भी हो, वह कितनी महान है !

मेरा उत्तर पाकर वह घर से बाहर निकली। मैंने उसे रोका। कहा, "मैं अभी माताजी...!"

"इससे तुम्हें क्या मिलेगा ? खामखा मैं बदनाम होऊँगी। लोग मेरे नाम पर धृगा से धूकेंगे। क्या तुम चाहते हो कि मेरे कलंक की कहानी घर-घर की कहानी बन जाय ?" वह सुबक पड़ी।

वह चल पड़ी। मैं उसे देखता रहा। मेरे मन में संघर्ष, सिर्फ संघर्ष !

अधकार मद्धिम रोशनी को अपने में खीलता गया।

मुझे लगा कि इन्सानियत मरी जा रही है। मुझे महसूस हुआ कि मेरे सामने मानवता अपने प्राणों की भीख की झोली फैलाये निराश होकर जा रही है।...मैं भाववेश में भर उठा। भावुकता की चरम सीमा में मैं अपने आपकी भूल गया। केसर का ध्यान नहीं रहा। स्वजनों-परिजनों का ख्याल नहीं रहा। अचछे-बुरे परिणाम का विचार नहीं रहा। सिर्फ यही सोचता रहा कि मुझे एक प्राणी की रक्षा करनी है।...किसी का अहसान उतारना है। और मैंने उसे पकड़ लिया। उस समय मेरा प्रेम भी गुँगा हो गया था।

मैं कुछ नहीं बोला। वह मेरे सीने पर सिर रखकर रो पड़ी। मैं भी आँसू बहाता रहा।

फिर मैंने उसके बालों को सहलाकर कहा, "चलो, घर चलो, मैं तुम्हें कलंक के जीवन से बचाऊँगा।"

हम दोनों घर में आ गये। वह अपने कमरे में सो गई, लेकिन मैं उस रात एक पल के लिए भी नहीं सो सका। रह-रह कर मेरे मस्तिष्क में एक ही बात गूँज रही थी कि मैं क्या करूँ ?

आखिर रावेरा हुआ ।

इन्दिरा चाय लेकर आई ।

चाय बना कर उसने भुझसे कहा, "तुम पिताजी से बात करो ।"

"लेकिन...?"

"शिव, तू देवता हो । मैं कहीं की नहीं रहूँगी । यह सब मैंने गलत किया । जरूर मेरे भीतर कोई छिनाल औरत बैठी थी ।"

"इन्दिरा, मेरी हिम्मत नहीं होती !"

"क्यों ?"

"सोचता हूँ, सालाजी मुझे कितना कमीना समझेंगे । सोचेंगे कि मैंने इसे बच्चे की तरह पाला और उसने साँप की तरह मुझे डंका । इन्दिरा, मेरा चरित्र और नैतिकता भ्रष्ट हो जायगी । जरा अच्छी तरह तू सोच लो ।"

"मेरा जीवन केवल इसी सूरत से बच सकता है ।" और उसने मेरे पाँव पकड़ लिये । उसकी आँखों में आँसू आ गये । मैं क्या करता ? सब धिमेन, भुझसे कुछ भी करते नहीं बना । मैंने उसे उठाया और अपने सीने से चिपका लिया, जैसे वह मेरी अपनी है ।

तभी आ गई माताजी । उन्होंने हमें जैसे ही इस रूप में देखा कि वह सालाजी के पास भागती-भागती गई । फिर क्या था, घर में कुहराम मच गया ।

सालाजी ने भुझसे बहुत जलील किया । मैंने उन्हें साफ-साफ कह दिया, "हम दोनों विवाह करेंगे । इन्दिरा माँ भी बनने वाली है ।"

वे यह सब सुनकर पागल की तरह चीख पड़े ।

चीखते-चीखते उन्होंने कहा, "मेरे घर से निकल जाओ ।" और वे मेरे पास आये । मैं काँप गया । मेरा सारा शरीर पसीना-पसीना हो गया ।

उन्होंने भुझसे विचित्र दृष्टि से घूरा और वे चीखे, "ओ नीच, तुझसे एक कुत्ता भी अच्छा होता है, वह रोटी डालने वाले को कभी नहीं काटता और तूने अपने मालिक को ही बाटा ।" "जा, जा, मेरे घर से निकल जा !"

साचार हम दोनों यहाँ आ गये ।

कुछ दिनों के बाद ही इन्दिरा सीढ़ियों से गिरी । साथ में वह बच्चा भी गिर गया । "लेकिन जो बन्धन अग्नि के पवित्र अनुष्ठान के बीच हम दोनों

ने स्वीकार किया, वह अब नहीं टूट सकता। “चिमन ! तुम केसर को सारी बातें बता देना और कह देना कि मैं एक सिसकता हुआ दीया हूँ जो जल रहा है, काँप-काँप कर जल रहा है।”

चिमन उठ गया।

“ठहरो चिमन, कुछ खा सो और हाँ, केसर से कहना कि वह तुम्हें ही प्यार करता था, प्यार करता है, प्यार करता रहेगा।”

चिमन ने कहा, “मैं कुछ भी नहीं खाऊँगा। मन बड़ा दुःखी हो गया है। बड़ी रानी सा यह सब कैसे सहन करेंगी ? सच वह पागल हो जायेगी।

वह धीरे-धीरे शिव की आँखों से ओझल हो गया।

×

×

×

८

शिव ने घर में प्रवेश किया।

पड़ोसी का वच्चा चला गया था। घर में शून्यता छाई हुई थी। कभी-कभी झड़ियों की खनक से शून्यता भंग हो जाती थी। शिव उदास था।

इन्दिरा ने उसे जैसे ही देखा, वैसे ही बोली, “आप अकेले कैसे आये ? चिमनजी कहाँ गये ? मैंने उनके लिए खाना भी बना लिया है।”

शिव ने कहा, “वे चले गये, मैंने उनसे बहुत अनुरोध किया, पर वे नहीं रुके। कहने लगे कि मुझे एक जरूरी काम है।”

इन्दिरा ने कहा, “उन्होंने कह दिया और आपने जाने दिया। खूब मेहमानवाजी करते हैं। अरे, उन्हें दो घड़ी और रोक लेते, कौन-सी बारिश हो रही थी ! आखिर आप्रह-अनुग्रह भी कोई चीज होती है, पर आपने उन्हें रोका ही नहीं होगा। बड़े उदासीन हैं आप !”

शिव ने तनिक कठोर स्वर में कहा, “यह तुमने कैसे जान लिया ? मैंने इतनी देर उसे बातों में बहलाये रखा।”

इन्दिरा को उसकी बात पर विश्वास नहीं हुआ ।

वह शिव को खाना परोसने लगी ।

खाना खाते-खाते शिव ने उससे कहा, "दिलो, इन्दिरा, यह चिमन मेरे गांव का है, यह तुमसे हजार तरह की बातें पूछेगा, पर तुम इसे कुछ भी मत बताना ।"

'क्यों ?'

"बस, यूँ ही, ये लोग बड़े भोले होते हैं । हर बात का एक नया ही अर्थ निकालते हैं ।"

इन्दिरा के चेहरे पर रोष के भाव आ आये । वह बोली, "अब तुमने उन्हें मेरे बारे में सब कुछ बता दिया होगा शिव ! तुम पहले कितने अच्छे थे और आजकल तुम कितने बदल गये हो ! तुम्हारे स्वभाव में कठोरता आ रही है ।"

"मैं उपदेश सुनाना नहीं चाहता । मैं इधर बहुत परेशान रहता हूँ । इन्दिरा हम कितने व्यर्थ क्षणों में जी रहे हैं ।"

इन्दिरा खामोश हो गई । वह कुछ भी नहीं बोली ।

चिमन 'हाउस' पहुँचा ।

केसर उसकी प्रतीक्षा कर रही थी । चिमन चुपचाप उसके पास बैठ गया । दोनों थोड़ी देर मौन रहे । बाद में चिमन ने मौन तोड़ा, "यहाँ से कब चलने का विचार है ? मेरे ख्याल में हरिद्वार ही चला जाय ?"

"अब मैं हरिद्वार ही जाऊँगी ।"

"मतलब ?"

"जिसके जीवन की सब सृष्णाएँ मर जाती हैं, उसकी आखिरी तमन्ना हरिद्वार ही हो सकती है ।"

चिमन ने तडप कर कहा, "नहीं-नहीं ऐसा न कहिए बड़ी राणी सा, आप....!"

"तुम बोलते-बोलते घृप क्यों हो गये ?"

"मैं आपको यह बता रहा था कि शिव ने एक अत्यन्त मानवीय कार्य किया है । सचमुच वह देवता है । शिव की जगह अगर आप भी होती तो ऐसा

ही करतीं। क्योंकि आदमी का कर्त्तव्य और परिस्थिति उस समय उसको ऐसा करने के लिए विवश कर देते हैं।” चिमन ने गम्भीर स्वर में कहा।

“कैसे?”

चिमन ने सारी कहानी सुना दी। कहानी सुनाकर वह बोला, “अब आप बताइए कि वह क्या करता? उसके सामने कीन-सा रास्ता था? क्या वह उस परिवार की इकलौती कन्या को मरने देता?”

केसर के होठों पर तरस भरी मुस्कान नाच उठी।

चिमन उस मुस्कान का रहस्य नहीं समझ सका। वह प्रश्न भरी दृष्टि से उसे देखने लगी। बोली, “मैं आपका मतसब नहीं समझा! आप कुछ कहना चाहती हैं?”

“मैं यह कहना चाहती हूँ कि शिव ने जो भी कहा है, वह एक झूठी कहानी है। बात में जो नाटकीय तत्व हैं, वे श्रोता पर केवल प्रभाव डालने के लिए बनाये गये हैं। मुझे ऐसा लगता है कि शिव निरन्तर संघर्ष से क्लिष्ट हो गया और अब उसने शायद यह समझा कि जीवन भर मैं इसी तरह कैसे लड़ता रहूँगा, और फलतः उसने अपने जीवन को व्यवस्थित कर लिया है।” और तुम यह भी अच्छी तरह जानते हो कि वह आजकल कहानियाँ लिखता है। जो आदमी कहानियाँ भी लिखता है, वह अपनी और दूसरों की परिस्थिति के उतार-चढ़ाव से भी परिचित हो जाता है।” “क्या तुम एक बार शिव की कहूँ को यहाँ नहीं ला सकते?”

“क्यों नहीं!”

“फिर कल तुम उसे बड़ी होशियारी से लाना। देखो, शिव को पता न लगे। एकदम गुप्त ढंग से।”

चिमन ने कहा, “आप देखती जायें।”

दूसरे दिन संध्या के समय चिमन शिव के यहाँ पहुँचा। संयोग से शिव कहीं गया हुआ था। मालूम हुआ, “इस समय वे घूमने जाते हैं, यमुना-तट।”

चिमन ने इन्दिरा को बहा और उससे चलने की प्रार्थना की।

इन्दिरा तुरन्त चलने को उद्यत हो गई।

जब वे दोनों ‘हाउस’ पहुँचे, उस समय रात का हल्का अँधेरा छाने लगा था।

चिमन ने सारी कहानी इन्दिरा को सुनाई। इन्दिरा कहानी सुनती-सुनती रो पड़ी। उसकी आँखों में आँसू वह उठे। केसर ने पूछा “क्या बात है? अरे, तुम रोने क्यों लगीं?”

इन्दिरा ने कहा, “जब वे चिमन भैया से बात करके आये, तब उन्होंने मुझे कहा कि तुम अपने बारे में उन्हें कुछ भी मत बताना, तभी मैं समझ गई थी कि मामला गड़बड़ है। क्योंकि एक बार पहले भी उन्होंने एक किस्सा इसी तरह का मेरे बारे में बनाकर सुना दिया था। यह हर किस्से में यह साबित करना चाहते हैं कि इस सम्बन्ध में उनका कोई कसूर नहीं है। लेकिन बात बिल्कुल इसके विपरीत है, वहिन!”

केसर ने पूछा, “क्या बात है?”

इन्दिरा बोली, “मेरे बाप लाला जकर हैं, पर हैं बहुत गरीब।”

हम चार बहिनें हैं। हमारा एक छोटा भाई है। शिव अपने एक राजस्थानी दोस्त के यहाँ रहता था। उसका घर हमारे पड़ोस में था। वह भावुक था और बड़ी-बड़ी नैतिक आदर्शों की बातें किया करता था। वह हमारे मोहल्ले में पढ़ा-लिखा था, इसलिए लोग उसका सम्मान करते थे।

मैं उसे सचमुच अपने भाई की तरह मानती थी, और यह आपका शिव मुझे ‘बहन-बहन’ कहता था। मेरे हृदय में शिव के प्रति बड़ा आदर था और मैं उसका बहुत सम्मान करती थी। वह अपने भाइयों के लिए संघर्ष करता आया है। राजाजी ने उसे देश निकाला दिया है। यह हमारे लिए गौरव की बात थी।

वह हमारे लिए आदरणीय था।

उसने हमसे कभी भी आपकी चर्चा नहीं की।

इन्दिरा रुकी। केसर के चेहरे पर कठोर भाव उत्पन्न हुए। वह कुछ बोलना चाहती थी, पर वह नहीं बोली। चूपचाप जलती आँखों से देखती रही।

इन्दिरा ने पुनः कहा, “धीरे-धीरे हम दोनों नजदीक आते गये। शिव का दबदबा भी इधर उस मोहल्ले में फैलता गया। मैं आपको क्या कहूँ, वह मुझे बहुत ही प्यारा लगता था।

एक दिन आपके इस शिव ने मुझे पुकारा । अपने कमरे में बुलाया और जानती हो, उसने क्या किया ?.....मैं कुछ भी नहीं कर सकीं । मैं यह सोचती रही कि इसे क्या हो गया है ? इसने एकदम ऐसा नीच कदम क्यों उठा लिया है ?

वह मुझसे बोला, “मैं तुम्हें प्यार करता हूँ !”

लेकिन इसकी नीचता देखो—उस दिन के बाद भी यह मुझे ‘बहिन’ कहता रहा । अन्त में एक दिन मेरे माँ-बाप को उसकी खबर मिल गई और उन्होंने शिव को बड़ा फटकारा । तब आपके शिव ने उनके सामने शादी का प्रस्ताव रखा और गरीबी से मजबूर मेरे बाप के सामने दूमरा चारा न था । अतः हमारा विवाह हो गया और हम यहाँ आकर रहने लगे ।

सच बात यह है । लेकिन शिव सदा अपनी महानता का प्रदर्शन करने हेतु कोई न कोई नयी कहानी गड़ कर सुना देता है । लिखने की प्रवृत्ति ने उसे हर बात में कुछ नवीनता लाने की आदत डाल दी है और वह मेरे बारे में बहुत ही ऊटपटांग कहा करता है । मैं सोचती हूँ कि अब इनका स्वभाव ही ऐसा हो गया है ।”

इन्दिरा की बात सुनकर केसर का मन खानि से भर आया । वह उठी और उसने भीतर जाते हुए कहा, “वह तुम्हारा पति है, इसलिए वह क्षम्य है, अगर वह केवल मेरा परिचित होता तो मैं उसे जान से मार देती । लेकिन तुम यकीन रखो, मैं तुम्हारे सुहाग-सिन्दूर को कभी भी नहीं पोंछूँगी । पर मुझे तुम दोनों की बातों पर जरा भी विश्वास नहीं आता । पता नहीं, कौन झूठ बोल रहा है और कौन सच । मुझे ऐसा लग रहा है कि तुम दोनों ही सफेद झूठ बोल रहे हो । सत्य कुछ और ही है । चिंमन इन्दिरा को घर पहुँचा आ ! मुझे अब इनमें न दिवाचस्पी है और न स्नेह । दया भी नहीं है । ये बड़े ओछे लोग हैं । धू है इन पर.....”

इन्दिरा घर पहुँची तो शिव ने पूछा, “कहाँ गई थीं तुम ?”

इन्दिरा ने झूठ कहा, “अपने घर ।”

शिव को सन्तोष हो गया ।

×

×

×

रात बड़ी येर्चनी से गुजरी ।

केसर का विशोद्दी मन उम गता पल भर के लिए नान्त न रह सका। यह हर पल भाग कर शिव को दृष्ट देना चाहती थी। उसे बहुत दुःख था कि शिव अपने जीवन के निरन्तर संपर्क को इस परिणाम पर बदलेगा। वह ऐसा सोच भी नहीं सकती थी। ऐसी उमने मन में कल्पना ही नहीं की थी। उसरी माँ का दर्दनाक जीवन, उसकी अपनी गुमाभी और विमानों के लिए अपने प्राणों को हथेली पर रखने की प्रवृत्ति, उन सबका क्या हुआ ?

यह सोचती रही—आदमी एकदम इतना बदल जाता है ! इंसान से शैतान ! यह अपने पिछले जीवन के समस्त कार्य-कर्मों पर इस तरह पर्दा डाल देता है, जैसे कुछ हुआ ही नहीं। ओह, ये कौन आदमी होते हैं !

यह रात्रि उसके लिए न रातम होने वाली महारात्रि बन गई।

उसे बार-बार पिगत का स्मरण हो उठता था।

तब उसने विश्लेषणात्मक दृष्टि से शिव का अपने प्रति प्यार देखा। जब-जब शिव को मीठा मिला, उसने केसर को प्यार दिया। दरअसल भावुकता उसके मन की बड़ी दुर्बलता थी। फिर उसके समस्त जीवन के संपर्क के अन्त की कोई अदृष्टि नहीं थी, और उसने अपने आपको इस परिस्थिति के हवाले कर दिया कि उसे भी अब सैठ हो जाना चाहिए।

लेकिन फिर.....!

केसर को लगा कि उसने जिस आदमी को अपने लिए चुना था, वह आदमी सर्वथा अनुपशुक्त था। उसके मन में संधर्ष का कोई ठोस आधार नहीं था, एक भावुकता थी, और यह निराधार भावुकता का ही परिणाम है कि आज वह इतनी पीड़ा को सहन कर रही है।

रात कैसे बीती, यह वह नहीं जान सकी।

सवेरे वह बहुत देर से उठी।

× × ×

चिमन शिव को बुला लाया।

शिव प्रतीक्षा-गृह में बैठा अपने को भावी संधर्ष के लिए तैयार कर रहा था। बार-बार वह उन वाक्यों को दोहरा रहा था, जो वह केसर से कहना चाहता था।

केसर आई।

शिव ने उसकी ओर देखा और बोला, “मुझे क्षमा कर दो। मानवीय कर्तव्य के पीछे मैंने अपने और तुम्हारे प्यार को बलि दे दी।”

केसर ने कोई उत्तर नहीं दिया। चुपचाप उसके पास बैठ गई।

“मैं तुमसे माफी माँगने आया हूँ। मुझे तुम गलत न समझना। मैंने जीवन में केवल तुम्हें ही प्यार किया।”

केसर हठात् उठ खड़ी हुई। उसका चेहरा लाल था। होठ सख्ती से उसने भींच रखे थे। वह जल्दी-जल्दी चहल-कदमी करने लगी, मानो उसके अन्तस् में भीषण हाहाकार है। जैसे वह अपने अन्दर उठते हुए अशांत सागर पर काबू पाने में असमर्थ है।

शिव अपना पूर्व योजनाबद्ध कार्यक्रम पेश करता रहा, “मेरे सामने एक असहाय-निर्दोष युवती का कुम्हलाया मुख था। उसे मेरे ही जैसे किसी पुरुष ने छला था, और वह मेरे पाँव पकड़ कर मुझसे जिन्दगी की भीख माँग रही थी। उसका प्यार, उसके बाप के अहसान और उसकी ममता, मैं क्या करता केसर? मुझसे कुछ हुआ नहीं। मैं भावावेश में वह गया।”

“लेकिन तुमने इसे छिपाया क्यों?”

“इसलिए छिपाया, क्योंकि मुझे विश्वास था कि तुम इस चोट को सहन नहीं कर पाओगी। तुम पागल हो जाओगी।”

“और तुम्हारी माँ की दर्दनाक मृत्यु, तुम्हारे जीवन के उद्देश्य, क्या एक लड़की के जीवन से अधिक महत्वपूर्ण नहीं थे?”

शिव चुप रहा।

“तुम चुप क्यों हो?”

“कह तो रहा हूँ कि जो भावावेश में हो गया, उसके लिए मेरे पास कुछ भी सफाई नहीं है।”

केसर का धैर्य जाता रहा। यह आदमी कितना बग रहा है। उसका रूका हुआ गुस्सा फूट पड़ा। वह झपट कर उसके पास आई। उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में छून उत्तर आया और उसने शिव के मुँह पर थप्पड़ों की चौछार कर दी। यह पागलों की तरह चिल्लाई, “झूठे भक्कार, बहुशी, दरिन्दे! तुम मुझसे इतना बड़ा झूठ बोल सकते हो? तुम मास्टरजी और राष्ट्रीयता की बड़ी-बड़ी बातें करते रहे? कहाँ है तुम्हारा वह मास्टर?... तुम इन्दिरा जैसी भोली लड़की

के साथ जयदंस्ती करके अपने आपको मानवता का पोषक बना सकते हो ? कमीने, तुम्हें कभी शान्ति-सन्तोष नहीं मिलेगा । तुम्हारी माँ की आत्मा और मेरा हृदय तुम्हें सदा बद्धुआ देगा । जा मैं एक शब्द भी सुनने को तैयार नहीं हूँ । मैं कहती हूँ—चला जा, और अपना मुँह मुझे कभी मत दिखाना । झूठे कहों के, कितनी अच्छी और प्रभावशाली कहानी बना सकते हो ! इन्दिरा सत्यपति की घेटी ? छिः वह एक मामूली लड़की.....”

शिव उठ खड़ा हुआ । वह कुछ नहीं बोला । उसे महमूस हो गया कि इन्दिरा ने केसर के समक्ष अपने को निर्दोष प्रमाणित करने हेतु वही उसकी झूठी कहानी “गसत आदमी” सुनादी है । खैर यह अच्छा ही हुआ, यह मुझे धूना करे यही उत्तम ! औरत भी भर्द की बेवफाई नहीं सह सकती । यह धूना इसे मेरे प्यार से अलग कर देगी । वह भी कही अपने आपको रोकेगी । उसके जीवन में भी कोई ठहराव आयेगा । वह रो उठा । बेचारी इन्दिरा ! हे ईश्वर यह तुम किस जन्म का दण्ड दे रहे हो ?

केसर ने उसे जाते-जाते कहा, “मेरी इच्छा हुई कि तुझे गोली से उड़ा दूँ, पर उस इन्दिरा का एयास ही मुझे रोक रहा है ।.....जा.....निकल जा !”

और उसके जाते ही केसर फूट-फूट कर रो पड़ी । वह रोती रही, सिसकती रही ! आज उसने न खाना खाया और न पानी पिया । सिर्फ कलपना, तड़पना और सिसकना ।

अन्त में चिमन उसके पास आया ।

“बड़ी राणी, तुम में बड़ा साहस है । तुम भी”

“भैया ! आज मैं जीवन का सब कुछ हार गई हूँ । अब मुझे लज्जकार चाहिए । मैं मरना चाहती हूँ । मैंने ठकुराणी होकर अपने शौर्य, कर्तव्य और मान-मर्यादा को छोड़कर शिव से एकनिष्ठ प्यार किया, मैंने सतीत्व और नारीत्व की हत्या करके शिव को अपने मन-मन्दिर का स्वामी बनाया, क्या यह दिन देखने के लिए ?”

चिमन ने बात को बदलते हुए कहा, “हम लोग कब तोर्य-यात्रा को चलेंगे ?”

केसर की आँखों में आँसू आ गये। वह विगलित स्वर में बोली, “मेरी यात्रा समाप्त हो गई है। मेरी आशा के सपने टूट गये। अब मैं लौट जाऊँगी। असौम आनन्द की खोज में मैं निकली थी, उस आनन्द के उद्गम का ही अन्त हो गया। बचपन की बात छोड़ दो, पर यौवन के प्रारम्भ में मैंने यह प्रतिज्ञा की थी कि चाहे कितनी प्रतीक्षा करनी पड़े, चाहे मुझे कितना ही विरोध सहना पड़े, पर मैं एक दिन शिव को अपना बना कर रहूँगी। मैं अपनी निर्भयता और साहस में उन लड़कियों को नया सबक दूँगी, जो बेचारी एक बार इन ठाकुरों के चंगुल में फँसकर उग्र भरनरक का जीवन बिताती हैं।”

“मैं अतीत की विस्मृति पर नये का निर्माण करूँगी। लेकिन शिव इतना कमीन होगा, यह मैं नहीं जानती थी। उसने किये-कराये पर पानी फेर दिया। जो चाहता है कि मैं यमुना में झूद कर अपनी इह-लीला समाप्त कर दूँ। इस अचानक ववण्डर ने मेरे चारों ओर प्रकाश को खील लिया है। अब हर साँस व्यर्थ-सी लगती है।” “चलो, हम वापस ठिकाने चलेंगे।”

“इस तरह....?”

“यात्रा समाप्त हो गई।”

विमन ने कोई उत्तर नहीं। वह वापस जाने की तैयारियाँ करने लगा।

×

×

×

९

...

जीतकूँवर ने एक नया कारिन्दा रखा, जिसे ठकुराणी ने कभी किसी अपराध में अपने ठिकाने से निकाल दिया था। ठकुराणी का कहना था कि, “वह आदमी अच्छा नहीं है, उसने गाँव वालों के साथ गद्दारी की थी। उसने एक अंग्रेज अफसर को ठिकाने के पत्र दिये थे तथा स्वर्गीय ठाकुर सा का हार भी चुरा लिया था। वह गाँव के राज दूसरों को बताता था।” जीतकूँवर ने

जीतकुँवर सिगरेट मुँह में डाले अपनी दासी से बात करके हँस रही थी। वह अपनी दासी को कह रही थी, “वह बूढ़ी खूबसूरत मुझ पर रोब जमाने लगी। कहने लगी—चन्द्रपाल को निकाल दो। मैंने कहा—नहीं। मेरा इतना कहना था कि मुझे आँखें दिखाने लगी। मैंने कहा—कि मैं आपकी आँखें बाहर निकाल लूँगी। बुढ़िया मेरे सामने गिड़गिड़ाने लगी। मैं उसे ठोकर मारकर लौट आई।” इतना कह वह हँस पड़ी।

ठकुराणी ने यह सब सुना। वह खून का घूंट पीकर रह गई। वह उसी समय अनूपसिंह के पास आई। अनूपसिंह भोपालसिंह के साथ शतरंज खेल रहा था। वह नथे में था।

ठकुराणी ने शतरंज को उठाकर भोपालसिंह को बाहर निकाला। वह बेचारा सकपका कर बाहर भागा।

“छोटे ठाकुर !”

“क्या है ?”

तुम्हें क्या हो गया है, देखो तुम्हारी वज्र मेरी किस तरह झिल्ली उड़ा रही है। मैं उसका खून पी जाऊँगी !”

“पी जाओ !” कहकर वह तन कर बैठ गया, “मैं तुम दोनों से परेशान हो गया हूँ।”

“ओह !” वह क्रोध से अपने होठों को काटती हुई बाहर आई। बाहर आते ही वह वापस जीतकुँवर के पास गई। बोली, “मेरी तुमसे प्रार्थना है कि तुम चन्द्रपाल को अपने यहाँ से निकाल दो !”

“मैंने कह दिया न, कि मैं ऐसा नहीं कर सकूँगी।”

“मैं वह अपमान सह सकती हूँ जिसकी महल के बाहर चर्चा न हो सके, पर मैं वह अपमान नहीं सहूँगी जिसका एक अपने आदमी से सम्बन्ध है, जिसके कारण मेरी शान-आन में बट्टा लग जाय। छोटी राणी ! मैं ठकुराणी हूँ। मेरे रोम-रोम में दम्भ भरा है। मेरे जीवन में बड़े-से-बड़ा खेल खेला है। मुझे कठोर न करो। मुझे गुस्से में मत लाओ। हर बात की एक सीमा होती है।”

“आप मुझे कितना ही उपदेश क्यों न दें, पर मैं चन्द्रपाल को नहीं निकालूँगी। यह मेरा अन्तिम फैसला है।”

जीतकुँवर द्वारा स्पष्ट उत्तर पाकर ठकुराणी बाहर चली आई।

उसकी एक भी नहीं सुनी और उसे नहीं हटाया । तब ठकुराणी भड़क उठी और उसने उसी समय जीतकुंवर को अपने पास बुलाया ।

जीतकुंवर आई ।

ठकुराणी ने शराब पी रखी थी । इस लांछित-अपमानित जीवन में उसका सहारा अफीम और शराब ही था ।

जीतकुंवर उसके पास बैठ गई । उसने भी सिगरेट सुलगा ली ।

“आपने मुझे क्यों याद फरमाया है ?”

“छोटी राणी, मैं चाहती हूँ कि तुम चन्द्रपाल को अपने पास मत रखो । जानती हो, मैंने उसे गाँव से निकाल दिया था । मैं नहीं चाहती कि यह आदमी यहाँ रहे ।”

“लेकिन मैं इसे रखूँगी । यह बहुत चतुर है ।”

“इसे तुम नहीं रख सकोगी !”

ठकुराणी के तौर एकदम बदल गये, “छोटी राणी, आखिर मैं तुम्हारी सास हूँ । आखिर मैं वह धीरत हूँ, जिसके हुक्म की अवज्ञा करना हँसी-खेल नहीं ।... मैं कहती हूँ कि उस नमक-हराम को महल से अभी निकाल दो । मेरी इस आज्ञा का तुम्हें पालन करना ही होगा ।”

“मैं ऐसा नहीं कर पाऊँगी !”

“बहू !” ठकुराणी का चेहरा लाल हो गया ।

“यह दीवानजी की सिफारिश पर यहाँ आया है । उन्होंने उसकी जमानत दी है और मुझे ठिकाने की भलाई के लिए ऊपर वाले अफसरों को हुश रखना ही पड़ेगा ।”

“और मुझे खुश नहीं रखोगी ?”

“मैं मजबूर हूँ ।” कहकर जीतकुंवर वापस आ गई ।

ठकुराणी यह उपेक्षा नहीं सह सकी । उसका अन्तस् अपमान के कारण हाहाकार कर उठा । वह उठी, उसने और शराब पी ।

वह सोचने लगी—“इस बहू के कारण मेरा दबदबा और शौर्य समाप्त होता जा रहा है, अग्यथा यहाँ और महाराज के यहाँ मेरी तूती दोसती थी । यह मेरी दुश्मन है, दुश्मन !”

वह उठी । फिर जीतकुंवर के पास गई ।

जीतकुँवर सिगरेट मुँह में डाले अपनी दासी से बात करके हँस रही थी। वह अपनी दासी को कह रही थी, “वह बूढ़ी खूबसूरत मुझ पर रोब जमाने लगी। कहने लगी—चन्द्रपाल को निकाल दो। मैंने कहा—नहीं। मेरा इतना कहना था कि मुझे आँखें दिखाने लगी। मैंने कहा—कि मैं आपकी आँखें बाहर निकाल लूँगी। बुढ़िया मेरे सामने गिड़गिड़ाने लगी। मैं उसे ठोकर मारकर सौट आई।” इतना कह वह हँस पड़ी।

ठकुराणी ने यह सब सुना। वह खून का घूँट पीकर रह गई। वह उसी समय अनूपसिंह के पास आई। अनूपसिंह भोपालसिंह के साथ शतरंज खेल रहा था। वह नशे में था।

ठकुराणी ने शतरंज को उठाकर भोपालसिंह को बाहर निकाला। वह बेचारा सकपका कर बाहर भागा।

“छोटे ठाकुर !”

“क्या है ?”

तुम्हें क्या हो गया है, देखो तुम्हारी बहू मेरी किस तरह खिल्ली उड़ा रही है। मैं उसका खून पी जाऊँगी !”

“पी जाओ !” कहकर वह तन कर बैठ गया, “मैं तुम दोनों से परेशान हो गया हूँ।”

“ओह !” वह क्रोध से अपने होठों की काटती हुई बाहर आई। बाहर आते ही वह वापस जीतकुँवर के पास गई। बोली, “मेरी तुमसे प्रार्थना है कि तुम चन्द्रपाल को अपने यहाँ से निकाल दो !”

“मैंने कह दिया न, कि मैं ऐसा नहीं कर सकूँगी।”

“मैं वह अपमान सह सकती हूँ जिसकी महल के बाहर चर्चा न हो सके, पर मैं वह अपमान नहीं सहूँगी जिसका एक अपने आदमी से सम्बन्ध है, जिसके कारण मेरी शान-आन में बट्टा लग जाय। छोटी राणी ! मैं ठकुराणी हूँ। मेरे रोम-रोम में दम्भ भरा है। मेने जीवन में बड़े-से- बड़ा खेल खेला है। मुझे फटोर न करो। मुझे गुस्से में मत लाओ। हर बात की एक सीमा होती है।”

“आप मुझे कितना ही उपदेश क्यों न दें, पर मैं चन्द्रपाल को नहीं निकालूँगी। यह मेरा अन्तिम फैसला है।”

जीतकुँवर द्वारा स्पष्ट उत्तर पाकर ठकुराणी बाहर चली आई।

ठकुराणी अपने कमरे में आई और उसने फिर शराब पी। उसे लगा कि आज उस पर हर चीज व्यंग्य कर रही है। उसे कह रही है, "तू कुत्ता है, तेरा यहाँ कोई अस्तित्व नहीं।""

उसने बन्दूक उठाई और वह सीधी उस कमरे की ओर बढ़ी जिस कमरे में चन्द्रपाल बैठा था। वह बन्दूक में कारतूस भर कर धीरे-धीरे जा रही थी। चन्द्रपाल कागजात देख रहा था। उसे क्या मालूम था कि कोई अनिष्ट होने वाला है। ठकुराणी बन्दूक तान कर दरवाजे के बीच खड़ी हो गई।

कमरे में चार खिड़कियाँ थीं, पर चारों के आगे मजबूत लोहे की सनाख लगी थी। चन्द्रपाल उसे देखते ही हाथ ऊँचे करके खड़ा हो गया। उसका चेहरा सफेद पड़ गया।

ठकुराणी ने दहाड़ कर कहा, "नीच ! आज फिर तुम मुझे अपमानित करने के लिए यहाँ आ गये ? क्या तुमने यह नहीं सोचा था कि एक दिन तुम यही से गद्दार समझकर निकाले गये थे।""खबरदार ! यहाँ से भागने की चेष्टा की तो ! मैं तुम्हें आज जिन्दा नहीं छोड़ूँगी। तुम्हें क्या पता कि तुम्हारे कारण मुझे कितना तिरस्कार सहना पड़ा। तुम्हें स्वर्गीय ठाकुर सा ने एक दिन कहा था न कि अब की बार तुमने इस ठिकाने में कदम रख दिया तो मैं गोली से भूत दूँगा। वे आज नहीं हैं, लेकिन मैं तुम्हें जिन्दा नहीं छोड़ूँगी। मैं उनके वचनों को पूरा करूँगी।"

"नहीं-नहीं, मुझे छोड़ दीजिए। मैं आपके चरणों में""।"

"खामोश !"

उधर एक दासी ने भागकर इस घटना की खबर जीतकुँवर को दी। जीतकुँवर भी होश खो बैठी। वह भी पिस्तौल लेकर दौड़ पड़ी। उसने दूर से आवाज लगाई, "ठकुराणी सा, ठकुराणी सा, रुक जाइए, मैं कहती हूँ कि रुक जाइए।"

ठकुराणी ने एक बार उसकी ओर तेज निगाह से देखा। जीतकुँवर उसकी ओर झपट रही थी। उसने तुरन्त कहा, "मैं तुम्हारी आज्ञा नहीं मान सकती। मैं इस साँप के बच्चे को जिन्दा नहीं छोड़ सकती !"

घाय !

एक चीख निकली और चन्द्रपाल लुढ़क गया।

जीतकुंवर का खून खोल उठा ।

वह क्रोध में अन्धी बन गई । उसने आव देखा न ताव ठकुराणी पर, अपनी सास पर, गोली दाग दी । ठकुराणी ने एक बार बन्दूक छोड़ने का और यत्न किया, पर पिस्तौल की गोली उसके गले के पास लगी थी, इसलिए उसे चक्कर आ गया और वह दीवार के सहारे गिर गई ।

जीतकुंवर पत्थर की तरह निश्चल हो गई ।

ठकुराणी के पास खून की धारा वह निकली ।

जीतकुंवर उसके पास गई ।

तभी मोटर आकर रुकी । उसमें से केसर उतरी । उसने इस नज़ारे को देखा तो वह हृत्प्रभ-सी रह गई । सारे मौकर इकट्ठे हो गये थे ।

केसर ने दौड़कर ठकुराणी को उठाया । जीतकुंवर भी उसके पास आ गई ।

ठकुराणी ने बड़ी कठिनता से अपनी आँखें खोलीं । केसर को देखकर उसके आँखों में धृणा झलकी । वह दृढ़ स्वर में बोली, “तुम आ गई बड़ी राणी ! मेरी यात्रा समाप्त हो गई, पर इतना वचन दो कि मेरे शरीर पर तुम दोनों की छाया भी नहीं पड़ेगी । तुम दोनों ने मेरे ठिकाने का पानी लजाया है, तुम दोनों ने मेरी आन-शान को बट्टा लगाया है, मुझे कई बार अपमानित किया है । तुम दोनों मुझ साधूपुर की ठकुराणी को मत छूना । तुम्हारे स्पर्श मात्र से मुझे दुःख होगा, दुःख ! मैं तुम दोनों पर धूकती हूँ । धू.....”

केसर ने चिल्लाकर कहा, “डाक्टर को बुलाओ !”

“डाक्टर की अब कोई आवश्यकता नहीं है । मुझे प्रसन्नता है कि मैंने चन्द्र-पाल को मार दिया । मैं जिस शान की मृत्यु चाहती थी, वह मुझे मिल गई । काश, मुझे मारने वाला कोई दुश्मन होता । राम.....राम.....!”

ठकुराणी की साँस टूट गई ।

केसर ने निश्चल बैठी जीतकुंवर को हिलाकर कहा, “मैं सब कुछ हार चुकी हूँ । शिव ने भी मुझे धोखा दे दिया है, अच्छा हुआ यह खून मेरे हाथ से हो गया !”

जीतकुंवर ने कहा, “नहीं-नहीं !”

“छोटी राणी, तुम अब इस ठिकाने को सम्भालो । मेरे जीवन की यात्रा समप्त हो गई । एकदम खतम ।”

जीतसुंदर रो गड़ी ।

बेगम बोली, “मेरे लिए जेन भीर जाँगी दूग जीने में अधिक मज्जी है
और धगर में छूट गई तो मुझे यह गायीब होगा कि मैंने तुम्हें क्या दिया ।”

जीतसुंदर उनके शरनों में सोई गई । थारों से द गमटा था, मानो मौन
गव जगह आकर बैठ पड़ी हो ।

